हिन्दी बाल साहित्य की विविध विधायें

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी (उ.प्र.) में

पी-एच.डी. की उपाधि के लिए प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

2002
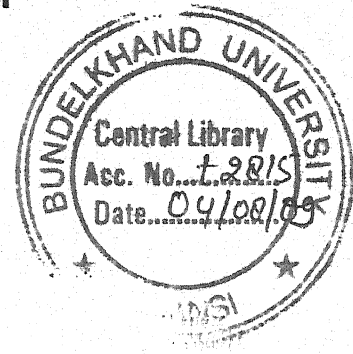
शोध निदेशक

डॉ. रामस्वरूप खरे

एम.ए., पी-एच.डी., 'साहित्य रत्न'

पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष

संगीता

अनुसंधित्सु

श्रीमती संगीता गुप्ता

द्वारा- श्रीकृष्णदास गुप्त

57, तुलसीनगर, उरई

शोध केन्द्र

दयानन्द वैदिक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उरई - जालौन (उ.प्र.)

शोध निदेशक का प्रमाण पत्र

मुझे यह प्रमाणित करते हुए अत्यन्त हर्ष हो रहा है कि श्रीमती संगीता गुप्ता आत्मजा श्रीकृष्णदास गुप्त उरई निवासिनी ने मेरे निर्देशन में हिन्दी विषयान्तर्गत 'हिन्दी बाल साहित्य की विविध विधायें' शीर्षक से शोध प्रबन्ध पूर्ण कर लिया है।

सम्भवत: बाल साहित्य विषय पर इस विश्वविद्यालय का यह सर्वप्रथम प्रयास होगा। शोधार्थिनी ने सम्पूर्ण मनोयोग से अथक परिश्रम किया है। स्थान-स्थान पर बाल साहित्यकारों से सम्पर्क साधकर वांछित सूचनाएँ एकत्रित की हैं। सम-सामयिक पत्र-पत्रिकाओं के अध्ययन, मनन एवं अनुशीलन द्वारा शोध सामग्री जुटाई है।

सम्बन्धित शोधार्थिनी ने विश्वविद्यालय की परिनियमावली के अनुसार 200 दिन की उपस्थिति दी है।

मैं इस शोधकार्य से पूर्णरूपेण संतुष्ट हूँ। निस्संदेह यह एक मौलिक प्रयास है।

शोधार्थिनी के समुज्ज्वल भविष्य की कामना करता हुआ इस शोध प्रबन्ध को मूल्यांकन हेतु परीक्षक मण्डल के पास भेजे जाने की संस्तुति करता हूँ।

28.12.02

रा० स्व० खरे

डॉ. रामस्वरूप खरे

शोध निदेशक

प्राक्कथन

प्रारम्भ से ही मेरी रुचि बाल साहित्य की ओर रही है। दादी और नानी से सुनीं लोरियाँ, कहानियाँ और पहेलियाँ ज्यों की त्यों अब तक याद हैं। जहाँ मैं अपने छोटे भाई-बहनों के शैशव अथवा बचपन को देखती हूँ तो सहसा अपना शैशव और बचपन याद आ जाता है। कितना सुन्दर, मनोरम और भोलाभाला होता है प्रत्येक का शैशव; निश्छल और निश्चिन्त !

वास्तव में शैशव का सरल सहज स्वभाव और बचपन का नटखटपन भला किसे नहीं सुहाता ? बड़े होने पर शिशुओं और बालकों के बीच जाकर प्रत्येक प्रौढ़ एवं वृद्ध अपना स्वर्णिम अतीत खोजता है- कभी उनके साथ खेलकर, कभी उनके साथ हँस-हँसकर और कभी गा-गाकर। कैसे उतावले हो उठते हैं शिशु एवं बालक पहेलियों, चुटकुलों, शिशुगीत, बालगीत और कहानियाँ सुनने को। सम्प्रति बाल तरुणों और किशोरों को बाल कॉमिक्स, बाल उपन्यास और बाल नाटक भी कम प्रिय नहीं लगते।

अनेक बाल पत्र-पत्रिकाओं को देखने पर मुझे भान हुआ कि हिन्दी का बाल साहित्य अब अत्यन्त समृद्ध हो चुका है। इसमें शोध के अनेकानेक आयाम दृष्टिगोचर होते हैं। इस क्षेत्र में बहुत से ऐसे समर्थ बाल साहित्यकार हैं जिन पर स्वतंत्र रूप से पृथक-पृथक शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किये जा सकते हैं, जैसे- अमीर खुसरो, तुलसी, श्रीधर पाठक, महादेवी वर्मा, मैथिली शरण

गुप्त, सुभद्राकुमारी चौहान, सोहनलाल द्विवेदी इत्यादि।

स्वातंत्र्योत्तर काल में भी इसी प्रकार अनेक बाल साहित्यकार ऐसे हैं जिनकी एक-एक विधा को लेकर उन पर भी शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किये जा सकते हैं, जैसे-द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी, शंकर सुल्तानपुरी, हरिकृष्ण देवसरे, डॉ. रामकृष्ण तिवारी'राष्ट्रबंधु', डॉ. त्रिलोकी नाथ ब्रजबाल, युगकवि डॉ. रामस्वरूप खरे, विनोद चन्द्र पाण्डेय, डॉ. रोहिताश्व अस्थाना, सूर्यकुमार पाण्डेय आदि।

सन् 1997 ई. में मैंने एम.ए. उत्तरार्द्ध की परीक्षा में भी बाल साहित्य में विशेष रुचि होने के कारण 'युगकवि डॉ. रामस्वरूप खरे का बाल साहित्य' विषय पर अपना लघु शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया था जिसमें मुझे 100 अंकों में से 90 अंक प्राप्त हुए था, प्रथम श्रेणी तो मिली ही थी।

अतएव मैंने तभी निश्चय कर लिया था कि जब भी मैं पी-एच.डी. करूंगी तो बाल साहित्य विषय पर ही अपना शोध प्रस्तुत करूंगी।

29.12.2000 की विश्वविद्यालयीन शोध समिति की बैठक में मेरा शोध शीर्षक'हिन्दी बाल साहित्य की विविध विधायें' स्वीकार कर लिया गया। मेरी प्रसन्नता का पारावार न रहा। इस सबका सम्पूर्ण श्रेय मेरे पितृतुल्य पूज्य गुरुवर युगकवि डॉ. रामस्वरूप खरे को ही जाता है जिन्होंने अपनी असीम अनुकम्पा के द्वारा मुझ जैसी एक साधारण सी गृहिणी से ऐसा अनूठा कार्य सम्पन्न करा लिया। उनके प्रति मैं हार्दिक आभार व्यक्त करने के अतिरिक्त और कर ही क्या सकती हूँ। ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ कि वे मेरे भावी जीवन के पंथ को भी प्रशस्त करते रहें जिससे मैं अपने

पारिवारिक लीवन में भी सफलता प्राप्त कर सकूं।

सुविधा की दृष्टि से मैंने अपने शोध प्रबन्ध को निम्नलिखित विवरण के अनुसार वर्गीकृत करके कार्य पूरा किया है जिससे विषय का प्रतिपादन भली प्रकार सम्भव और सम्यकरूपेण हो सके :-

प्रथम अध्याय में ***भूमिका*** शीर्षक के अन्तर्गत बाल साहित्य की भूमिका, आकलन एवं आवश्यकता को प्रतिपादित करने का प्रयास किया है। इसमें समाज निर्माण में बाल साहित्य की भूमिका कितनी महत्वपूर्ण है इस तथ्य को भी रेखांकित करने का प्रयास किया है।

द्वितीय अध्याय ***'हिन्दी बाल साहित्य का क्रमिक विकास'*** है। इस अध्याय में मैंने हिन्दी साहित्य के चारों कालखण्डों वीरगाथाकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल तथा आधुनिककाल में रचित बाल साहित्य का संक्षिप्त परिचय देने का प्रयास किया है।

तृतीय अध्याय में ***'बाल साहित्य को प्रकाशित करने वाली पत्रिकाएँ'*** शीर्षक के अन्तर्गत उन पत्रिकाओं का उल्लेख किया गया है जिन्होंने बाल साहित्य के संवर्धन तथा प्रचार-प्रसार में उल्लेखनीय योगदान दिया है।

चतुर्थ अध्याय का शीर्षक है ***'अन्य भाषाओं में बाल साहित्य का वर्गीकरण'***। इस शीर्षक के तहत मैंने मुख्यत: भारत में बोली जाने वाली प्रमुख भाषाओं में बाल साहित्य की स्थिति का परिचयात्मक विवरण दिया है, ताकि हिन्दी बाल साहित्य की तुलनात्मक स्थिति का जायजा लिया जा सके।

पंचम अध्याय है ***'बाल साहित्य की विभिन्न विधाएँ और विधाकार '***। इस अध्याय में बाल साहित्य की विधाओं यथा- कहानी, कविता, नाटक, उपन्यास, पहेलियाँ आदि का उल्लेख करते हुए उनमें रचे जा रहे साहित्य और साहित्यकारों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करते हुए मैंने भरसक प्रयास किया है कि विविध विधाओं की स्थिति का सम्यक विश्लेषण किया जाए। चूँकि आगामी अध्यायों में अलग-अलग विधाओं के रचनाकारों का पृथक से उल्लेख है इसलिए इस अध्याय में उनका केवल उल्लेख भर किया गया है।

षष्ठ अध्याय में ***'प्रमुख शिशु गीतकार'*** शीर्षक के अन्तर्गत शिशुगीतों की रचना करने वाले प्रमुख हिन्दी कवियों का उनकी प्रमुख रचनाओं के साथ विवरण प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है।

सप्तम अध्याय है ***'प्रमुख बालगीतकार एवं पहेलीकार'***। इस अध्याय में बालगीतकारों एवं पहेलीकारों का परिचय दिया गया है। गीतमय पहेलियाँ बाल साहित्य की सबसे रोचक और सशक्त विधा है। इस तथ्य की पुष्टि करने के लिए अनेक उदाहरण भी इस अध्याय में विद्यमान हैं।

अष्टम अध्याय का शीर्षक है **'प्रमुख बाल कहानीकार'**। गीत के बाद सबसे ज्यादा बाल साहित्य कहानी के रूप में ही रचा गया है। इन कहानियों के माध्यम से रचनाकारों ने न केवल बच्चों का मनोरंजन

किया है बल्कि उन्हें संस्कारित और सुशिक्षित बनाने का भी प्रयत्न किया है। हिन्दी का बाल साहित्य जितना शिक्षाप्रद और प्रेरणादायी है वैसा अन्य भाषाओं में कम ही दृष्टव्य है।

नवम् अध्याय *'प्रमुख बाल नाटककार'* है। इसके अन्तर्गत बच्चों के लिए नाटक लिखने वाले प्रमुख रचनाकारों का उल्लेख है। हिन्दी में यद्यपि बाल नाटक बहुत अधिक संख्या में नहीं लिखे गए हैं किन्तु जितने भी नाटक उपलब्ध हैं उनमें से अधिकांश बहुत ही सशक्त, रोचक और उद्देश्यपूर्ण हैं।

इसी प्रकार **दशम् अध्याय** में ***'प्रमुख बाल उपन्यासकार'*** शीर्षक के अन्तर्गत बाल उपन्यासकारों का विवरण है। हिन्दी बाल साहित्य का यह क्षेत्र अपेक्षाकृत कमजोर है। बच्चों के लिए ज्यादातर उपन्यास ऐतिहासिक और जासूसी पृष्ठभूमि पर आधारित हैं। पौराणिक आख्यानों को आधार बनाकर भी कई उपन्यास लिखे गए हैं।

ग्यारहवें अध्याय में ***उपसंहार*** शीर्षक के अन्तर्गत मैंने सम्पूर्ण शोध का निष्कर्ष निकालकर हिन्दी बाल साहित्य की वर्तमान स्थिति का विश्लेषण किया है साथ ही इसे समृद्ध बनाने के लिए क्या-क्या किया जा सकता है, इन उपायों पर भी चर्चा की है।

अन्त में **परिशिष्ट** में सन्दर्भ ग्रंथों व पत्र-पत्रिकाओं की सूची दी गई है।

अपने इस महात्वाकांक्षी शोध प्रबन्ध को मैं कभी भी पूर्णता तक न पहुँचा पाती यदि गुरुजनों और परिजनों के आशीर्वाद और स्नेह का सम्बल पग-पग पर मेरे साथ न होता। श्रद्धेय श्वसुर श्री प्रेम किशोरजी गुप्त और महिमामयी

सास परमादरणीय श्रीमती कमलादेवीजी ने सदैव मेरा उत्साहवर्द्धन किया। उनके आशीषों की छाया निरन्तर मेरे साथ रही। अपने प्राणाधार श्रीरूपकिशोरजी के बारे में क्या कहूँ, उनके बिना तो मेरी किसी भी कृति की पूर्णता संभव ही नहीं है। अतिआत्मीय देवर श्री आलोक मुझे शोधकार्य जल्दी से जल्दी पूरा करने के लिए उत्साहित करते रहे। अपने पूज्य पिता श्री कृष्णदास गुप्ता, श्रद्धेया मातेश्वरी श्रीमती मिथिलेश, अग्रजा साधना दीदी, जीजाजी श्री रामकृपाल गुप्त, अग्रज श्यामकिशोर, ब्रजकिशोर एवं अनुज हरिकिशोर के प्रति क्या कहूँ ? इन आत्मीयजनों का शुभाशीष व छोटों का अपरिमित स्नेह पग-पग पर मेरा मार्ग प्रशस्त करता रहा।

संगीता

संगीता गुप्ता

अनुक्रमणिका

समर्पण

हिन्दी के वयोवृद्ध बाल साहित्यकारों की

शुभाशीष की कामना करती हुई यह शोध कृति

उदीयमान हिन्दी बाल साहित्यकारों के

कर-कमलों में सप्रेम एवं सश्रद्ध

समर्पण करती हूँ, जिससे-

वे राष्ट्र के भावी कर्णधारों में

स्वस्थ, सच्चरित्र एवं कर्तव्यनिष्ठ बनाने की

सशक्त

प्रेरणा देने में पूर्णरूपेण सक्षम हो सकें !

साथ ही साथ उन्हें

एक अभिनव दिशा भी प्रदान हो सके

जिससे वे सुरुचिपूर्ण बाल साहित्य की संरचना में

सतत संलग्न रहकर

राष्ट्र के सारस्वत वैभव का भण्डार पूर्ण कर सकें।

- संगीता

प्रथम अध्याय

भूमिका

- बाल साहित्य की भूमिका
- आकलन
- आवश्यकता

प्रथम अध्याय

भूमिका

बाल साहित्य की भूमिका :- किसी भी देश या समाज के भविष्य का अनुमान उसके वर्तमान बचपन को देखकर लगाया जा सकता है। बचपन के निर्माण में जिन तत्वों की प्रमुख भूमिका रहती है वे हैं- पारिवारिक वातावरण, विद्यालय और बच्चों को पढ़ने के लिए मिलने वाला साहित्य। शब्दकोश के अनुसार साहित्य का अर्थ होता है हित करना। 'स हितेन हिताय:' अर्थात जिस लिखित कृति के अध्ययन, चिन्तन और मनन से मानवमात्र की भलाई हो वही सच्चे अर्थों में साहित्य की कोटि में आयेगी। जहाँ तक बाल साहित्य का प्रश्न है तो 'सामान्यत: 4 से 14 वर्ष तक की आयु वाले बालक-बालिकाओं के लिए लिखा जाने वाला साहित्य बाल साहित्य माना जाता है।'[1]

'जिस भाषा में बाल साहित्य का सृजन नहीं होता उसकी स्थिति उस स्त्री के समान है जिसके संतान नहीं होती। प्रत्येक देश का भविष्य उसके बच्चों पर ही निर्भर होता है। वही उसके भावी निर्माता होते हैं। अतएव जो देश अपने इन भावी निर्माताओं के प्रति उदासीन रहता है उसका भविष्य

1. बाल साहित्य की रूपरेखा : द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी , पृ. 11

अंधकारपूर्ण समझना चाहिये।'[1] बाल साहित्य को लिखने वाले बड़े लोग ही होते हैं और उसे बाजार से खरीदकर बच्चों के हाथों तक पहुँचाने वाले भी बड़े ही होते हैं। बच्चे स्वयं न तो अपने लिए साहित्य का सृजन करते हैं और न उन्हें अपने लिए अपनी मनपसन्द पुस्तकें खरीदकर लाने का स्वतंत्र अधिकार होता है। ऐसे में अभिभावकगण भिन्न-भिन्न उपायों से बच्चों के कोमल हृदयों पर अपनी रुचि और पसन्द लादने का प्रयत्न करते हैं। यह बहुत बड़ा अपराध है। जार्ज बर्नार्ड शॉ का तो कहना था कि - 'जो व्यक्ति बच्चों के स्वाभाविक चरित्र को मोड़ देने का प्रयत्न करता है वह संसार का सबसे बड़ा गर्भ गिरा देने वाला होता है।'

छोटे बच्चों का संसार अपने आकार-प्रकार, रंग-रूप में बड़ों के संसार से सर्वथा भिन्न होता है। बड़ों के संसार में लोक-शिष्टाचार,सभ्यता, संस्कृति, समाज, राष्ट्र, जाति, आदर्श, नियम-विधान आदि पग-पग पर विद्यमान रहते हैं, जिनसे अलग करके हम व्यक्ति की कल्पना नहीं कर सकते। बच्चों के संसार में इन सबका अभाव रहता है। बच्चे निजी तौर पर न तो शिष्टता-सभ्यता का अर्थ समझते हैं और न ही नियम-विधानों की कोई चिन्ता उन्हें सताती है। उन्हें अपने खेल-खिलौनों, तस्वीरों की पुस्तकों इत्यादि से जितना मोह होता है उतना किसी अन्य वस्तु या व्यक्ति से नहीं। अपने खेल के साथियों को वह पारिवारिक सदस्यों से भी ज्यादा प्यार करते हैं। उनके संसार में व्यक्ति का सम्बन्ध केवल मनुष्यता के नाते होता है, देश,जाति, धर्म या वर्ण के आधार

1. बालगीत साहित्य : निरंकार देव सेवक (प्रस्तावना भाग से)

पर होने वाले सम्बन्धों की वहाँ कोई मान्यता नहीं होती।

'संसार के सारे पदार्थ और कार्य-व्यापार बच्चों को जैसे दिखाई देते हैं वैसे बड़ों को नहीं। पहाड़, नदी या बादल को देखकर जो कौतूहल, जिज्ञासा, हर्ष या भय के भाव बच्चों के मन में उठते हैं वैसे बड़ों के मन में नहीं उठते। बच्चों के लिए बड़े किसी परदेशी से कम अपरिचित नहीं होते। जैसे हम भारतीय किसी रूसी, जर्मन या अंग्रेज के बारे में एक अजनबीपन अनुभव करते हैं, वैसा ही अजनबीपन बच्चे हम बड़ों के बारे में अनुभव करते हैं।'[1]

आधुनिक काल के प्राय: सभी मनोवैज्ञानिकों ने किसी व्यक्ति के स्वभाव का अध्ययन करने में दो बातों का ज्ञान आवश्यक माना है - एक तो उस व्यक्ति के वंशानुक्रम का ज्ञान, दूसरे उस वातावरण या उन परिस्थितियों का ज्ञान जिनमें उसके स्वभाव को विकसित होने का अवसर मिलता है। सभ्य-सुसंस्कृत माता-पिता के बच्चे भी प्राय: सभ्य और सुसंस्कृत होते हैं। पर यह भी देखा जाता है कि ऐसे बच्चे यदि बुरी संगत में पड़ जाते हैं तो उनमें अपने माता-पिता के गुण नहीं आते। लॉक का कथन है कि- 'मनुष्य का मन एक स्वस्थ काले तख्ते के समान है जिस पर बिना लिखे कोई संस्कार अंकित नहीं होता। इसी प्रकार हमारे स्वस्थ मन पर वातावरण और जीवन अनुभवों के कारण अनेक संस्कार पड़ते हैं।'

बालक आयु में ज्यों-ज्यों बढ़ता जाता है उसके स्वभाव में परिस्थितियों और

1. बालगीत साहित्य : निरंकार देव सेवक (प्रस्तावना भाग से)

वातावरण के प्रभाव का स्वरूप और भी निखरता जाता है। कभी उसमें हमें विद्रोह और संघर्ष के दर्शन होते हैं और कभी सामंजस्य के। इन्हीं दोनों के बीच उसके राग-द्वेष, ईर्ष्या, सुख-दु:ख आदि के भाव सुस्थिर होते जाते हैं। बाल साहित्य के रचयिता अपनी सार्थकता तभी सिद्ध कर सकेंगे जब वे बाल स्वभाव का भलीभाँति अध्ययन करें। बाल स्वभाव का अध्ययन करने के लिए आयु की दृष्टि से उनके मनोविकास की अवस्थाओं का ज्ञान प्राप्त कर लेना भी आवश्यक है।

प्रख्यात मनोवैज्ञानिक अर्नेस्ट जोन्स ने बालक के मनोविकास की अवस्थाओं का क्रम प्रेम अथवा काम प्रवृत्ति के आधार पर निश्चित किया है। उनके अनुसार काम प्रवृत्ति की अभिव्यक्ति की चार अवस्थाएँ होती हैं। पहली अवस्था में बालक स्वयं अपने ऊपर ही मोहित होता है, इसे नारसिसिज्म कहते हैं। इस अवस्था में बालक अपने आप में ही मगन रहता है। दूसरी अवस्था में उसका प्रेम अपने मात-पिता की ओर उन्मुख होता है। वह अपने प्रेम पात्र पर पूरा-पूरा अधिकार कर लेना चाहता है। अगर कोई दूसरा व्यक्ति उसके बीच में आता है तो उसके हृदय में ईर्ष्या के भाव उत्पन्न होने लगते हैं। इस अवस्था में बालक प्राय: अपने समवयस्क भाई-बहिन से भी ईर्ष्या करता है। डम्बिल के अनुसार- 'परिवार का बालक नये बालक के जन्म से प्रसन्न नहीं होता। उसे अनेक प्रकार की मानसिक वेदनायें होने लगती हैं।'[1] तीसरी अवस्था में बालक अपनी ही अवस्था वाले बालकों से प्रेम करता है और अपने साथ खेलने वाले

1. मनोविज्ञान के मूल सिद्धान्त : डम्बिल , पृ. 127

साथी के लिए कष्ट उठाने को भी तत्पर रहता है। जिन बालकों को इस अवस्था में साथी नहीं मिल पाते वे काल्पनिक साथी बनाकर उसके साथ रहने का आनन्द लिया करते हैं। इसी अवस्था में बालक के चरित्र का विकास हुआ करता है और जीवनादर्श के प्रति आकर्षण का आरम्भ भी हो जाता है। चौथी अवस्था में वह बालक नहीं रह जाता क्योंकि उसका आकर्षण प्रधान रूप से 'विजातीय' बालकों के प्रति होने लगता है। लड़का लड़कियों और लड़की लड़कों के प्रति आकर्षित होने लगती है।

जी.एच. डिक्स ने बालक की आयु को मनोविकास के क्रम के अनुसार पाँच भागों में बाँटा है[1] :-

1. शिशु काल (यह तीन-चार वर्ष की आयु तक रहता है)
2. बचपन (आठ-नौ वर्ष की आयु तक)
3. पूर्व किशोर अवस्था (11 या 12 वर्ष की आयु तक)
4. उत्तर किशोर अवस्था (14 वर्ष की आयु तक)
5. कुमार अवस्था (20 वर्ष की आयु तक)

डिक्स ने यह भी स्वीकार किया है कि इन अवस्थाओं के बीच कोई अमिट रेखायें नहीं हैं। बालक विशेष परिस्थितियों में इन रेखाओं का अतिक्रमण करते भी पाये जाते हैं परन्तु एक अवस्था से दूसरी अवस्था में पहुँचने पर एक संक्रान्ति काल तो प्रत्येक बालक की स्थिति में रहता ही है। डिक्स ने पाँचवी अवस्था कुमार अवस्था को 20 वर्ष तक माना है किन्तु आजकल के बच्चे तो इस आयु

1. चाइल्ड स्टडी : जी. एच. डिक्स, पृ. 43

तक पहुँचते-पहुँचते दुनिया को अच्छी तरह समझने लगते हैं, इसीलिए यह अवस्था अब 16 वर्ष तक ही मानी जाती है।

बालक अपनी शैशवावस्था में कुछ जानने की जिज्ञासा रखता है तथा अपने भावों को व्यक्त करने के लिए भी आतुर रहता है। जिज्ञासा और अभिव्यक्ति के ताने-बाने में ही उसका बौद्धिक विकास होता है। शैशवकाल के उपरान्त जिज्ञासा रुचि का और अभिव्यक्ति भाषा का रूप ले लेती है। इस अवस्था में बच्चों की सीखने और ग्रहण करने की शक्ति बहुत ही तीव्र होती है। इसी अवस्था में वह अपनी ज्ञानेन्द्रियों का उपयोग करना सीखता है। वह अपने स्वयं के बारे में जानने के अतिरिक्त सारे संसार के बारे में भी जानना चाहता है। यही वह समय है जब बच्चों की जिज्ञासाओं की पूर्ति के लिए उन्हें ऐसा साहित्य उपलब्ध कराया जाये जो उनकी जिज्ञासाओं की पूर्ति करने के साथ-साथ उनका समुचित मार्गदर्शन भी करे। 'बच्चों की शैशवावस्था में ही उनकी साहित्यिक पृष्ठभूमि तैयार कर देनी चाहिये।'[1]

बाल साहित्य वह साहित्य है जो बच्चों के मानसिक स्तर को ध्यान में रखकर इस तरह से सृजित किया जाए कि बच्चे न केवल उसे पढ़ने में रुचि लें बल्कि उससे कुछ ग्रहण भी करें। इसके लिए 'यह परमावश्यक है कि बाल साहित्य बच्चों के धरातल तक उतरकर, उनके मनोभावों तथा रुचियों को ध्यान में रखकर, मनोरंजक शैली में ज्ञानवर्द्धक रूप से लिखा गया हो।'[2] यही

6. बाल साहित्य : उपयोगिता बोध : डॉ. सत्येन्द्र वर्मा , पृ. 7
7. बाल साहित्य की संक्षिप्त रूपरेखा : शकुन्तला वर्मा, पृ. 33

तत्व बाल साहित्य को प्रौढ़ साहित्य से अलग करते हैं।

हमारे देश में प्राचीनकाल से ही बाल साहित्य लिखा जाता रहा है। पंचतन्त्र, कथा-सरित्सागर, हितोपदेश, नीतिकथाओं तथा लोककथाओं का अथाह भण्डार इस तथ्य का साक्षी है। पंचतन्त्र तो ऐसी अनूठी और अनमोल कृति है जिसकी मिसाल पूरे विश्व के बाल साहित्य में नहीं मिलती। इसीलिए देश-विदेश की लगभग सभी भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका है। आरम्भ में घर की बुजुर्ग महिलाएँ यथा दादी,नानी आदि बच्चों को कहानियाँ सुनाती थीं। प्रकाशित पुस्तकों के बजाय प्राय: श्रुत माध्यम से ही बाल साहित्य बच्चों तक पहुँचता था। पिछली शताब्दी के अन्तिम वर्षों में इस स्थिति में व्यापक बदलाव आया और बाल साहित्य का अलग अस्तित्व बनने लगा। साहित्यकारों ने बाल साहित्य के महत्व को समझा और उसके सृजन पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा।

अतिप्राचीनकाल में जब न तो लिखने का चलन था और न ही छपाई के उपकरणों से मानव का परिचय हुआ था तब भी कविताएँ और गीत लिखे जाते था। 'उस समय माताएँ अपने रुदनरत नन्हें-मुन्नों को चुप कराने के लिए जोई-सोई कुछ तो भी सुनाकर उनका मन बहलाया करती थीं।' माँ की गुनगुन ही बच्चे के लिए गीतभाषा हुआ करती थी। तब भाषा का समुचित विकास भले ही न हुआ था पर माँ के भीतर का कवि अपनी प्यारी संतानों के लिए लोरी और प्रभाती की रचना करने में सक्षम था। प्रारम्भ में ये गीत तथा उनके विचार अलिखित होने के कारण मौखिक ही एक से दूसरे के पास जाते थे और प्रसारित

होते था। इनके संग्रह या सम्प्रेषण का कोई साधन नहीं था।'[1]

भारत में तो जब भाषा का समुचित विकास हुआ और लिपि-ज्ञान हो गया तब ज्ञान-विज्ञान, मनोरंजन और आध्यात्मिक विचारों की अभिव्यक्ति भी कविता के माध्यम से हुई। हमारे वेद, चिकित्सा विज्ञान जैसे गंभीर विषय भी ऋषि-मुनियों ने काव्य के माध्यम से प्रतिपादित किये। लोकगीतों की व्यापकता तो अकल्पनीय है। हजारों वर्षों तक ये बड़े व्यापक और सहज रूप में एक-दूसरे के पास, एक स्थान से दूसरे स्थान तक प्रसारित और गतिशील होते रहे। अपने गुट, समाज, मुहल्ले के वयोवृद्धों की बातों को लोग ध्यान से सुनते और मानते थे।

लिखने-पढ़ने के ज्ञान के अभाव में ये सब प्रसारण मौखिक ही होते थे। 'उस समय बच्चों को बहलाने, समझाने और नया कुछ बताने के लिए बाल साहित्य का सृजन हुआ जो बड़ा सहज और रोचक था, किन्तु उसे बाल साहित्य की संज्ञा देकर सुरक्षित रखने के लिए कोई प्रयास नहीं हुए और न ही उसको विशेष महत्व दिया गया। अपने बच्चों के लिए के लिए किसी ने जो कुछ रचा, दूसरे ने उसे अपने बच्चे के लिए भी गाया। एक कहानी की रचना हुई तो वह एक स्थान से दूसरे स्थान तक प्रसारित होती रही। भाषा का विकास हो जाने पर भी उसे लिखा नहीं गया। इस बाल साहित्य की पांडुलिपि बनाने की चिन्ता किसी ने नहीं की। माताओं के कण्ठ में उनके अन्तरपटल पर ही ये रचनाएँ सुरक्षित रहीं, यद्यपि स्थान-स्थान पर वातावरण और बोलियों के अनुसार

8. हिन्दी बाल साहित्य की प्रवृत्ति : शकुन्तला सिरोठिया, पृ. 54

उनमें परिवर्तन होते रहे ।'[1] यह साहित्य किसने, कब, कहाँ लिखा यह किसी को नहीं पता, अलबत्ता इतना तो माना ही जा सकता है कि लोरी की प्रथम रचयिता कोई माँ ही रही होगी ।

समय के साथ-साथ यह आवश्यकता अनुभव की गई कि बच्चों को सूचना, शिक्षा और ज्ञान प्रदान करने वाली कहानियों की रचना की जाये । ऐसे माध्यम की जरूरत हुई जो बड़े होते बच्चों की जिज्ञासा को शान्त कर सकें और उनके उत्सुक मन को तृप्ति प्रदान कर सकें । तब कहानी का आविष्कार हुआ और उसका खूब प्रसार भी हुआ । कहानी द्वारा प्रकृति-पौधों,पशु-पक्षी, चाँद-तारों, किरण-बादल, वर्षा आदि का ज्ञान बालकों को दिया गया ।

बाल साहित्य का प्रथम रूप लोरी और प्रभाती के रूप में भिन्न-भिन्न स्थानों और बोलियों में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है । गीतों के बाद हर काल में बच्चों को सबसे ज्यादा कहानियों ने आकर्षित किया है । यह बाल साहित्य का सबसे लोकप्रिय और शक्तिशाली अंग रहा है । लिखित रूप में अप्राप्य होने पर भी इस विधा के साहित्य का अभाव कभी नहीं रहा । कहानी बहुउद्देशीय तथा बहुगुणीय होने से बालमन की प्रकृति और प्रवृत्तियों को मनोरंजक ढंग से तृप्ति देने में समर्थ होने के कारण बच्चों को सबसे अधिक आकर्षित करने की शक्ति रखती है । पंचतन्त्र के प्रणेता आचार्य विष्णु शर्मा ने कहानियों द्वारा ही भटके हुए राजकुमारों को सुमार्ग पर ला दिया था । उनकी वे मौखिक कहानियाँ आज विश्व की लगभग सभी भाषाओं में अनूदित होकर

8. हिन्दी बाल साहित्य की प्रवृत्ति : शकुन्तला सिरोठिया , पृ. 55

पुस्तकाकार रूप में उपलब्ध हैं।

भाषा के विकास के साथ-साथ अभिव्यक्ति में भी निखार आता गया। बच्चों की आवश्यकता तथा उनकी मनोवैज्ञानिक मांगों की ओर भी अभिभावकों और शिक्षकों का ध्यान आकर्षित होने लगा और उसी के अनुरूप बाल साहित्य के सृजन और संवर्द्धन के प्रयास भी किये गए। जब लिखने और मुद्रण की सुविधाएँ उपलब्ध हुईं, तब साहित्य मौखिक के बजाय हस्तलिखित और मुद्रित होने लगा। पाण्डुलिपियाँ बनाकर अपनी रचनाओं की सुरक्षा की ओर साहित्यकारों का ध्यान तो गया किन्तु बाल साहित्य को पर्याप्त महत्व बहुत बाद में मिला। कुछ दशक पहले तक कई जाने-माने साहित्यकार बच्चों के लिए लिखना अपने मान-सम्मान की बात नहीं मानते थे। इसका कदाचित एक कारण यह भी रहा होगा कि बच्चों के लिए लिखना बड़ों के लिखने से ज्यादा कठिन कार्य है। यही कारण है कि अच्छे से अच्छे बाल साहित्य का भी न कोई इतिहास उपलब्ध है और न कोई अभिलेख या पुराअभिलेख ही।

समय और परिस्थितियों ने बाल साहित्य में परिवर्तन और परिवर्द्धन किये। मनुष्य की अभिरुचियाँ परिष्कृत हुई तो रचनाओं में भी निखार आने लगा। कहानी के विषयों के साथ शैलियों के रूप भी बदले। पौराणिक कथाओं, इतिहास, राजाओं की वीरता, महापुरुषों के उदात्त चरित्रों के साथ परियों और भूत-प्रेतों की काल्पनिक कहानियों का भी निर्माण होने लगा। चुटकुले,

पहेलियाँ आदि भी सृजित होने लगीं। नाटक की रचना बीसवीं शती के प्रारम्भ तक बच्चों के लिए नहीं हुई। हाँ, बड़ों के नाटकों में हास्य तथा वीरता के अभिनय को बच्चे, विशेष रूप से किशोर भी समझते थे और खूब रुचि भी लेते थे। प्राचीन संस्कृत बाल साहित्य को विद्वानों ने लोक बोलियों में रूपान्तिरत करके राजमहल से झोंपड़ी तक पहुँचा दिया। रूपान्तरण में देशकाल के अनुरूप परिवर्तन भी किये गये किन्तु कथा की मूल आत्मा को सुरक्षित रखा गया। लोकबोलियों में आने पर लोक कथा साहित्य के रूप में बालकों को समृद्ध साहित्य भी प्राप्त हुआ। संस्कृत और लोकबोलियों की भारतीय कथाओं ने विदेशी साहित्य को भी समृद्ध किया है। आधुनिक काल के पूर्व तक बच्चों ने इसी कथा साहित्य को सुना या आंशिक रूप से पढ़ा और स्वयं को आल्हादित किया।

'सन् 1608 में ईस्ट इंडिया कम्पनी का भारत आना इतिहास की एक बड़ी घटना थी। कम्पनी ने बाल शिक्षा संस्थाओं की स्थापना की और बाल पाठ्यपुस्तकों का भी निर्माण कराया। सन् 1858 में ईस्ट इंडिया कंपनी के समाप्त हो जाने के बाद भी अंग्रेजी हुकूमत ने कम्पनी के कार्यकाल में बनी योजनाओं को आगे ही बढ़ाया। इसी क्रम में बाल पाठ्यपुस्तक समितियों का गठन हुआ। इन समितियों की संस्तुति पर बच्चों की जो पुस्तकें तैयार हुईं, उनमें पहली बार व्यवस्थित रूप से बाल साहित्य भी रचा गया।'[1]

1. हिन्दी बाल साहित्य - क्रमिक विकास : डॉ. श्रीप्रसाद , पृ. 68

उन्नीसवी शताब्दी के अन्त तक रचे गए बाल साहित्य के प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं, परन्तु बीसवी शताब्दी के प्रारम्भिक दौर की पाठ्यपुस्तकें देखने से बाल साहित्य की प्रगतियात्रा का अनुमान लगाया जा सकता है। इन्हीं पाठ्यपुस्तकों ने स्वतन्त्र बाल साहित्य लेखन की प्रेरणा भी दी। इसके बाद का समय बाल साहित्य के उत्तरोत्तर विकसित और प्रतिष्ठित होने का समय है। आज बाल साहित्य भी उतनी ही गंभीरता से सृजित किया जा रहा है जितनी गंभीरता से बड़ों का साहित्य।

बाल साहित्य का आकलन

जिस प्रकार एक बालक ही समाज के स्वरूप एवं व्यक्तित्व का बीज रूप होता है, उसी प्रकार बाल साहित्य भी बालकों को संस्कार एवं दिशा प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वह बालकों की प्रारम्भिक अवस्था से ही उनके मन, विचार और कल्पना को परिमार्जित करते हुए समाज एवं राष्ट्र के भावी स्वरूप की पृष्ठभूमि तैयार करता है। हिन्दी का बाल साहित्य सदैव ही युग-सापेक्ष रहा है। उसका विकास भी अत्यन्त तीव्र गति से हुआ है। आज जितनी विधाओं में बड़ों का साहित्य लिखा जा रहा है, उतनी ही विधाओं में बाल साहित्य का भी सृजन हो रहा है। इसके बावजूद यह सच है कि अभी भी बाल साहित्यकारों को वह सम्मान प्राप्त नहीं है जिसके वे अधिकारी हैं। यही कारण है कि हिन्दी साहित्य की किसी भी विधा में बाल साहित्यकारों का नाम

केवल बाल साहित्यकार के रूप में नहीं लिया जाता। बाल साहित्यकारों को अपने बाल साहित्य लेखन के लिए उच्च प्रतिष्ठित अखिल भारतीय सम्मान या पुरस्कार भी न के बराबर ही मिले हैं। राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी अथवा रामनरेश त्रिपाठी को भी साहित्य के इतिहास में कवि के रूप में मान्यता केवल उनके बालसाहित्य के आधार पर ही नहीं मिली है, बल्कि जब वे अन्य विशिष्ट कृतियों के आधार पर कवि के रूप में प्रतिष्ठित हो गए तो लोगों ने उनके द्वारा रचित बाल कविताओं को भी प्रतिष्ठा प्रदान कर डाली। हमें इसके लिए अंग्रेजी साहित्य से प्रेरणा लेनी चाहिये जहाँ डेनियल डिफो को केवल 'रॉबिन्सन क्रूसो' के कारण ही अपार ख्याति मिली। डेनियल ने यदि कुछ और न भी लिखा होता तो भी अंग्रेजी साहित्य के इतिहास में उसका स्थान सुरक्षित था। रॉबिन्सन क्रूसो विशुद्ध बाल साहित्य है और उसके लेखक को अकेले इसी कृति के दम पर बड़ों के लिए साहित्य रचने वालों के बराबर बल्कि कहीं अधिक सम्मान मिला। इसी प्रकार अंग्रेज कवयित्री क्रिस्टीना रोज़टी, कवि वाल्टर डीला मेयर या डब्ल्यू.एच.डेविस को उनकी बाल कविताओं ने ही उन्हें आधुनिक अंग्रेजी साहित्य के कवियों में लब्धप्रतिष्ठित और अग्रगण्य स्थान प्रदान किया है। इन उदाहरणों से हिन्दी बाल साहित्यकारों की मन:स्थिति का अन्दाजा भलीभाँति लगाया जा सकता है।

यह स्थिति तब है जबकि हिन्दी जगत् में बाल साहित्य की विचारधारा अत्यन्त सबल और प्राचीन है। खड़ी बोली के पहले ब्रजभाषा, अवधी, मगधी,

मैथिली और राजस्थानी में भी प्रचुर मात्रा में बाल साहित्य उपलब्ध है। इसका एक विशेष कारण यह रहा कि गोस्वामी तुलसीदास और भक्त प्रवर सूरदास ने गम्भीर साहित्य के साथ बाल साहित्य की रचनाएँ भी खूब लिखीं। यह परिपाटी आगे पूरी तरह कायम नहीं रही।

खड़ी बोली के बाल साहित्य पर हिन्दी की प्राचीन भाषाओं का प्रभाव तो पड़ा ही, दूसरी भारतीय भाषाओं और अंग्रेजी का भी प्रभाव पड़ा। ग्रहण शक्ति के कारण सहज रूप से अनेक विषय और विविध भाषाओं के कारण हिन्दी में कई विधाओं का विकास हुआ। प्रारम्भ में चरित्र निर्माण की दृष्टि से महापुरुषों की जीवनियां लिखी गईं। लोककथाओं और लोरियों का प्रचलन भी बड़े पैमाने पर चलता रहा। धीरे-धीरे राजा और रानी की कहानियों का रूप शिथिल पड़ने लगा और विनोद, मनोरंजन, व्यंग्य तथा मुहावरों ने अपना स्थान बनाया। इन्हीं के समानान्तर आधुनिक युग के अनुसार ज्ञान-विज्ञान साहित्य की अनेक धाराएँ भी प्रवाहित होने लगीं। इन दिनों प्रतिवर्ष बाल साहित्य की लगभग चार-साढ़े हजार पुस्तकों का प्रकाशन हो रहा है। किन्तु अपनी कीमतों के कारण इनमें से ज्यादातर पुस्तकें सामान्य पाठक विशेषकर उन बच्चों की पहुँच से बहुत दूर रहती हैं जिनके नाम पर इन्हें लिखा जा रहा है। फलस्वरूप ये पुस्तकें केवल पुस्तकालयों की ही शोभा बढ़ा रहीं हैं।

इस स्थिति के बावजूद वर्तमान में हिन्दी बाल साहित्य के क्षेत्र में बड़े सुन्दर और प्रशंसनीय प्रयास हो रहे हैं। बाल कविताएँ, गीत, बाल कहानियाँ, बाल

एकाँकी, महापुरुषों की जीवनियाँ, वैज्ञानिक व अन्य उपलब्धियों आदि पर रोचक व प्रेरणास्पद साहित्य रचा जा रहा है। बाल पत्रिकाएँ भी बड़े सुरुचिपूर्ण ढंग से निकल रहीं हैं।

भारतेन्दु युग को यदि हम बाल साहित्य के शुभारम्भ का युग कहें, तो गलत न होगा। तभी से इसका वास्तविक रूप में क्रमिक विकास प्रारम्भ हुआ। किसी भी भाषा के विकास में उस काल की पत्र-पत्रिकाओं का योगदान महत्वपूर्ण होता है। भारतेन्दुजी ने इस ओर ध्यान दिया। भारतेन्दु युग में जिस बाल साहित्य की नींव रखी गई उस पर आज एक सुदृढ़ विशाल भवन खड़ा है, जिसका हर द्वार, खिड़की, झरोखा- सभी खुले हैं। प्रकाश के साथ उसमें स्वस्थ वायु के आवागमन में कोई बाधा नहीं है। आवश्यकता है तो बस उस भवन को और अधिक सुदृढ़ करने,उसे सुरक्षित और साफ- सुथरा बनाये रखने तथा नयी मंजिलें बनाने की, ताकि उस भवन का आकार और बड़ा व भव्य हो सके।

सातवें दशक तक अधिकांश प्रसिद्ध साहित्यकारों ने बच्चों के लिए भी उनकी पसन्द को ध्यान में रखकर विभिन्न विधाओं में रचनाएँ लिखना शुरू कर दिया था। इस दौर में दो विधायें कहानी और कविता ही विशेष रूप से उभरकर सामने आईं। उनका विकास चरम शिखर तक हुआ। बाल साहित्यकारों की रचनाओं में मूल रूप से यह उद्देश्य निहित था कि बच्चे ज्ञान और मनोरंजन के साथ अपनी संस्कृति से भी जुड़े रहें, अपनी परम्पराओं और मान्यताओं को न भुलाकर समुचित रूप से अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकें।

हिन्दी में इन दिनों बाल साहित्य लिखा तो बहुत जा रहा है, लेकिन बिना किसी मानदण्ड के अनेक रचनाएँ ऐसी लिखी जा रही हैं, जिन्हें हम बाल साहित्य की श्रेणी में नहीं रख सकते। केवल विषय, भाषा,शैली की दृष्टि से ही नहीं यदि, बाल मनोविज्ञान, यथार्थ से जुड़े विषयों और ज्ञानवर्द्धन की तुला पर इनका मूल्यांकन करें तो पायेंगे कि अधिकांश रचनाएँ ऐसी हैं जिन्हें बच्चों को पढ़ने के लिए देना उचित न होगा। आज बाल साहित्य के नाम पर अनेक प्रयोग हो रहे हैं। इनमें यह ध्यान नहीं रखा जा रहा है कि बच्चे उन्हें ग्रहण भी कर पा रहे हैं या नहीं।

वर्तमान में समाचार पत्र बाल साहित्य के प्रसार में सक्रिय योगदान दे रहे हैं, किन्तु उनमें साहित्य की गुणवत्ता से अधिक इस बात का ध्यान रखा जा रहा है कि किस प्रकार की सामग्री समाचार पत्र की बिक्री बढ़ाने में मददगार होगी। इस मानसिकता के चलते बच्चों के लिए लिखा जाने वाला उच्चकोटि का प्रेरणास्पद और ज्ञानवर्द्धक साहित्य इन पत्र-पत्रिकाओं में समुचित स्थान प्राप्त नहीं कर पाता।

इन विसंगतियों के विद्यमान रहते हुए भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि इन दिनों बाल साहित्य पर बहुत ध्यान दिया जा रहा है। बच्चों के लिए लिखी जाने वाली रोचक, प्रेरणास्पद और स्तरीय पुस्तकों का न केवल बच्चों द्वारा बल्कि उनके अभिभावकों द्वारा भी व्यापक स्वागत और सम्मान किया जाता है। यदि वर्तमान काल को हम बाल साहित्य का स्वर्णयुग कहें तो भी कोई अतिशयोक्ति न होगी।

बाल साहित्य की आवश्यकता

बाल साहित्य की चर्चा करते समय हमें उन कारकों की भी चर्चा करनी होगी जो बाल साहित्य की समृद्धि में सबसे बड़ा रोड़ा बने हुए हैं। टेलीविजन, कम्प्यूटर और कॉमिक्स वे तीन सबसे बड़े तत्व हैं जो बाल साहित्य और बालकों के बीच दीवार बनते जा रहे हैं। बच्चे अपने लिए लिखे गए साहित्य में दिलचस्पी लें इसके लिए यह अपरिहार्य है कि बाल साहित्य सस्ता, सुलभ और रोचक तो हो ही, प्रकाशन की दृष्टि से भी इतनी उत्कृष्ट कोटि का और चित्ताकर्षक हो कि नज़र पड़ते ही पुस्तक हाथ में लेने के लिए मन ललचा उठे। इसके लिए समाचार पत्रों और बाल पत्रिकाओं को गुरुतर भूमिका का निर्वहन करना पड़ेगा क्योंकि एक तो बाल पाठकों तक उनकी पहुँच ही सबसे ज्यादा होती है, दूसरे वे बिना किसी अतिरिक्त खर्च के ही अपने कलेवर को ज्यादा से ज्यादा चित्ताकर्षक बना सकते हैं। इसके लिए यह आवश्यक है कि मिशन के रूप में अधिक से अधिक प्रतियोगिताओं-प्रतिस्पर्धाओं द्वारा बाल साहित्य की प्राय: सभी विधाओं में पर्याप्त बाल साहित्य का प्रकाशन कराया जाय जो विज्ञान के इस युग में बच्चों के बढ़ते स्तर और उनकी आकांक्षाओं-जिज्ञासाओं के अनुरूप हो। घिसा-पिटा या एक ही लीक पर चलने वाला बाल साहित्य न तो आज के बच्चों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा और न ही बच्चे उसे पसन्द करेंगे। बाल कल्याण एवं बाल शिक्षण के कार्य में लगी सरकारी एवं स्वयंसेवी संस्थाओं को भी बाल साहित्य की अभिवृद्धि के लिए योजनाबद्ध प्रयासों का

क्रियान्वयन करना होगा।

यहाँ एक तथ्य और भी गंभीरता से विचारणीय है कि इन दिनों ऐसा बाल साहित्य प्रचुर मात्रा में प्रकाशित हो रहा है जो बच्चों को संस्कारित करने के बजाय उनकी प्रवृत्तियों को विकृत बना रहा है। हमें यह ध्यान रखना होगा कि बाल साहित्य के नाम पर प्रकाशित होने वाली ऐसी पुस्तकें न केवल आज के बचपन को खोखला कर रही हैं अपितु देश के भविष्य को भी नष्ट कर रही है। ऐसे साहित्य को हतोत्साहित करने के लिए शिक्षकों और अभिभावकों को तो सजग रहना ही होगा, उन लेखकों को भी देश के प्रति अपने दायित्व के बारे में तनिक सोचना होगा जो थोड़े से आर्थिक लाभ के लिए बच्चों के वर्तमान और देश के भविष्य के साथ इतना खतरनाक खिलवाड़ कर रहे हैं। प्रत्येक अभिभावक का यह कर्तव्य है कि वह यह जाने कि उसका बच्चा क्या पढ़ रहा है। उसे अच्छी पुस्तकें उपलब्ध कराये। यह ध्यान रखे कि बच्चा कहीं छिप-छिपकर ऐसी पुस्तकें तो नहीं पढ़ रहा है जिससे उसके मन-मष्तिष्क पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े। साहित्य के नाम पर बच्चों को बिगाड़ने के जो बड़े-बड़े अखाड़े खुल गए हैं उन्हें नेस्तनाबूद करने के दायित्व को स्वयंसेवी संस्थाएँ बखूबी निभा सकती हैं। बच्चों के साहित्य से सम्बन्धित ऐसी गोष्ठियों, काव्य समारोहों व वाद-विवाद प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया जाना चाहिये जिनमें बच्चों की सक्रिय भागीदारी हो। बाल साहित्य की प्रदर्शनियों का आयोजन कर बच्चों को अच्छी पुस्तकें खरीदने के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

यद्यपि हिन्दी में अच्छे बाल साहित्य की कमी नहीं है किन्तु इसका आशय यह कदापि नहीं है कि जो है वह पर्याप्त है। 'समाज में हो रहे विकास और वैज्ञानिक प्रगति के साथ बच्चों का सतत् समन्वय बनाये रखने और उन्हें पर्याप्त मात्रा में मानसिक खुराक देते रहने के लिए नित नये और स्तरीय बाल साहित्य के सृजन की आवश्यकता तो सदैव बनी ही रहेगी।'[1]

बाल साहित्य की समृद्धि के लिए जिन उपायों पर अमल किया जा सकता है उनमें से कुछ इस प्रकार हैं :-

- बाल काव्य, बाल कहानी, बाल नाटक आदि की छोटी-छोटी पुस्तकों के प्रकाशन से इस साहित्य को अभी स्वरूप नहीं मिल पाया है। ऐसी अजिल्द पुस्तकें नष्ट भी बड़ी जल्दी हो जाती हैं। इसलिए अपेक्षाकृत अधिक बड़े आकार की ऐसी पुस्तकें निकाली जायें जो टिकाऊ हों तथा जिनकी ओर विद्वानों का ध्यान आकृष्ट हो सके।
- आधुनिक प्रतिनिधि बाल काव्य रचनाकारों, बाल कहानीकारों तथा बाल नाटककारों के शृंखलाबद्ध रूप से बड़े-बड़े संकलन निकाले जायें तथा उनमें रचनाकारों की विशेषताओं, प्रवृत्तियों आदि का आलोचनात्मक विश्लेषण हो।
- बाल साहित्य का विधिवत् इतिहास तैयार किया जाये जिसमें उसकी प्रमुख प्रवृत्तियों, धाराओं तथा विशेषताओं का उल्लेख किया जाये तथा उस धारा

1. हिन्दी बाल साहित्य दशा एवं दिशा : विष्णुकान्त पाण्डेय , पृ. 9

के प्रमुख प्रतिनिधि बाल साहित्यकारों का सौदाहरण संक्षिप्त आलोचनात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत किया जाये।

- कहानी, कविता, नाटक आदि विविध विधाओं में उपलब्ध श्रेष्ठ बाल साहित्य के, बालकों के वयः क्रमानुसार पृथक-पृथक संकलन निकाले जायें।
- साहित्य के इतिहास लेखकों एवं विद्वानों का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया जाये कि साहित्य के इतिहास में वे बाल साहित्य एवं उसके रचयिताओं का भी समावेश करें। इस तथ्य को मान्यता मिलनी ही चाहिये कि जिस प्रकार बड़ों के पठन-पाठन के लिए लिखी जाने वाली सामग्री साहित्य है उसी प्रकार करोड़ों बालकों के लिए लिखी गई बाल साहित्य की सामग्री भी साहित्य है।
- विश्वविद्यालयों में शोधकार्य के अतिरिक्त स्नातकोत्तर कक्षाओं में बाल साहित्य के विशेष अध्ययन का प्रावधान किया जाये।
- भारत की विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध श्रेष्ठ बाल साहित्य को अनूदित कर उपलब्ध कराया जाये।
- पृथक बाल पुस्तकालयों की स्थापना की जाये। ग्रामीण अंचलों में चल पुस्तकालयों के जरिये बालापयोगी पुस्तकों को पहुँचाने की व्यवस्था की जाये।
- बाल साहित्य की पुस्तकों के चित्रांकन की अपनी विशेषता होती है, इसके लिए चित्रकारों की कार्यगोष्ठियाँ एवं विचार गोष्ठियाँ आयोजित की जायें।
- बाल विश्वकोश निकाले जायें।

- बाल साहित्य का सृजन तब तक प्रभावी नहीं हो सकता जब तक बाल साहित्यकार के सामने यह स्पष्ट न हो वह किस समाज के बालकों के लिए लिख रहा है, यानी उसे बालकों किस प्रकार का नागरिक बनाने के लिए साहित्य रचना है।
- बाल साहित्य का सृजन उच्चतम साहित्य साधना पर ही निर्भर है और उसकी प्रेरणा के लिए यह भी अत्यन्त आवश्यक है कि बाल साहित्यकारों को भी वही स्थान प्राप्त हो जो अन्य साहित्यकारों को प्राप्त है।

....
....

द्वितीय अध्याय

हिन्दी बाल साहित्य का क्रमिक विकास

- वीरगाथा काल
- भक्ति काल
- रीतिकाल
- आधुनिक काल

द्वितीय अध्याय

हिन्दी बाल साहित्य का क्रमिक विकास

हिन्दी में बाल साहित्य का उद्‌गम बड़ों के साहित्य के अनुसार संस्कृत भाषा का संरचनात्मक स्वरूप ही रहा है। बाल साहित्य के वर्तमान स्वरूप ने व्यवस्थित ढंग से भले ही बहुत विलम्ब से आकार लेना प्रारम्भ किया हो, किन्तु लोरियों और प्रभातियों के रूप में तो यह तभी से अस्तित्व में आ गया था जब बड़ों के लिए हिन्दी में साहित्य लेखन ठीक से प्रारम्भ भी नहीं हुआ था।

'बालक ने प्रकृति की गोद में नयन खोले, प्रभात का दिव्य-आलोक, समीरण के मृदुल और मधुर झोंके पाकर उसकी जीवनलीला विकासमान हुई। बच्चों को रिझाने, खिझाने, पालने से गति संचरणकाल तक उसमें मातृत्व भावना का बीजांकुरण हुआ। बाल समस्याओं, प्रश्नों, परिचिति को लेकर आत्मबोधात्मक ज्ञान बच्चों के लिए पहली पुस्तक है जिसके समाधानों द्वारा बच्चा आगे बढ़ता और प्रेरणा तथा जीवनशक्ति पाता है। बालक के यही अनुभव तथा प्रेरणा के नवोत्सर उसमें संस्कारगत ऊर्जा का प्रसार करते हैं। भारतीय साहित्य वन संस्कृति के अनन्य रूप संजोये है, यही कारण है कि संस्कृत का बाल साहित्य आत्मप्रवृत्तिपरक होने के साथ ही जीवन संस्कृति

का प्रतिनिधित्व करता है।'[1]

डॉ. चक्रधर नलिन के अनुसार वैदिक काल में कन्याओं के लिए भी उत्तम बाल साहित्य का सृजन हुआ जिससे वेद-ऋषि घोषणा, लोपामुद्रा, उर्वशी, कामंदकी, अपाला आदि की भूमिका का स्वरूप उद्घाटित हुआ। लोकजगत् तथा परिपुष्ट जगत के साहित्य को विद्वानों ने अलिखित तथा लिखित रूप में मान्यता प्रदान की है। भोजपत्रों पर लिखित बालोपयोगी सूत्र, जीवनी आदि रचनाएँ बच्चों का पर्याप्त ज्ञानार्जन करती रहीं। बच्चों के लिए तात्कालिक विद्वत् मण्डल ने पौराणिक, धार्मिक, सांस्कृतिक कथाओं, व्यास शैली में वर्णित नीतिपरक, ब्रह्मविद्या सम्बन्धी, इतिहास, नक्षत्र विद्या, ज्योतिष, व्याकरण, तर्क, सर्प तथा विष सम्बन्धी ज्ञान व्यवस्था की। ऋग्वेद (एतरेय), यजुर्वेद (शतपथ), सामवेद (पंचशि), अथर्ववेद (गोपथ) के अतिरिक्त आरण्यक तथा ब्राह्मण ग्रंथ रचनाओं से गुरुजन उच्च चरित्र सम्बन्धी ज्ञान बच्चों को आसानी से देते था।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कथाओं और प्रवचनों के माध्यम से प्राचीनकाल में बाल साहित्य अभिवर्द्धित हुआ। ब्राह्मणग्रंथों में बच्चों में इन्द्रिय निग्रह के साथ ही शुद्ध तथा पवित्र आचरण तथा चरित्र के बीज भी रोपित किये गये। इस काल में बच्चों में दृढ़ संकल्प, अतुल और महनीय मानसिक और बौद्धिक ज्ञान संपदा के बीजांकुरण के साथ ही पर्याप्त मनोरंजन के तत्त्वों को संयोजन किया

1. हिन्दी बाल साहित्य का विधागत विकासक्रम : डॉ. चक्रधर नलिन, पृ. 73

गया। यही कारण है कि विश्व बाल साहित्य में संस्कृत का साहित्य आज भी श्रेष्ठता स्तर की दृष्टि से अविस्मरणीय, सार्थक, कालजयी तथा जीवन्त है।

'जैन और बौद्धकाल में रचित बाल साहित्य में तीर्थंकरों के सरलोपदेश, जीवनियाँ, वचन, मुनियों के जीवन प्रसंग, राजाओं तथा देवी-देवताओं के असाधारण संवाद और प्रसंग आदि बच्चों को पढ़ाये तथा सिखाये जाते रहे हैं। बौद्धकाल में आठ वर्ष के बालकों को मठों में शिक्षा का प्रावधान था। बालिकाओं के लिए भी शिक्षा की व्यवस्था थी। व्यक्तिगत शिक्षा के अतिरिक्त सामूहिक शिक्षा का भी प्रचलन था।'[1]

इस युग में बच्चों को व्यावहारिक शिक्षा जैसे आयुर्वेद, वास्तुकला, शिल्प, मूर्ति, चित्र, संगीत आदि के साथ उद्योग, व्यवसाय तथा शस्त्र प्रशिक्षण, पशुविज्ञान की भी शिक्षा दी जाती रही है। जातक कथाएँ, जैन और बुद्ध कथाएँ, अवतार तथा देवी-देवताओं की कथाएँ बच्चों के चरित्र विकास में उन्हें ज्ञान-विज्ञानपरक सामग्री तथा शिक्षा प्रदान करने में अग्रणी रही है। हिन्दी बाल साहित्य में हमें वेद, उपनिषद्, पुराण, ब्राह्मण, आरण्यक कथाओं की सूत्र सामग्री के पर्याप्त दर्शन होते हैं। उच्चस्तरीय दशकुमार चरित्रम्, पंचतंत्र, वैताल पंचविंशति, हितोपदेश, नैषध चरित्र, उत्तर रामचरित्र, कादम्बरी, रामायण, महाभारत आदि की ज्ञान सम्पदा का प्रभाव सम्पूर्ण हिन्दी बाल साहित्य पर स्पष्ट परिलक्षित होता है।

1. हिन्दी बाल साहित्य का विधागत विकासक्रम : डॉ. चक्रधर नलिन, पृ. 75

बाल साहित्य के इतने समृद्ध अतीत के बावजूद यदि हिन्दी साहित्य के काल विभाजन के अनुसार हिन्दी बाल साहित्य के विकास का अध्ययन करें तो हम पाते हैं कि बीसवीं शताब्दी के पूर्व तक इस ओर समुचित और सुनियोजित प्रयासों का सर्वथा अभाव रहा है।

वीरगाथाकाल

आदिकाल या वीरगाथाकाल में उपलब्ध बाल साहित्य साधारण ज्ञानबोध तक ही सीमित रहा। इस काल में बच्चों को पहेलियों, मुकरियों, गणित, समस्या ज्ञान और प्रश्नांतकों के माध्यम से शिक्षा दी जाती थी। इससे ज्ञानार्जन के साथ-साथ पर्याप्त मनोरंजन भी होता था। 'हिन्दी का पहला बाल साहित्यकार अमीर खुसरो (1253 से 1329 ई.) को माना जा सकता है।'[1]

अमीर खुसरो ने बच्चों के लिए ढकोसले, सरल दोहे, तुकबंदियाँ, पहेलियाँ तथा मुकरियाँ लिखीं। जगनिक के आल्हागीत भी बच्चों में बहुत लोकप्रिय हुए। अमीर खुसरो की कुछ पहेलियाँ दृष्टव्य हैं :-

एक थाल मोती से भरा,
सबके सिर पर औंधा धरा।
चारों ओर वह थाली फिरे,
मोती उससे एक न गिरे ।।[2] **(आकाश)**

1. हिन्दी बाल साहित्य - एक विश्लेषण : डॉ. रामप्रसाद मिश्र, पृ. 39
2. बालगीत साहित्य : निरंकार देव सेवक, पृ. 36

बीसों का सिर काट लिया।

ना मारा ना खून किया ।।[1] (नाखून)

इसी प्रकार मुकरी का एक उदाहरण देखें :-

वह आवे तब शादी होय।

उस बिन दूजा और न कोय ।।

मीठे लागें वाके बोल।

ऐ सखि साजन ? ना सखि, ढोल ।।[2]

इस परम्परा को घासीराम, पंडित विगहपुर, वासू खमीनियाँ आदि ने आगे बढ़ाया। वीरगाथाकाल में बाल साहित्यकारों के बहुत अधिक नाम यदि नहीं मिलते हैं तो इसका एक प्रमुख कारण यह भी है कि उस काल में बालसाहित्य को लिपिबद्ध करने की आवश्यकता ही अनुभव नहीं की गई। मौखिक रचनाओं ने प्रसिद्धि और लोकप्रियता तो खूब प्राप्त की लेकिन उन्हें किसने और कब लिखा यह तथ्य अविदित ही रह गए। यह निस्सन्देह बड़े खेद की बात है कि इतनी अच्छी रचनाओं के रचयिताओं के बारे में हिन्दी साहित्य का इतिहास पूरी तरह मौन है। भले ही हम नहीं जानते कि इन अत्यन्त लोकप्रिय रचनाओं के प्रणेता कौन हैं लेकिन हिन्दी बाल साहित्य को लोकप्रिय बनाने में और उसे प्रतिष्ठित कराने में इन अनाम मूर्धन्यों का जो योगदान है उसके लिए हिन्दी बाल साहित्य सदैव ही उनका ऋणी रहेगा।

1. बालगीत साहित्य : निरंकार देव सेवक, पृ. 36

2. तदैव , पृ. 37

भक्तिकाल

वीरगाथाकाल की अपेक्षा इस काल में बाल साहित्य अधिक समृद्ध तो निसन्देह हुआ, किन्तु वह बड़ों के लिए लिखे जाने वाले साहित्य के साथ उसके एक अंग के रूप में ही पल्लवित हुआ। विशेष रूप से बच्चों के लिए ही साहित्य लिखे जाने जैसी कोई पहल तो इस युग में भी नहीं हुई, परन्तु जो बाल साहित्य इस युग में लिखा गया वह अतुलनीय है।

'भक्तिकाल में बच्चों के लिए सृजनात्मक बिन्दुओं पर जो रचनाधर्मिता हुई, वह निरन्तर बढ़ती रही। कबीर, सूर, तुलसी की रचनाओं ने बच्चों के मन में मनुष्यत्व के श्रेष्ठ जीवनमूल्यों को सफलतापूर्वक बीजांकुरित किया। कबीर ने हिन्दू-मुस्लिम जातिभेद, कुसंस्कार तथा समाज, काल एवं देश में फैले हुए अज्ञान के अंधकार को मिटाने के लिए और बच्चों को जागरूक बनाने के उद्देश्य से अनेक शिक्षाप्रद दोहे रचकर युगान्तरकारी कार्य किया। महामना सूरदास ने बालक कृष्ण के बालजीवन को केन्द्रित कर उनकी बालोचित चेष्टाओं, क्रीड़ाओं और मनोभावो से सम्बन्धित जो पद-रचना की वह काव्य का प्राणतत्व है और विश्व साहित्य में आज भी अतुलनीय है। उन्होंने कृष्ण के जन्म से लेकर पालने, घुटनों के बल चलने, नाचने, क्रीड़ा करने, माखनचोरी, यमुना तट पर पेड़ों पर चढ़ने, गायें चराने आदि की मनोरम लीलाओं को जितने जीवन्त ढंग से अपनी पदावलियों में चित्रित किया है वह बच्चों में निस्सन्देह बाल चेतना उत्पन्न करता है। सूर की बाल मनोवैज्ञानिक दृष्टि बच्चों को आनन्द

तथा वात्सल्य रस से विभोर कर देती है। तुलसी ने बच्चों में शक्ति, प्रेरणा और ब्रह्म तत्व का जागरण करने के लिए श्रीरामगाथा तथा हनुमत सम्बन्धी बालकाव्य का सृजन किया। श्रीरामचरितमानस में श्रीराम का बाल वर्णन, सम्पूर्ण किष्किन्धा काण्ड, श्री हनुमान चालीसा तथा हनुमानाष्टक मूलतः बाल साहित्य न होते हुए भी श्रेष्ठ बाल साहित्य के तत्वों से समाविष्ट हैं। कवि ने बल, बुद्धि और विद्या (समस्त विकारों का हरण कर) पाने के लिए हनुमानजी से जो प्रार्थना की है(बल, बुधि, विद्या देहु मोहि, हरहु कलेश विकार), यह शक्तिपरक तथा नीतिपरक अभ्यर्थना बच्चों के लिए सर्वसुखद बाल साहित्य माना जा सकता है। दृश्यकाव्य के रूप में रामलीला, कृष्णलीला, सत्यवादी हरिश्चन्द्र, केशवलीला आदि का विकास इसी काल की देन हैं जो बच्चों के लिए लिखित साहित्य का आधार-बिन्दु हैं।'[1]

सूरदास के बाल कृष्ण का यह रूप कितना मनमोहक है-

'मैया कबहिं बढ़ेगी चोटी ?

किती बार मोहि दूध पियत भइ, यह अजहूँ है छोटी।'[2]

गोस्वामी तुलसीदास द्वारा किया गया दशरथ के चार पुत्रों का बाल विनोद भी उल्लेखनीय है :-

'तन की दुति स्याम सरोरुह लोचन कंज की मंजुलताई हरैं।

अति सुन्दर सोहत धूरि भरे छवि भूरि अनंग की दूरि धरैं।।

1. हिन्दी बाल साहित्य का विधागत विकासक्रम : डॉ.चक्रधर नलिन, पृ. 77

2. सूर सारावली : सूरदास

दमकैं दँतियाँ दुति दामिनि ज्यों किलकै कल बाल विनोद करैं ।

अवधेस के बालक चार सदा तुलसी मन-मंदिर में बिहरैं ।।'[1]

तुलसीदास के दोहे हों अथवा वृन्द कवि और गिरिधर की कुंडलियाँ, तत्कालीन प्रवृत्ति के अनुसार बालकोपयोगी उपदेशात्मक मार्गदर्शन तो सबमें है किन्तु विशेष रूप से बालकों के लिए रचना किसी कवि ने नहीं की । फिर भी यह कहा जा सकता है कि भक्तिकाल में विशुद्ध रूप से बच्चों के लिए भले ही पृथक से कोई साहित्य न रचा गया हो किन्तु आज का बाल साहित्य जिस भव्य इमारत पर दैदीप्यमान है उसकी नींव भक्तिकाल में ही पड़ी ।

'भक्तिकाल के कवियों ने इस वास्तविकता को भलीभाँति समझ लिया था कि बच्चे भगवान का रूप होते हैं । उनका यह भी मानना था कि सुहृद को परमानन्द की अनुभूति कराने के लिए बाल लीलाओं से ज्यादा सार्थक और प्रभावी माध्यम कोई अन्य नहीं हो सकता । इसीलिए इस काल के साहित्य में आराध्य के शिशु रूप को सर्वोपरि स्थान प्राप्त हुआ है । प्रकारान्तर इसका परिणाम यह होना ही था कि पृथक रूप से बच्चों के लिए न लिखे जाने के बावजूद बाल वर्णन से सराबोर भक्तिकालीन साहित्य बाल साहित्य की भाँति ही परिलक्षित होता है ।'[2] सभी विद्वान इस बात पर एकमत हैं कि बाल साहित्य की आधारशिला भक्तिकाल ने ही रखी ।

1. बालगीत साहित्य : निरंकार देव सेवक, पृ. 78
2. बाल साहित्य और भक्तिकाल : अपर्णा खरे (प्रांकुर, दिसंबर 1999)

रीतिकाल

वास्तविक अर्थों में विशुद्ध रूप से बच्चों के लिए साहित्य लेखन का कार्य रीतिकाल से ही प्रारम्भ हुआ। इस काल में मुख्य विधा काव्य ही थी इसलिए बाल साहित्य का सृजन भी काव्य रूप में ही हुआ। रहीम, भूषण और गिरिधर कविराय जैसे मूर्धन्य कवियों ने बच्चों के लिए जो रचनाएँ लिखीं उनकी गणना आज भी महत्वपूर्ण बाल साहित्य में होती है । इन कवियों के नीतिपरक दोहे बालमन पर जो गहरी छाप छोड़ते हैं वे आजीवन उनके लिए पथ-प्रदर्शक का काम करते हैं।

'बड़े बड़ाई ना करें , बड़े न बोलहिं बोल।
रहिमन हीरा कब कहे, लाख टका मेरो मोल।।'[1]

इसी प्रकार गिरिधर कविराय की यह सीख दृष्टव्य है-

'साईं बैर न कीजिये गुरु पंडित कवि यार।
बेटा, वनिता, पौरिया, यज्ञ करावनहार।।
यज्ञ करावन हार राज्य मंत्री जो होई ।
विप्र, परोसी, वैद्य, आपकी तपै रसोई।।
कह गिरिधर कविराय युगन तें यह चलि आई।
इन तेरह सों तरह दिये बनि आवै साईं।।'[2]

1. रहीम के दोहे , पृ. 9
2. बालगीत साहित्य : निरंकार देव सेवक

इसी प्रकार लालबुझक्कड़, घाघ और भड्डरी की रचनाएँ न केवल बच्चों का मनोरंजन करती हैं बल्कि उनका पर्याप्त ज्ञानवर्द्धन भी करती हैं। पं. रामनरेश त्रिपाठी के मतानुसार लाल बुझक्कड़ जिला फर्रुखाबाद के रहने वाले थे। लाल उनका नाम था और बुझक्कड़ पदवी। घाघ की देखादेखी उन्होंने भी अपनी बुद्धि का चमत्कार दिखाना प्रारम्भ किया था। घाघ के विषय में यह कहा जाता है कि वह कन्नौज के रहने वाले थे। उनके वंशज वहाँ सराय घाघ चौधरी नामक ग्राम में आज भी मौजूद हैं। उनके जन्म का सुनिश्चित संवत् तो पता नहीं पर एक किवदन्ती के अनुसार वह अकबर के काल में हुए थे और अकबर ने ही उन्हें आपने नाम से एक गाँव बसाने की आज्ञा दी थी। घाघ की रचनाओं में अनुभव ज्ञान की गंभीर बातें ही अधिक हैं, किन्तु लाल बुझक्कड़ की रचनाएँ सरल और हँसाने वाली होने के कारण छोटों-बड़ों सबका ही मनोरंजन करती हैं। एक बार एक हाथी किसी गाँव में होकर निकल गया था। सबने आश्चर्यचकित होकर उसके बड़े-बड़े पाँवों के गोल-गोल निशान खेतों में देखे। वह यह नहीं समझ सके कि वह किस पशु के पैरों के निशान हैं। इसी विषय पर लाल बुझक्कड़ ने कहा-

'लाल बुझक्कड़ बूझते और न बूझै कोय।
पाँव में चक्की बाँध के, हरिना कूदा होय।।'[1]

रीतिकालीन बाल साहित्य पर तत्कालीन वातावरण तथा परिस्थितियों की झलक स्पष्ट देखी जा सकती है।

1. बालगीत साहित्य : निरंकारदेव सेवक

आधुनिक काल (1843 से अद्यतन)

आधुनिक काल में बाल साहित्य ने अपने चरमोत्कर्ष को प्राप्त किया। इस काल के बाल साहित्य का अध्ययन करने के लिए हमें इसे दो समय खण्डों में विभाजित करना होगा - एक तो सन् 1843ई. से लेकर सन् 1950 तक का समय दूसरे सन् 1950 से अब तक का समय।

'आधुनिक काल बाल साहित्य का स्वर्णयुग है। इसमें पद्य के साथ-साथ गद्य की भी सभी विधाओं में प्रचुर मात्रा में बाल साहित्य का सृजन हुआ। इस काल की प्रमुख विशेषता यह भी है कि इसमें बाल साहित्य विशुद्ध रूप से बाल पाठकों के लिए और उन्ही को केन्द्रित कर लिखा गया।'[1]

'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने खड़ी बोली में बहुत सी बालोपयोगी रचनाओं की सृष्टि की जिनमें 'अंधेर नगरी चौपट राजा' (हास्य-व्यंग्य नाटक), 'लोरी', 'चूरन का लटका' जैसी रचनाओं ने बच्चों के साथ-साथ बड़ों का भी भरपूर मनोरंजन किया। इसी प्रकार प्रताप नारायण मिश्र की 'मोटापा', 'गोरसा', 'हर-गंगे' जैसी अनेक मनोरंजक रचनाओं की लोकप्रियता भी सर्वकालिक है। पंडित श्रीधर पाठक ने बच्चों की विषय वस्तु, ज्ञानवर्द्धन तथा रोचकता को ध्यान में रखकर सरल, सरस और बोधगम्य भाषा में जो रचना सृजन किया वह बाल काव्य का आधार स्तम्भ माना जाता है।'[2] श्रीधर

1. बाल साहित्य के विविध आयाम : सं. विनोद चन्द्र दुबे , पृ. 125

2. तदैव, पृ. 126

पाठक की रचना 'ब्राबा आज देल छे आये, चिज्जी-पिज्जी कुछ ना लाये' शिशुगीत का बहुत ही अच्छा उदाहरण है।

बीसवीं सदी के प्रारम्भ में जब बच्चों के लिए पाठ्यपुस्तकें तैयार करने पर विशेष मेहनत की जा रही थी तब यह कमी उभरकर सामने आयी कि विशुद्ध रूप से बच्चों के लिए रचे गए बाल साहित्य का बेहद अभाव है। ऐसे में स्तरीय बाल साहित्य की जो आवश्यकता महसूस की गई उसने तत्कालीन साहित्यकारों को स्वतंत्र बाल साहित्य लेखन की प्रेरणा दी। श्रीधर पाठक इस समय की सबसे बड़ी उपलब्धि हैं। निरंकार देव सेवक के अनुसार-'प्राप्त जानकारी के अनुसार उन्होंने (पं.श्रीधर पाठक) ही सबसे पहले स्वतंत्र रूप से मनोरंजक बालगीत लिखे। इसलिए उन्हें ही हिन्दी का पहला बाल गीतकार/कवि माना जा सकता है।'[1] पर बालमुकुन्द गुप्त भी उसी समय बच्चों के लिए लिख रहे था। सेवकजी ने भी लिखा है कि - 'पं. श्रीधर पाठक और बालमुकुन्द गुप्त ने सबसे पहले लगभग एक ही समय में बच्चों के लिए कविताएँ लिखना प्रारम्भ किया था।'[2] सत्यनारायण कविरत्न ने एल.वी. जोन्स को हिन्दी पढ़ाने के सिलसिले में लगभग सन् 1919 में एक बाल कविता की रचना की थी।[3] कविरत्न की 'हलवाई' नाम से प्रसिद्ध उक्त कविता की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :-

1. बालगीत साहित्य : निरंकारदेव सेवक , पृ. 130

2. तदैव

3. पं. सत्यनारायण कविरत्न की जीवनी, पृ. 42

'सुन सुन रे हलवाई , भूख लगी है मुझको भाई
पूरी बेलो जल्दी-जल्दी, पीसो अभी मसाला हल्दी
होवे ज्यों ही गरम कढ़ाई , उसमें दो पूरी छुड़वाई
घी देखो छुनछुन करता है,आँच लगी,उबला पड़ता है।'[1]

बाबू बालमुकुन्द गुप्त की 'रेलगाड़ी' नामक कविता भी बच्चों में खूब लोकप्रिय हुई थी। सन् 1904 ई. में रचित इस कविता की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं:-

' हिसहिस हिसहिस हिसहिस करती,रेल धड़धड़ जाती है,
जिन जंजीरों से जकड़ी है , उन्हें खूब खड़काती है।
दोनों ओर दूर से दुनिया देख रही है बाँध कतार,
धूएँ के बल से जाती है , धुआँ उड़ाती धूआँधार।'[2]

इन प्रमाणों के बीच में सुप्रसिद्ध कवि अयोध्या सिंह उपाध्याय का अपना वक्तव्य भी है जिसमें उन्होंने स्वयं हिन्दी का प्रथम बालगीतकार होने का दावा किया है। बाल पत्रिका वानर के तत्कालीन संपादक आनन्द कुमार ने एक साक्षात्कार के दौरान हरिऔध जी से पूछा था कि बच्चों के लिए आप कब से लिख रहे हैं ? इसके जवाब में उन्होंने कहा था कि -'बहुत दिनों से लिख रहा हूँ। हिन्दी में शायद बच्चों के कविता लिखने वाला सबसे प्रथम

1. पं. सत्यनारायण कविरत्न की जीवनी, पृ. 54
2. बालगीत साहित्य : निरंकारदेव सेवक

कवि मैं ही हूँ। पीछे और लोग भी देखादेखी लिखने लगे।'[1] हरिऔधजी प्रगतिशील कवि था। उन्होंने प्रियप्रवास भी लिखा, चोखे चौपदी, चुभते चौपदे भी और ठेठ हिन्दी का ठाठ भी। उनके काव्य संकलन 'बाल विलास' की उत्कृष्टता के सम्बन्ध में माधुरी नामक पत्रिका ने लिखा था- 'इसमें हरिऔध जी की बालोपयोगी विषयों पर 21 कविताएँ हैं। गिलहरी, बन्दर, कोयल, जुगनू, बूँद आदि विषयों पर कविता पढ़ने को किस बच्चे का मन न चाहेगा।' उनकी बन्दर कविता की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं :-

'देखो लड़को बन्दर आया
एक मदारी उसको लाया,
उसका है कुछ ढंग निराला
कानों में पहने है बाला।'[2]

बालकाव्य का महत्वपूर्ण संवर्द्धन तथा विकास आधुनिक युग की प्रमुख देन है। आधुनिक युग में हिन्दी बाल कविता की शुरूआत पूरी गंभीरता से हुई। उपर्युक्त कवियों के अतिरिक्त मैथिलीशरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी, कामता प्रसाद गुरु, लल्ली प्रसाद पाण्डेय और ठाकुर श्रीनाथ सिंह जैसे कवियों ने बाल कविता को अत्यन्त विस्तृत फलक प्रदान किया। रामनरेश त्रिपाठी ने बाल कविता में तो विविध प्रकार के प्रयोग किये ही साथ ही बच्चों के लिए रोचक

1. वानर, फरवरी 1934, पृ. 310
2. तदैव

कहानियाँ लिखकर गद्य साहित्य का मार्ग भी प्रशस्त किया। त्रिपाठी जी को हिन्दी का प्रथम सफल बाल गद्यकार माना जा सकता है। अपने सबसे महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय योगदान के रूप में उन्होंने लोककथाओं का पुनर्लेखन कर उन्हें पूरी तरह बालोपयोगी बनाकर प्रस्तुत किया। इन्हीं लोककथाओं ने आधुनिक बाल कहानियों को जन्म दिया। यह हिन्दी साहित्य का द्विवेदी काल था, अत: यह कहा जा सकता है कि भारतेन्दु काल जहाँ हिन्दी बाल साहित्य के जागरण का काल है वहीं द्विवेदी काल इसकी समृद्धि और विस्तार का काल है।

गद्य के अस्तित्व में आ जाने से कहानी, बाल उपन्यास और बाल नाटकों का तेजी से विकास हुआ। यह वह समय था जब विभिन्न पत्रिकाओं ने भी बाल साहित्य के संवर्द्धन में अपना अविस्मरणीय योगदान प्रदान किया। 'बाल पत्रिकाओं की दृष्टि से स्वतंत्रतापूर्व का युग अत्यन्त समृद्ध था। तब हिन्दी में अनेकानेक बाल पत्रिकाओं के साथ सोलह हस्तलिखित बाल पत्रिकाएँ भी निकल रही थीं।'[1]

स्वातंत्र्यपूर्व काल में बाल साहित्य का आधार सुचिंतित रूप से अत्यन्त सुदृढ़ हो चुका था। बाल साहित्य की सभी विधाओं का पत्रिकाओं में संतुलन रहता था और सम्पादक पत्रिका में अपनी ऐसी सम्पादकीय दृष्टि का उल्लेख करता था जिसका सम्बन्ध बाल समाज से हो। आधुनिक बाल साहित्य का

1. भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम(डॉ. श्री प्रसाद का आलेख), पृ. 70

स्वरूप भी स्वातन्त्र्यपूर्व काल में ही निखर उठा था। महावीर प्रसाद द्विवेदी, निराला और पंत जैसे साहित्यकार भी बाल साहित्य से जुड़ गये थे।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद बाल साहित्य लेखन में क्रांति सी आ गई। बाल साहित्य के महत्व और उसकी आवश्यकता को अनुभव किया गया। साहित्यकारों द्वारा इस महत्वपूर्ण तथ्य को समझा गया कि 'बच्चे देश के भावी कर्णधार हैं। यदि उनका सही मानसिक विकास न हो, उनके चरित्र निर्माण को अनदेखा कर दिया जाये, उनमें नवचेतना , नवयुग के निर्माण की नींव न रखी जाये तो भविष्य में वे अपने देश को ऊँचा उठाने, उसे अखण्डित रूप में सुरक्षित रखने में कैसे सक्षम हो सकेंगे।'[1]

पिछले कुछ दशकों में स्तरीय और प्रेरणास्पद बाल साहित्य के विकास पर विशेष बल दिया गया। बच्चों के मन से सीधा जुड़ा हुआ साहित्य लिखा जाने लगा जो उनके हृदय को सीधे प्रभावित कर सके। शिशुओं के लिए अत्यन्त सरल भाषा में छोटी-छोटी रचनाओं का सृजन होने लगा। विशेष आयु वर्ग के बालक-बालिकाओं के लिए उनकी रुचि, जिज्ञासा, नयी वस्तुओं को देखकर जानने की उत्कंठा तथा उनकी बुद्धि के अनुरूप रचनाएँ लिखी जाने लगीं।

....
....

1. भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम : सं. विनोद चन्द्र पांडेय, पृ. 35

तृतीय अध्याय

बाल साहित्य को प्रकाशित करने वाली पत्रिकाएँ

तृतीय अध्याय

बाल साहित्य को प्रकाशित करने वाली पत्रिकाएँ

साहित्य बड़ों का हो या बच्चों का, उसे पुष्पित, पल्लवित और फलित करने में सबसे महत्वपूर्ण और सार्थक भूमिका समकालीन पत्र-पत्रिकाओं द्वारा निभाई जाती है। एक तो इनकी पहुँच विशिष्ट वर्ग से लेकर जनसाधारण तक समान रूप से होती है, दूसरे ये पाठकों की मानसिकता को दिशा देने का काम भी करती हैं। यही कारण है कि विश्व साहित्य की अनेक अनमोल कृतियाँ पुस्तकाकार रूप लेने से पहले पत्र-पत्रिकाओं में धारावाहिक रूप में प्रकाशित होकर ख्याति अर्जित कर चुकी हैं। बाल साहित्य की भी यही स्थिति है। प्रारम्भिक अवस्था में भले ही बाल पत्रिकाओं को उतना महत्व न मिला हो किन्तु वर्तमान में बाल पत्रिकाओं को न केवल पर्याप्त सम्मान मिल रहा है बल्कि उनकी प्रसार संख्या भी बड़ों की पत्रिकाओं की तुलना में कहीं अधिक है। चन्दामामा और चम्पक जैसी बाल पत्रिकाएँ जब एक दर्जन से भी अधिक भाषाओं में प्रकाशित होकर विक्रय के कीर्तिमान स्थापित कर रही थीं तब बड़ों की कोई भी पत्रिका उनके आसपास भी नहीं पहुँच पा रही थी।[1]

1. पत्रिकाओं की घटती प्रसार संख्या - ब्रह्मानन्द : प्रांकुर नवम्बर 1999

बाल साहित्य की विकास यात्रा को विभिन्न पत्रिकाओं ने बड़े ही सुनियोजित और सुव्यवस्थित ढंग से आगे बढ़ाया है। इस कार्य में बीच-बीच में कुछ बाधायें भी आईं, परन्तु बाल साहित्य का विकासरथ सफलतापूर्वक अपने गंतव्य की ओर अग्रसर होता रहा। प्रकाशन घरानों के आंतरिक कारणों के चलते **पराग** जैसी महत्वपूर्ण बाल पत्रिका असमय ही काल कवलित हो गई।[1]

पराग को बाल पत्रिकाओं में शिखर तक पहुँचाने का श्रेय उसके यशस्वी सम्पादक हरिकृष्ण देवसरे,कन्हैयालाल नन्दन आदि को जाता है। यद्यपि नन्दनजी को जब सम्पादक नियुक्त किया गया था तब बाल साहित्य में उनका तनिक भी हस्तक्षेप नहीं था किन्तु उन्होंने अत्यन्त प्रशंसनीय ढंग से पराग को बुलन्दियों तक पहुँचाया और बाल साहित्य के अनेक नये और अविस्मरणीय मानदण्ड स्थापित किये।

अनेक बाल साहित्यकारों के उदय और उनके प्रतिष्ठित होने का श्रेय असंदिग्ध रूप से पराग को दिया जा सकता है। एक साक्षात्कार में नन्दन जी ने कहा था कि - 'बाल पत्रकारिता से जुड़ना अनायास ही रहा, लेकिन जब जुड़ गया तो मैंने इसे एक चुनौती के रूप में स्वीकार किया। बच्चों के लिए तो मैंने एक कहानी भी नहीं लिखी थी और मुझे बच्चों की पत्रकारिता दे दी गई। जुड़ने के बाद मुझे लगा कि इसमें कुछ करना चाहिये। इसमें काम करते हुए मैंने महसूस किया कि बच्चों की पत्रकारिता को काफी सीमित करके देखा गया है।

1. पत्रिकाओं की घटती प्रसार संख्या - ब्रह्मानन्द : प्रांकुर नवम्बर 1999

जैसे वे केवल कहानियाँ या कविताएँ ही पढ़ते हैं। बच्चे डायरी नहीं लिख सकते ? यात्रा संस्मरण नहीं पढ़ सकते ? हिन्दी में लिखे जाने वाले नवगीत क्या बच्चों के लिए नहीं लिखे जा सकते ? क्या बच्चों के लिए नयी बिम्ब योजना नहीं बनाई जा सकती ? इन सवालों पर मैंने सोचा और उन लेखकों को बाल लेखन के लिए उकसाया जो बड़ों के लिए लिखते थे।'[1]

बाल पत्रकारिता की विधिवत् शुरूआत उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में हुई। इसके पूर्व न तो बाल साहित्य की अलग से कोई चर्चा होती थी और न ही बाल पत्रकारिता की। बड़ों के लिए जो साहित्य रचा जाता था उसी में से बच्चे कुछ रोचक सामग्री अपने लिए भी छाँट लिया करते थे। प्राय: तुलसीदास और सूरदास के राम और कृष्ण सम्बन्धी काव्य में ही बच्चों को अपनी रुचि का काव्य परिलक्षित होता था या फिर नीति सम्बन्धी रचनाएँ पढ़ी जाती थीं। यह तो बहुत बाद की बात है कि बच्चों के मन और मनोभावों को समझकर बाल साहित्य के सृजन की आवश्यकता अनुभव की गई।

एक बात बहुत स्पष्ट है कि बच्चों को साहित्यानुरागी बनाने का जो कार्य बाल पत्रिकाएँ बड़े ही सहज ढंग से कर लेती हैं वह शिक्षकों या अभिभावकों के लिए बहुत ही दुष्कर है। इसीलिए बाल पत्रिकाओं का महत्व और भी बढ़ जाता है क्योंकि ये बच्चों के विकास की दशा और दिशा निर्धारित करने में सर्वाधिक समर्थ हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि हिन्दी में बाल पत्रिकाओं की एक समृद्ध

1. राष्ट्रीय सहारा (8 नवम्बर 1992)

परम्परा प्रारम्भ से ही रही है। बच्चों को विद्यालय तो केवल पाठ्यक्रमानुसार ही शिक्षा प्रदान करते हैं किन्तु जीवन के पाठ्यक्रम की वास्तविक शिक्षा तो ये पत्रिकाएँ ही उपलब्ध कराती हैं। हिन्दी में बालसखा, शिशु, मनमोहन, लल्ला, बालविनोद, पराग, नन्दन, चन्दामामा, चम्पक, बालभारती, चकमक आदि बाल पत्रिकाओं की एक सुदीर्घ परम्परा है जिन्होंने न केवल स्वस्थ बाल साहित्य का प्रकाशन किया बल्कि अनेक बाल साहित्यकारों का निर्माण भी किया। यह हिन्दी बाल साहित्य की विडम्बना ही है कि इनमें से अधिकांश पत्रिकाएँ असमय ही दिवंगत हो गईं। सबसे बड़े दु:ख की बात तो यह है कि इन पत्रिकाओं के बन्द होने का कारण उनका न चल पाना नहीं था बल्कि वे अपने प्रकाशन समूहों के आंतरिक कारणों के चलते बन्द हुईं। पराग इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। इन पत्रिकाओं के सम्पादकों ने व्यक्तिगत स्तर पर सम्पर्क करके लोगों का ध्यान बाल साहित्य की ओर आकृष्ट किया और सुयोग्य साहित्यकारों से उच्चकोटि का बाल साहित्य लिखवाया। पत्रिकाएँ भले ही अब इतिहास का हिस्सा बन गईं हों किन्तु उनके माध्यम से जन्मे बाल साहित्यकार आज भी बाल साहित्य का भण्डार भरने के महनीय कार्य में पूरे मनोयोग से जुटे हुए हैं।

अपने शोधकार्य के दौरान जो तथ्य और जानकारियाँ मुझे उपलब्ध हुईं उनके आधार पर यह कहा जा सकता है बाल पत्रिकाओं का इतिहास मात्र 120 वर्ष पुराना है।[1] 'बालदर्पण' को हिन्दी की सबसे पहली प्रकाशित बाल पत्रिका

1. भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम (हिन्दी बाल साहित्य के विकास में बाल पत्रिकाओं का योगदान -डॉ. सुरेन्द्र विक्रम), पृ. 265

माना जा सकता है। इसके प्रथम अंक का प्रकाशन सन् 1882 ई. में हुआ था। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के विशेष प्रयत्नों से प्रकाशित यह पत्रिका भारतेन्दु युग की अभूतपूर्व देन कही जा सकती है। इससे पहले बच्चों के लिए कुछ हस्तलिखित पत्र अवश्य मिलते हैं। ये अनियतकालीन पत्र अलग-अलग स्थानों से प्रकाशित होते था। बालदर्पण के प्रकाशन के उपरान्त हस्तलिखित पत्रों की संख्या में खासी वृद्धि दृष्टिगोचर हुई। 'सन् 1940 के आसपास हिन्दी में लगभग 30 मुद्रित तथा सोलह हस्तलिखित बाल पत्रिकाएँ निकलती थीं। हस्तलिखित पत्रों का प्रयास इस दृष्टि से महत्वपूर्ण कहा जा सकता है कि इससे बच्चों की लेखन प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलता है।'[1]

'बालदर्पण' हिन्दी बाल साहित्य की प्रथम प्रकाशित पत्रिका तो बनी परन्तु भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जैसा मूर्धन्य नाम साथ में जुड़े होने के बावजूद इसका प्रकाशन इस क्षेत्र में कोई क्रांति नहीं ला सका। इसीलिए इसके देखादेखी बाल पत्रिकाओं की कोई बाढ़ नहीं आई और लम्बे समय तक कोई अन्य महत्वपूर्ण बाल पत्रिका प्रकाशित नहीं हुई। किन्तु ऐसा भी न था कि इस क्षेत्र में पूरी तरह से सन्नाटा पसरा हो। विभिन्न स्थानों से कुछ पत्रिकाएँ निकलीं किन्तु उनकी आयु अत्यन्त अल्प रही। ऐसी बाल पत्रिकाओं में 'बाल हितकर', 'छात्र हितैषी', 'बाल प्रभाकर', 'विद्यार्थी', 'मानीटर' आदि का प्रमुख स्थान है।[2]

1. भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम (हिन्दी बाल साहित्य के विकास में बाल पत्रिकाओं का योगदान -डॉ. सुरेन्द्र विक्रम), पृ. 265
2. तदैव, पृ. 266

भारतेन्दु युग में जिस बाल पत्रकारिता का बीजारोपण हुआ था, वह आगे चलकर द्विवेदी युग में पुष्पित और पल्लवित हुई। इस काल में प्रकाशित होने वाली 'शिशु' और 'बालसखा' नामक बाल पत्रिकाओं को जबरदस्त लोकप्रियता प्राप्त हुई। बालसखा के अलावा स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व प्रकाशित होने वाली बाल पत्रिकाओं में 'छात्र सहोदर', 'वीर बालक', 'बालक', 'खिलौना', 'चमचम', 'वानर', 'कुमार', 'अक्षय भैया', 'बाल विनोद', 'किशोर', 'तितली', 'होनहार', 'मदारी', 'बालबोध', 'बालहित', 'किशोर भारती' आदि का महत्वपूर्ण स्थान है।

इसके बाद भारत में स्वाधीनता की लहर फैल गई। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद अन्य क्षेत्रों की भाँति बाल पत्रकारिता के क्षेत्र में भी क्रांतिकारी परिवर्तन परिलक्षित होने लगे। बड़ी संख्या में नयी बाल पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ, जिनमें से कई तो कुछेक अंक निकालने के बाद बन्द हो गईं जबकि कुछ का प्रकाशन अभी भी निरन्तर हो रहा है। ज्यादातर पत्रिकाएँ आर्थिक कारणों से बन्द हुईं।[1]

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद प्रकाशित होने वाली प्रमुख बाल पत्रिकाओं में 'बाल भारती', 'प्रकाश', 'मनमोहन', 'अमर कहानी', 'चन्दामामा', 'चुन्नू-मुन्नू', 'नन्हीं दुनिया', 'बालमित्र', 'जीवनशिक्षा', 'स्वतन्त्र बालक', 'पराग', 'नन्हे-मुन्ने', 'राजा बेटा', 'नन्दन', 'बालबन्धु', 'मीनू-टीनू', 'राजा भैया',

1. बाल पत्रकारिता : डॉ. ओमप्रकाश सिंहल, पृ. 108

'फुलवारी' आदि पत्रिकाओं ने छठें दशक तक बाल पत्रकारिता के विकास रथ को बहुत ही शानदार तरीके से आगे बढ़ाया।

बीसवीं सदी का सातवाँ दशक आते-आते विशुद्ध व्यावसायिक और पेशेवर प्रकाशकों की समझ में यह बात आ गई कि बाल पत्रकारिता के माध्यम से भी अच्छा-खासा धन अर्जित किया जा सकता है। परिणामस्वरूप बड़ों की तरह बच्चों की पत्रकारिता में व्यावसायिकता का प्रवेश हुआ।[1] इससे एक अच्छी बात तो यह हुई कि बाल पत्रिकाओं का कलेवर पहले से अधिक चित्ताकर्षक और बड़ा होने लगा, किन्तु एक बड़ा नुकसान यह भी हुआ कि बच्चों को क्या पढ़ाया जाना चाहिये इससे ज्यादा ध्यान इस बात पर दिया जाने लगा कि कौन सी सामग्री परोसकर पत्रिका की बिक्री बढ़ाई जा सकती है और विज्ञापनदाताओं को अधिक आकर्षित किया जा सकता है। इस मानसिकता के चलते बाल पत्रिकाओं में विषय-वस्तु पर चटपटापन हावी होता चला गया। जासूसी कहानियों और चित्रकथाओं की एकाएक भरमार होने लगी। कुछ पत्रिकाएँ तो केवल चित्रकथाओं, चुटकुलों और पहेलियों का संकलनमात्र बनकर रह गईं। यह कहना गलत न होगा कि पिछली सदी के सातवें और आठवें दशक बाल पत्रकारिता के इतिहास में ऐसे संक्रमण काल के रूप में स्मरण किये जायेंगे जब संख्यात्मक रूप से तो बाल पत्रिकाओं के क्षेत्र में क्रांति का अहसास हो रहा था किन्तु गुणवत्ता का निरन्तर ह्रास हो रहा था। यही वह

1. व्यवसाय बनती बाल पत्रकारिता : अपर्णा खरे , नई दुनिया 28 जनवरी 1999

समय था जब पत्रिकाओं के समानान्तर ही पॉकेट बुक्स के प्रकाशकों ने भी बाल उपन्यासों का प्रकाशन कर व्यावसायिक अवसर का भरपूर लाभ उठाने के लिए कमर कस ली थी । बाल पत्रिकाओं के सम्पादक अपने प्रकाशकों की इच्छानुसार अपनी पत्रिकाओं में सस्ते किस्म के बाल उपन्यास भी धारावाहिक रूप से प्रकाशित करने लगे ।[1]

सन् 1960 के बाद जिन बाल पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ उनमें से 'बेसिक बालशिक्षा', 'बाललोक', 'फुलवारी', 'बाल दुनिया', 'बाल वाटिका', 'रानी बिटिया', 'शेरसखा', 'नन्दन', 'मिलिन्द', 'जंगल', 'चमकते सितारे', 'बाल प्रभात', 'शिशुबन्धु', 'बाल-जगत', 'बच्चों का अखबार', 'नटखट', 'बालकुंज', 'चंपक', 'लोटपोट', 'चन्द्रखिलौना', 'बाल रंगभूमि', 'मुन्ना', 'गोलगप्पा', 'हिन्दी कॉमिक्स', 'महाबली कॉमिक्स', 'बच्चे और हम', 'गुरु-चेला', 'हँसती दुनिया', 'गुड़िया', 'किशोर मिलिन्द', 'बालबन्धु', 'शक्तिपुत्र', 'प्यारा बुलबुल', 'लल्लू पंजू', 'शावक', 'बालेश', 'बालरुचि', 'बालदर्शन', 'शिशुरंग', 'कलरव', 'आदर्श बालसखा', 'ओ राजा', 'बाल साहित्य समीक्षा', 'बाल पताका', 'मुस्कराते फूल', 'बाल कल्पना', 'मेला', 'देवपुत्र', 'राकेट', 'बालगान', 'बालरत्न', 'कुटकुट', 'नन्हे तारे', 'नन्हीं मुस्कान', 'आनन्ददीप', 'बालनगर', 'चन्दन', 'लल्लू जगधर', 'सुमन सौरभ', 'किलकारी', 'उपवन', 'चकमक', 'बाल कविता',

1. व्यवसाय बनती बाल पत्रकारिता : अपर्णा खरे , नई दुनिया 28 जनवरी 1999

'अच्छे भैया', 'नये फूल धरती के', 'बालहंस', 'बालमंच', 'नन्हे सम्राट', 'किशोर लेखनी', 'बालमेला', 'समझ झरोखा', 'चम्पा', 'अंगूर के गुच्छे', 'मुन्ना-मुन्नी', 'बच्चों की दुनिया', 'बाल गोपाल', 'बाल ज्योति', 'चन्दा', 'छौना', 'घरौंदा', 'दूध बताशा', 'झरना', 'तमाशा', 'बालवाणी' आदि बाल पत्रिकाएँ प्रकाशित हुईं।

उपर्युक्त प्रकाशित बाल पत्रिकाओं के अतिरिक्त हस्तलिखित बाल पत्रिकाओं ने भी बाल साहित्य के विकास में जो योगदान दिया है उसे अनदेखा नहीं किया जा सकता। कुछ प्रमुख हस्तलिखित बाल पत्रिकाओं के नाम इस प्रकार हैं - 'आशा', 'तरुण', 'परिन्दे', 'जीवन', 'आलोक', 'बाल मित्र', 'युवक', 'बालभारत', 'किरण', 'कल्पना', 'उदय', 'अंजलि', 'जीवन', 'पत्रिका', 'ज्योति', 'शारदा', 'बालेन्दु', 'शिखर', 'तरुणपुष्प', 'हिन्द शक्ति', 'सेवा' आदि।

स्वतंत्रता के बाद की पत्रिकाओं में बालमानस को सर्वाधिक प्रभावित करने वाली पत्रिकाओं में चम्पक, चन्दामामा, पराग, नन्दन, बालभारती और बालहंस प्रमुख हैं। इनमें से दिल्ली प्रेस द्वारा प्रकाशित 'चम्पक' तो एक तरह से शिशुओं की ही पत्रिका है। इसकी ज्यादातर कहानियों के प्रमुख पात्र पशु-पक्षी होते हैं। 'पराग' का प्रकाशन बन्द हुए लगभग दस वर्ष होने को आये।

बालभारती का प्रकाशन भारत सरकार के प्रकाशन विभाग ने सन् 1948 में प्रारम्भ किया था। सरकारी पत्रिका होने के नाते इसके सम्पादक जल्दी-जल्दी

बदलते रहे। सावित्री देवी वर्मा तथा द्रोणवीर कोहली ने सामग्री संकलन, छपाई तथा प्रस्तुति पर विशेष ध्यान दिया। इनके कार्यकाल में बालभारती की लोकप्रियता निरंतर बढ़ती गई। आजकल इसका प्रकाशन मात्र औपचारिकता होकर रह गया है। बाल भारती ने बच्चों के लिए अनेक रोचक और संग्रहणीय विशेषाँक निकाले।

'चन्दामामा' का प्रकाशन मद्रास से सन् 1949 में प्रारम्भ हुआ। हिन्दी बाल पत्रिकाओं में यह अकेली ऐसी मासिक पत्रिका है जिसका प्रकाशन कई भाषाओं में होता है। चित्ताकर्षक बहुरंगी छपाई के कारण कहानियों की यह पत्रिका बच्चों में बहुत जल्दी लोकप्रिय हो गई। इसकी कहानियाँ मुख्यत: ऐतिहासिक तथा पौराणिक प्रसंगों पर आधारित होती हैं। इसका मूल लक्ष्य भारतीय बच्चों को प्राचीन जीवन मूल्यों से परिचित कराना है। बालशौरि रेड्डी के सम्पादनकाल में इस पत्रिका का सर्वाधिक प्रसार हुआ।

'पराग' का प्रकाशन टाइम्स ऑफ इण्डिया ग्रुप ने मार्च 1958 में बम्बई से प्रारम्भ किया। सत्यकाम विद्यालंकार इसके प्रथम सम्पादक थे। बाद में यह दायित्व आनन्द प्रकाश जैन ने संभाला। उनके योग्य सम्पादन ने पराग को बाल साहित्य सृजन की नई दिशा दी। बाल एकांकियो का नियमित प्रकाशन सबसे पहले पराग ने प्रारम्भ किया। बाद में इसका प्रकाशन स्थल बम्बई से बदलकर दिल्ली कर दिया गया। यहाँ इसके स्वरूप के साथ किये गये खिलवाड़ ने पत्रिका की लोकप्रियता को काफी धक्का पहुँचाया। कुछ समय के लिए इसे किशोरों

की पत्रिका कर दिया गया। ऐसा होते ही इसकी प्रसार संख्या में जबरदस्त गिरावट आने लगी जिसकी वजह से इसे पुन: बाल पत्रिका बनाकर पुराने स्वरूप में परिवर्तित कर दिया गया। कन्हैयालाल नन्दन के सम्पादन काल में इस पत्रिका ने लोकप्रियता के अनेक नये कीर्तिमान रचे, किन्तु अन्तत: टाइम्स की अन्य पत्रिकाओं के साथ यह भी असमय ही काल के गाल में समा गई।[1]

तमाम उतार-चढ़ावों के बीच हिन्दुस्तान टाइम्स की पत्रिका 'नन्दन' अभी भी बच्चों में लोकप्रिय बनी हुई है। जयप्रकाश भारती के संपादन काल में इस पत्रिका ने अनेक संग्रहणीय अंक निकाले। भूतपूर्व प्रधानमंत्रियों श्रीमती इंदिरा गांधी और मोरारजी समेत विभिन्न क्षेत्रों के अनेक प्रसिद्ध व्यक्तियों ने इसमें बच्चों के लिए लेख लिखे।[2]

राजस्थान पत्रिका प्रकाशन समूह की पत्रिका बालहंस ने भी बालसाहित्य के संवर्द्धन में सराहनीय योगदान दिया है।

इस प्रकार प्रारम्भ से लेकर आज तक बाल पत्रकारिता ने लम्बी दूरी तय की है। एक शताब्दी के उतार-चढ़ाव को देखा है। दु:ख की बात यह है कि हिन्दी साहित्य के तथाकथित ठेकेदारों, मूर्धन्य समीक्षकों और इतिहास लेखकों ने बाल साहित्य और बाल पत्रकारिता को अभी तक कोई महत्व नहीं दिया है। हिन्दी साहित्य के इतिहास के पन्नों पर बाल साहित्यकारों को केवल बाल

1. व्यवसाय बनती बाल पत्रकारिता : अपर्णा खरे , नई दुनिया 28 जनवरी 1999

2. हिन्दी बाल साहित्य : डॉ. ओमप्रकाश सिंहल, पृ. 111

साहित्य के बूते पर अभी भी प्रवेश नहीं मिला है। बाल पत्रकारिता के लिए तो यह और भी चिन्तनीय स्थिति है, क्योंकि जब बाल साहित्य को ही उसका पावना नहीं मिला तो बाल पत्रकारिता की स्थिति बेहतर कैसे हो सकती थी। अलबत्ता पिछले कुछ वर्षों के दौरान इस स्थिति में एक सुखद बदलाव परिलक्षित हो रहा है। कोटा विश्वविद्यालय ने बाल पत्रकारिता को पत्रकारिता के स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में सम्मिलित कर इस दिशा में सराहनीय पहल की है। डॉ. सुरेन्द्र विक्रम ने 'हिन्दी बाल पत्रकारिता : उद्भव और विकास' नामक पुस्तक में बाल पत्रकारिता की विकासयात्रा को रेखांकित करने का स्तुत्य प्रयास किया है।

जहाँ तक बाल पत्रकारिता की सम्भावना का प्रश्न है तो असंदिग्ध रूप से यह कहा जा सकता है कि विकास के अनेक सोपान तय कर लेने के बाद भी बाल पत्रकारिता में अभी भी बहुत कुछ करने को शेष है। आवश्यकता इस बात की है कि बाल पत्रिकाओं को समुचित प्रश्रय मिले। उनकी अकाल मृत्यु को रोकने के लिए सार्थक प्रयास किये जायें। हाल ही के कुछ वर्षों में अनेक बाल पत्रिकाएँ यदि बन्द हुईं तो अनेक शुरू भी हुई हैं। भोपाल से प्रकाशित बाल पत्रिका 'स्नेह' ने कुछ महीनों में अच्छी ख्याति अर्जित की है। किसी बाल पत्रिका की उपयोगिता और प्रसिद्धि उसके सम्पादक की योग्यता, प्रतिभा और क्षमता पर निर्भर करती है। बाल पत्रिका के सम्पादक के लिए यह कतई आवश्यक नहीं है कि वह स्वयं भी कुशल बाल लेखक हो, अपितु उसके लिए

अधिक आवश्यक यह है कि वह बाल मनोविज्ञान को भलीभाँति समझता हो और यह भी समझता हो कि उसके बाल पाठकों को किस प्रकार की सामग्री की आवश्यकता है। बच्चों की दुनिया बड़ों की दुनिया से सर्वथा भिन्न होती है, इसलिए बाल पत्रिकाओं का सम्पादन भी बड़ों की पत्रिकाओं से सर्वथा अलग मानसिकता के साथ करना होता है। बाल पत्रिकाओं का प्राथमिक दायित्व यह है कि वे मित्र की तरह बच्चों का मनोरंजन तो करें ही साथ ही उन्हें जीवन में सफलता पाने का मार्ग भी दिखायें। पत्रिकाएँ इस कसौटी पर खरी उतरें यह उत्तरदायित्व उनके सम्पादकों का होता है।

बाल पत्रिकाएँ बच्चों से सीधी जुड़ती हैं इसलिए यह आवश्यक है कि उनकी भाषा बालोपयोगी और बाल मनोविज्ञान के अनुकूल होनी चाहिये। बोझिल भाषा या थोपी गई शब्दावली तथा जबरन उपदेशों की घुट्टी पिलाने के प्रयास बच्चे बर्दाश्त नहीं कर पाते, उन्हें ऐसे प्रयासों को नकारने में तनिक भी हिचक नहीं होती। यदि बाल पत्रिकाओं की भाषा कठिन हुई तो बच्चा उस पत्रिका में प्रकाशित सम्पूर्ण सामग्री को एक झटके से खारिज कर देता है। संभवतः इसीलिए बाल साहित्य के सृजन को बहुत ही कठिन और श्रमसाध्य कार्य माना गया है।

बाल पत्रिकाओं में प्रकाशित रचनाओं की विषय वस्तु सर्वथा बच्चों के अनुकूल होनी चाहिये। आज का बालक मानसिक रूप से कुछ वर्ष पूर्व तक के भारतीय बालक से सर्वथा भिन्न है। वह यथार्थ और फंतासियों के बीच की

दुविधा में उलझा हुआ है। इन्टरनेट और टेलीविजन ने उसकी कल्पनाओं को अनन्त आसमान उपलब्ध करा दिया है। दैहिक सम्बन्धों के प्रति उसका कौतूहल अब अपेक्षित उम्र के बहुत पहले ही जागृत हो उठता है। उसके मन में उथल-पुथल मचाने वाले तमाम प्रश्नों को अनुत्तरित नहीं छोड़ा जा सकता है, ऐसा करना घातक सिद्ध होगा। आवश्यक यह है कि बच्चों को न केवल अपने प्रश्नों का उत्तर मिले अपितु यह मार्गदर्शन भी मिले कि इन जिज्ञासाओं के प्रति उनका रवैया क्या और कैसा होना चाहिये।

इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए बाल पत्रिकाओं को बच्चों को यथार्थवादी बनाने की पहल करनी होगी और उसी के अनुरूप पाठ्य सामग्री उन्हें उपलब्ध करानी होगी। पत्रिकाओं को यह भी ध्यान रखना होगा कि मनोरंजन और ज्ञानवर्द्धन के बीच ऐसा सामंजस्य बना रहे जिससे बच्चों को अरुचि भी न हो और वे दुनिया को ठीक से जान व समझ भी सकें।

बाल पत्रिकाओं में टिकाऊपन एवं मजबूती का होना भी अतिआवश्यक है। बच्चे तो स्वभाव से ही चंचल होते हैं। वे कभी-कभी पढ़ते-पढ़ते पत्रिका को खिलौना बनाकर उसी से खेलने लगते हैं तो कभी उसका तकिया बनाकर उसी पर सो भी जाते हैं। ऐसी स्थिति में पत्रिका अगर मजबूत और टिकाऊ नहीं हुई तो वह शीघ्र ही नष्ट हो सकती है। बाल पत्रिकाओं का निरन्तर बढ़ता हुआ मूल्य भी बाल पत्रकारिता की प्रगति में अभिशाप सिद्ध हो रहा है। आज के मध्यमवर्गीय अभिभावक की क्रय शक्ति इतनी नहीं है कि वह अपने बच्चों को

हर माह महँगी-महँगी पत्रिकाएँ खरीदकर दे सके। इसलिए यह भी आवश्यक है कि एक तो पत्रिकाओं के मूल्य पर अंकुश लगे दूसरे उनकी सामग्री ऐसी हो कि अभिभावकों को अपना पैसा खर्च करना सार्थक और सदुपयोगी लगे। बच्चों का पत्रिकाओं की उपलब्धता बढ़ाने में पृथक बाल पुस्तकालय भी अत्यन्त मददगार साबित हो सकते हैं। केन्द्र और राज्य सरकारें तो इस दिशा में पहल करें ही साथ ही समाजसेवी संस्थाओं को भी इस दिशा में आगे आना होगा।

....

....

चतुर्थ अध्याय

अन्य भाषाओं में बाल साहित्य का वर्गीकरण

चतुर्थ अध्याय

अन्य भाषाओं में बाल साहित्य का वर्गीकरण

हिन्दी बाल साहित्य पर विदेशी भाषाओं में अंग्रेजी तथा रूसी बाल साहित्य का सर्वाधिक प्रभाव है। इनके अलावा विभिन्न भारतीय भाषाओं में सृजित बाल साहित्य ने भी हिन्दी के बाल साहित्य की दशा और दिशा निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। इस तथ्य के आलोक में हिन्दी बाल साहित्य के सम्यक सिंहावलोकन के लिए यह बहुत आवश्यक है कि अन्य भारतीय भाषाओं के बाल साहित्य पर भी दृष्टिपात किया जाए। इस अध्याय में मैंने यही प्रयास किया है। आइये देखें कि प्रमुख भारतीय भाषाओं में बाल साहित्य की क्या स्थिति है ?

बँगला भाषा का बाल साहित्य

हिन्दी पाठकों में अन्य भाषाओं के साहित्य में बँगला साहित्य सबसे ज्यादा पसन्द किया जाता है। यही कारण है कि प्रसिद्ध बँगला लेखकों की लगभग सभी कृतियाँ हिन्दी में अनूदित हो चुकी हैं। यही स्थिति बाल साहित्य की भी है। बँगला भाषा में सुविख्यात समाज सुधारक ईश्वर चन्द्र विद्यासागर बाल

साहित्य को प्रोत्साहित करने के लिए बाकायदा एक आन्दोलन चलाया। बाल साहित्य के इतिहास में विद्यासागरजी का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा। उस समय विद्यालयों में जो पाठ्यपुस्तकें पढ़ाई जा रही थीं वे बच्चों के लिए बिलकुल अनुपयोगी थीं। इस स्थिति को बदलने के लिए श्री विद्यासागर ने स्वयं अपने हाथ में कलम उठा ली और बच्चों के जीवनोपयोगी पुस्तकों की रचना में निमग्न हो गए। इस कार्य में उनके साथी बने मदन मोहन तर्कालंकार। विद्यासागर ने 'बोधोदय' तथा 'कथामाला' नामक पुस्तकें लिखीं और मदनमोहन की 'शिशुशिक्षा' तीन भागों में प्रकाशित हुई। इसके बाद का युग गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर का युग है। सबसे पहले गुरुदेव ने ही यह कहा था कि - 'बच्चों के लिए केवल पाठ्यपुस्तकें ही पर्याप्त नहीं हैं। उनका कहना था कि बाल साहित्य में कुछ तो ऐसा हो जिसे बच्चे समझ सकें और उनका बाल हृदय कुछ सोचने के लिए विवश हो जाए। यह उनकी कल्पनाशक्ति और मानसिक विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है।'[1]

बँगला बाल साहित्य में एक और मील का पत्थर बने योगेन्द्रनाथ सरकार। उन्होंने सर्वप्रथम छन्दों के माध्यम से बच्चों को आनन्द प्रदान किया। योगेन्द्रनाथ की 'हासिखुशि', दक्षिणारंजन मित्र की 'ठाकुमार झुलि', अवणीन्द्रनाथ की 'शकुन्तला', सुकुमार राय की 'अबोल ताबोल' आदि बँगला

1. बंगला भाषा का बाल साहित्य : माधवी वंधोपाध्याय (भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम पुस्तक से , पृ. 342)

बाल साहित्य की प्रसिद्ध कृतियाँ हैं। इन दिनों खगेन्द्रनाथ मित्र, अमरेन्द्र चक्रवर्ती, सुबोध चक्रवर्ती आदि साहित्यकार स्तरीय बाल साहित्य के सृजन में व्यस्त हैं। अन्य भाषाओं के समान बँगला बाल साहित्य के सामने भी पाठकों की बहुत बड़ी समस्या है। जो बच्चे साहित्य पढ़ते हैं उन्हें अंग्रेजी स्कूलों में दाखिला दिलाया जाता है और अंग्रेजी पुस्तकें ही उन्हें ज्यादा रास आती हैं। इसलिए न तो उन्हें बँगला पढ़ने का मौका मिलता है और न ही बँगला साहित्य में उनकी ज्यादा रुचि रहती है। इसके बावजूद बँगला बाल साहित्य निरन्तर समृद्ध हो रहा है और अनेक लेखक पूरे मनोयोग से बालोपयोगी साहित्य सृजन में निरत हैं।

गुजराती भाषा का बाल साहित्य

बँगला के बाद भारतीय भाषाओं में बाल साहित्य का सृजन सबसे पहले संभवत: गुजराती में ही हुआ। सर्वप्रथम सन् 1828 ई. में बापुशास्त्री पंड्या ने गुजराती में 'ईसप नीति कथाएँ' लिखीं जो 1831 ई. में 'बालमित्र' शीर्षक से दो भागों में प्रकाशित हुई। लेकिन यह गुजराती का मूल साहित्य नहीं था। चिल्ड्रन फ्रेण्ड नामक एक अंग्रेजी पुस्तक का यह गुजराती अनुवाद था। इसमें कुछ कहानियाँ, कुछ कविताएँ एवं कुछ चुटकुले थे।

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में 'गुलिवर्स ट्रावेल्स' (चार भाग) एवं 'डान किहोटे' का गुजराती अनुवाद भी पुस्तक रूप में प्रकाशित किया गया। सन् 1848 में फाबर्स नाम के एक अंग्रेज ने विशेष रूप से गुजराती बाल साहित्य को

समृद्ध करने के लिए 'वर्नाक्यूलर सोसायटी' की स्थापना की और प्रसिद्ध गुजराती कवि दलपत राम की अनेक पुस्तकों का प्रकाशन किया। इनकी हास्य-व्यंग्य की कविताओं को बच्चे ही नहीं बड़े भी बहुत चाव से पढ़ते थे। इनकी कहानियों में नीतिबोध का अन्तःतत्व होने से उनका शाश्वत मूल्य भी निरन्तर बना रहा। इन्हीं के समकालीन नर्मदाशंकर ने बाल साहित्य की कई पाठ्यपुस्तकें तैयार कीं। सन् 1870 में केशवलाल पारिख का पहेली संग्रह 'कोयड़ा संग्रह' प्रकाशित हुआ। प्रसिद्ध गुजराती लेखक इच्छाराम देसाई ने बाल मनोविज्ञान की बहुचर्चित अंग्रेजी पुस्तक 'इवनिंग एट होम' का गुजराती में अनुवाद किया।[1]

इस तरह गुजराती में लगभग पौने दो सौ वर्ष पूर्व ही बाल साहित्य के लेखन एवं प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ हो चुका था। धीरे-धीरे विषयों में विविधता आती गई और आज तो पाठ्यपुस्तकों के अलावा कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, जीवनी, आदि का प्रकाशन भी खूब हो रहा है। यह बात अवश्य चिन्तनीय है कि गुजराती के अग्रणी प्रकाशकों ने बाल साहित्य की अभिवृद्धि में कोई महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के बजाय व्यावसायिक दृष्टि से लाभप्रद पाठ्यपुस्तकों के प्रकाशन को ही ज्यादा महत्व दिया है। हाल ही में नाडियाद के दर्पण प्रकाशन ने इस दिशा में सराहनीय पहल करते हुए बच्चों के लिए

1. गुजराती बाल साहित्य का क्रमिक विकास : गोपाल दास नागर (भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम पुस्तक से, पृ. 346)

पहेलियों, कविताओं एवं कहानियों की एक शृंखला प्रारम्भ करने की योजना बनाई है। इसके अन्तर्गत प्रसिद्ध एवं उभरते हुए रचनाकारों की श्रेष्ठ रचनाओं को बहुत ही कम मूल्य में बाल पाठकों तक पहुँचाया जायेगा।

गुजराती भाषा का प्रयोग मुख्यतः तीन धर्मों के लोग करते हैं हिन्दू, मुस्लिम और पारसी। गुजराती बाल साहित्य के लेखन-प्रकाशन एवं पठन-पाठन की दृष्टि से हम देखें तो बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में जब गांधीजी भारत आये तो उन्होंने मानव जीवन के प्रत्येक पहलू को एक नयी दृष्टि से देखा। उन्होंने शिक्षा प्रणाली को एकदम बदलने के अलावा बच्चों को पहली बार एक स्वतन्त्र व्यक्ति के रूप में स्वीकार किया। इस प्रकार गांधीजी ने बालक को एक विशिष्ट स्थान दिया। इस बीच बालशिक्षा के क्षेत्र में जिन गिने-चुने मनीषियों का उदय हुआ उनमें गिजुभाई के नाम से प्रसिद्ध गिरिजा शंकर भगवानजी बधेका (1885-1939) का नाम चिरस्मरणीय है। उनका बाल साहित्य बलिदान की कहानियों और स्वदेशप्रेम से ओतप्रोत रचनाओं का अक्षय भण्डार है। उसमें सर्वत्र राष्ट्रीयता के स्वर गूँजते मिलते हैं। इससे पहले गुजरात में जो बाल साहित्य लिखा गया वह अव्यवस्थित रूप में था। उन्होंने यह भी अनुभव किया कि बच्चों को श्रेष्ठ बाल साहित्य पढ़ने के लिए मिले इसके लिए यह आवश्यक है कि माता-पिता एवं शिक्षकों को भी प्रशिक्षण दिया जाए। इसके लिए सबसे पहले उन्होंने 'बच्चों को न मारें', 'बच्चों को न डरायें', 'माता-पिता बनना सरल नहीं' जैसे विषयों पर कई पुस्तकें लिखीं। उन्होंने नानाभाई भट्ट, जुगतराम भाई

दवे, ताराबेन मोडक और हरभाई त्रिवेदी के साथ मौलिक गुजराती बाल साहित्य एवं बाल शिक्षा का बुनियादी काम किया। गिजूभाई की लोकप्रियता का तो यह आलम था कि गुजराती बच्चे उन्हें मूछाली माँ (मूँछो वाली माँ) कहने लगे थे।[1]

सन् 1940 में बंबई के बालगोविन्द कार्यालय ने बालगोविन्द माला नाम से बाल पुस्तकों की एक शृंखला का प्रकाशन प्रारम्भ किया। 32 पृष्ठों वाली ये पुस्तकें दो रंगीन चित्रों के साथ प्रकाशित होती थीं और उनका मूल्य होता था मात्र चार आने। इन पुस्तकों के नये -नये संस्करण आज तक प्रकाशित हो रहे हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद बच्चों के लिए सरल और रोचक शैली में बाल रामायण, बाल महाभारत, बाल भागवत्, पंचतन्त्र, हितोपदेश और सरित्सागर की कहानियाँ प्रकाशित की गईं। कई अन्य भाषाओं की पुस्तकों के गुजराती में अनुवाद भी प्रकाशित हुए। विज्ञान, इतिहास आदि विषयों पर भी रंगीन चित्रों के साथ पुस्तकें प्रकाशित होने लगीं।

हरिप्रसाद व्यास द्वारा लिखित 'बकोर पटेल' नामक कहानी माला ने भी जबरदस्त धूम मचाई। बकोर पटेल एक ऐसा पात्र है जिसका सिर बकरे का और शरीर मनुष्य का है। उसकी पत्नी शकरी भी उसी की तरह है। ये कहानियाँ बुद्धि-चातुर्य के साथ-साथ विनोद और मनोरंजन का भी खजाना हैं।

1. गुजराती बाल साहित्य का क्रमिक विकास : गोपाल दास नागर (भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम पुस्तक से , पृ. 347)

गुजराती बाल साहित्य के पितामह जीवराम जोशी किसी भी भाषा के संभवतः इकलौते ऐसे बाल साहित्यकार हैं जिन्होंने बच्चों के लिए पाँच सौ से भी अधिक पुस्तकें लिखी हैं। इनमें कहानी, उपन्यास, नाटक, कविताएँ, बालगीत, यात्रा वर्णन आदि शामिल हैं। उन्होंने गुजराती में बाल साप्ताहिक पत्र की शुरूआत तो की ही इसके अलावा दैनिक पत्रों के साप्ताहिक परिशिष्टों में बाल साहित्य को स्थान दिलाने का श्रेय भी श्री जोशी को ही प्राप्त है। उनके बालपात्रों का आज भी कोई मुकाबला नहीं है। 'मियाँ फुसकी' शीर्षक से उन्होंने सैंकड़ों बाल कहानियाँ लिखीं जो दस खण्डों में प्रकाशित हुई। 'छका-मका', 'अकुड़िया-दकुड़िया' आदि भी उनके ऐसे ही पात्र हैं। कुछ अन्य लेखकों ने भी जोशी के पात्रों की नकल करने का प्रयत्न किया लेकिन उन्हें सफलता प्राप्त नहीं हुई।

इनके अलावा धूमकेतु, पन्नालाल पटेल, मकरन्द दुबे, रमणलाल सोनी, रमणलाल शाह, हरीश नायक, घनश्याम देसाई, विजयगुप्त मौर्य, श्रीकान्त त्रिवेदी, जशवंत मेहता, धीरूबैन पटेल, मयेक मेहता, मोहम्मद मांकड़, भगवत सुधार, प्रागजी डोसा, आबिद सुरती आदि लेखकों ने भी गुजराती बाल साहित्य के भण्डार को समृद्ध बनाने में अपना अमूल्य योगदान दिया है।

बाल पत्रिकाओं में 'रमकडु', 'गांडीव', 'झगमग', 'बाल संदेश', 'चमक', 'छुकछुक' आदि पत्रिकाओं ने उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि अतीत की भाँति गुजराती बाल साहित्य का भविष्य भी बहुत उज्ज्वल है।

पंजाबी बाल साहित्य

पंजाबी बाल साहित्य की चर्चा करते समय हमें यह ध्यान रखना होगा कि पंजाबी भाषी होने पर भी व्यवहार की दृष्टि से पंजाब में हिन्दी साहित्य का विपुल भण्डार पंजाब को भारत के अन्य अहिन्दी भाषी प्रदेशों की तुलना में पृथक पहचान प्रदान करता है। इसीलिए पंजाबी बाल साहित्य को तीन कोटियों में विभाजित करके देखना होगा - **क.** पंजाबी **ख.** हिन्दी **ग.** पंजाबी-हिन्दी से इतर भाषाएँ।

पंजाबी भाषा में बाल साहित्य का प्रकाशन निजी क्षेत्र से ही प्रारम्भ हुआ। अमृतसर में भावे दी हट्टी पुस्तकाँ वाले की ओर से सन् 1954 तक प्रो. देवदत्त गोपाल द्वारा रचित गोपाल बालपोथी, गोपाल बाल बोध एवं गोपाल पंजाबी लेख के साथ-साथ प्रो. प्रीतमसिंह द्वारा प्रणीत प्रीतम पंजाबी लेख प्रकाश में आ चुके था। उक्त प्रकाशन द्वारा परियाँ दा खूह (राजेन्द्र सिंह), चन्न मामा (चक्रधारी बेजर), तिन्न तारे (देवदत्त गोपाल) जैसी कृतियों के रूप में बाल साहित्य का प्रकाशन किया गया। यह उपयोगी और ललित बाल साहित्य की प्रारम्भिक अवस्था थी।[1] बाल साहित्य में युगपुरुषों की जीवनियों का अपना महत्व है। दर्शन, विज्ञान, कला आदि के साथ-साथ किसी समाज अथवा जाति को दिशा देने वाले क्रांतिदूत नयी पीढ़ियों के लिए आकाशदीप और पारसमणि

1. पजाबी बालसाहित्य : सुरेश चन्द्र वात्स्यायन (भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम पुस्तक से , पृ. 298)

सिद्ध होते हैं। पंजाबी बाल साहित्य में जीवनियों का विशाल भण्डार है। इस क्षेत्र में कृपालसिंह कृत महापुरखाँ दी बाललीला के समानान्तर खुशतर गिरामी की लिपि में साडा जवाहर, साडा पटेल, साडा सुभाष, साडा मालवीय, साडा लाजपतराय आदि जीवनियाँ बहुत चर्चित रहीं। दो प्रसिद्ध पंजाबी साहित्यकारों गोपालसिंह दर्दी और बलवन्त गार्गी ने 'प्रभात किरन्न' और 'प्रसिद्ध स्त्रियाँ' नाम की दो पुस्तकें दीं।[1] पहली पुस्तक में भगवान श्रीकृष्ण, तथागत बुद्ध और सिकन्दर की जीवनियाँ हैं, जबकि दूसरी पुस्तक में साहिब कौर, सदाकौर, रानी जिन्दी और अहिल्या की जीवन गाथाएँ हैं। पंजाबी बालगीतों को अपनी पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से पंजाब के शिक्षा विभाग ने भरपूर प्रश्रय और प्रोत्साहन प्रदान किया है। पंजाबी बाल साहित्य में बाल कहानियों का अपना अलग स्थान है। इन कहानियों की कथनी में राजा-रानी, हूरपरी, पशु-पक्षी से लेकर सामान्य घरों की दादियों-नानियों, साधु-संत-गुरु तक सब अपने-अपने रंग-ढंग से प्रकट होते रहे हैं।

'पंजाब के बाल नाटक साहित्य ने भास्कर कृत 'सच्चे सेवक' जैसी कृतियों से आरम्भ करके गुरदयाल सिंह फुल्ल जैसे ख्यातनामा नाटककारों की रचनाधर्मिता तक लम्बी यात्रा तय की है। फिल्म जगत, आकाशवाणी और दूरदर्शन जैसे माध्यमों ने बाल नाटक साहित्य को समूची रचनाधर्मिता की तरह

1. पजाबी बालसाहित्य : सुरेश चन्द्र वात्स्यायन (भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम पुस्तक से , पृ. 299)

कायाकल्प की जो ऐतिहासिक दिशा दी है वह रेखांकित करने योग्य है।'[1]

उपयोगी बाल साहित्य के विकास में भाषा विभाग पंजाब की जूनियर साइंस सीरीज के तहत टेलीफोन, पौधे, हवा, पेट्रोलियम, कोयला, पहिया, शीशा जैसे विषयों पर सरनसिंह, सुन्दर सिंह, निशानसिंह ढिल्लो, मनमोहनसिंह, इकबाल सिंह आदि को कलम चलाने का अवसर मिला।

सिन्धी बाल साहित्य

सिन्धी में पुस्तक प्रकाशन का आरम्भ 1853 के बाद हुआ। इसके पहले सिन्धी भाषा के लिए कोई निश्चित लिपि नहीं थी। सिन्धी भाषी लोग देवनागरी, गुरुमुखी तथा अरबी-पारसी लिपि का इस्तेमाल करते था। अंग्रेजों ने जब 1843 में सिन्ध पर अपना अधिकार जमाया, तब उन्होंने देवनागरी लिपि में कुछ पुस्तकों का प्रकाशन किया। कैप्टन जार्ज स्टैक की पुस्तक 'सिन्धी ग्रामर' (1849) में परिशिष्ट के रूप में कुछ कहानियाँ दी गईं जिनके लेखकों का पुस्तक के अन्दर कहीं भी उल्लेख नहीं था।[2]

सन् 1853 में सिन्ध के तत्कालीन चीफ कमिश्नर सर बार्टल फ्रेअर के प्रयत्नों से सिन्धी भाषा के लिए वर्णमाला और लिपि तय की गई। इसके बाद ही साहित्य की अन्य पुस्तकों के साथ बाल साहित्य का प्रकाशन भी प्रारम्भ हुआ।[3]

1. पजाबी बालसाहित्य : सुरेश चन्द्र वात्स्यायन (भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम पुस्तक से , पृ.302)

2. सिन्धी बाल साहित्य : हूंदराज बलवाणी (भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम से), पृ. 316

3. तदैव

सिन्धी भाषा के नये निश्चित स्वरूप को सिखाने के लिए 1853 में दीवना नन्दीराम सेवहाणी द्वारा लिखित 'बाबनामो' नामक एक पाठ्यपुस्तक प्रकाशित की गई। बाद में और भी पाठ्यपुस्तकें प्रकाशित हुईं जिनमें बच्चों के लिए छोटी-छोटी कहानियाँ तथा अन्य सामग्री रहती थी। शुरूआत में मौलिक बाल साहित्य के अभाव में अन्य भाषाओं की कहानियाँ अनूदित की गईं। ऐसी पहली अनूदित पुस्तक थी 'ईसप जूँ आखड़ियूँ' जिसे दीवान नन्दीराम ने 1854 में तैयार किया। अनुवाद का सिलसिल लम्बे समय तक चलता रहा। इसमें कई सुप्रसिद्ध रचनाओं के अनुवाद आते गए, जैसे- तोतेनामों (मुंशी उधारामा थाँवरदास- 1861), गुलबकावली (अहमद खान आजबाणी- 1890), बैताल कथाऊँ (गुरुदासमल क्रिपलाणी- 1890), अलिफ लैला (हाजी इमामबख़्श- 1894), हितोपदेश (झपटमल नारूमल) आदि। अस सन्दर्भ में मिर्जा क़लीच बेग का नाम विशेष रूप से लेना होगा जिन्होंने देश-विदेश के बाल साहित्य से चुन-चुनकर ढेर सारी पुस्तकें बच्चों के समक्ष रखीं।

दीवान कौड़ोमल चन्दनमल खिलनाणी प्रथम सिन्धी साहित्यकार थे, जिन्होंने एक मौलिक पुस्तक 'बाराणियूँ आखाड़ियूँ' (बाल कहानियाँ- 1891) लिखी। उनके द्वारा बच्चों के लिए लिखी गई पुस्तकों में 'टहिक ही टहिक', 'बाराणा गीत', 'सिन्धी गुझारतूँ' आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

सन् 1947 में देश को आजादी मिली तो विभाजन का दर्द भी साथ में मिला। सिन्धी भाषी लोग दो हिस्सों में बँट गए। हिन्दू सिन्धी सिन्ध की भूमि छोड़कर

भारत के कोने-कोने में बिखर गए। विभाजन का दर्द और पीड़ा अपने सीने में दबाये हुए पहले तो वे रोजी-रोटी की चिन्ता में यहाँ-वहाँ भटकते रहे और परिस्थितियों से जूझने की हिम्मत बटोरते रहे। जब वे धीरे-धीरे स्थिर होने लगे तब उन्होंने साहित्य की ओर भी ध्यान देना शुरू किया। शुरूआत में तो बाल साहित्य की ओर ध्यान कम दिया गया परन्तु बाद में इस ओर भी पर्याप्त प्रयास हुए। 'गुलिस्तान', 'फूलिस्तान', 'वीर बालक' आदि पत्रिकाओं ने अनेक नये रचनाकारों को जन्म दिया। मद्रास से विभिन्न भाषाओं में निकलने वाली पत्रिका 'चन्दामामा' सन् 1952 में सिन्धी (देवनागरी लिपि) में भी निकाली गई। रंगीन चित्र और चित्ताकर्षक छपाई के बावजूद यह पत्रिका अधिक समय तक नहीं चल सकी। उसी वर्ष बम्बई से अशोक किशोराणी ने 'टार्जन' का आरम्भ किया। इसमें बच्चों के लोकप्रिय नायक टार्जन की वीरतापूर्ण कहानियाँ छापी जाती थीं।

इसी दौरान अजमेर से पुष्पारानी बेदी के संपादन में 'गुलकारी' नामक एक बाल पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ, किन्तु ये दोनों पत्रिकाएँ कुछ वर्षों तक चलने के बाद बन्द हो गईं। अनेक पत्रिकाओं की अकाल मृत्यु के बावजूद सन् 1953 में अजमेर से 'फुलवारी' नामक एक और पत्रिका का प्रकाशन देवनागरी लिपि में प्रारम्भ किया गया। बाद में यह पत्रिका सिन्धी लिपि में भी शुरू की गई। यह बहुत बड़ी उपलब्धि है कि पिछले पचास वर्षों से यह पत्रिका निरन्तर प्रकाशित हो रही है। इस बीच कई अन्य पत्रिकाओं का प्रकाशन भी किया गया

किन्तु ऐसी सफलता अन्य किसी पत्रिका को नहीं मिल सकी।

वर्तमान में सिन्धी भाषा में अनेक योग्य लेखक साहित्य की लगभग सभी विधाओं में उच्च स्तरीय रचनाओं का सृजन कर रहे हैं। गुजरात साहित्य अकादमी द्वारा सिन्धी बाल साहित्यकारों को पुरस्कृत करने की जो योजना चलाई है उससे भी लेखकों का उत्साहवर्द्धन हुआ है।

मराठी भाषा का बाल साहित्य

मराठी बाल साहित्य का विकास मराठी मासिकों के माध्यम से हुआ है। मराठी का पहला मासिक विनायक कोडदेव ओक ने 'बालबोध' नाम से सन् 1892 में शुरू किया। ओक जी अकेले इस पत्रिका में लिखते था। 37 साल तक चली इस पत्रिका की विशेषता यह रही कि ओक ने इसके माध्यम से अकेले ही 444 निबन्ध, 444 कहानियाँ, 444 जीवनियाँ और 444 कविताएँ लिखीं।[1]

सन् 1906 में वा.गो.आपटे ने 'आनन्द' मासिक का प्रारम्भ किया। इससे मराठी बच्चों की दुनिया में सचमुच आनन्द आ गया। इसके बाद तो बाल पत्रिकाओं की एक लम्बी शृंखला है, जिन्होंने न केवल बच्चों का मनोरंजन किया बल्कि उनका ज्ञानवर्द्धन भी किया। मराठी बाल काव्य के क्षेत्र में जिन कवियों ने उल्लेखनीय योगदान दिया है उनमें मायदेव, ना.ग. लिमये, ज्ञानपीठ विजेता शिखाडकर, गोपीनाथ तलवलकर, भवानी शंकर पंडित, संजीवनी मराठे,शांताराम अठवले, श्रीबा. रानाडे आदि मुख्य हैं।

1. मराठी भाषा का बाल साहित्य : सुधाकर प्रभु , पृ. 352

शिशुकथा लेखन के क्षेत्र में मा.के. काटदरे, का.रा.पालवणकर, दे.ना.रिकक, श.रा.देवले, आशा गवाणकर, सुमति पायगांवकर, मालती बाई दांडेकर, पंठारीनाथ रेगे, आकाशानन्द, वि.म. घुले, वि.स. गवाणकर आदि ने उल्लेखनीय कार्य किया।

मराठी भाषा में उत्कृष्ट परीकथाओं, लोककथाओं और ऐतिहासिक साहस कथाओं के लेखन में दुर्गा भागवत, साने गुरुजी, वामन चोरघड़े, महादेव शास्त्री जोशी, बा.मो.कानिटकर, सुधाकर प्रभु, सविता जानीदिया, भ.द. खेर, अमरेन्द्र गाडगिल, शैलजा राजे, योगिनी जोगलेकर, नलिनी सहस्त्रबुद्धे, मुमताझ रहिमानपुरे, गजानन जौहरी, शंकर सारडा आदि ने अनेक नये आयाम रचे।

बालक कथा-कहानी, कविता, नाटक आदि के साथ-साथ सामान्य ज्ञान की पुस्तकें भी बड़े चाव से पढ़ते हैं। मराठी में बच्चों के लिए वि.आ. मोडक, द.के. केलकर, म.नि. आपटे, वि.कि. फड़के, राजा मंगल बेठेकर, पंढरीनाथ रंग जैसे लेखकों ने सरल भाषा में सामान्य ज्ञान की अत्यन्त उपयोगी पुस्तकों की रचना की है। निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि मराठी का प्रारम्भिक बाल साहित्य रंजनपक्षी बाल साहित्य था, बाद में भावपक्षी बाल साहित्य की लहर आई और आजकल ज्ञानलक्षी बाल साहित्य का दौर आया हुआ है। विद्यार्जन और चरित्र निर्माण को ध्यान में रखकर भी कई पुस्तकें तैयार हो रही हैं।

मलयालम भाषा का बाल साहित्य

मलयालम बाल साहित्य की मौखिक परम्परा काफी पुरानी रही है। मुद्रणकला के अस्तित्त्व में आने के पहले गीत और कहानी दो विधाएँ जारी थीं। यहाँ 'अक्षर श्लोकं' की परंपरा हिन्दी की अंताक्षरी जैसी रही है।

मलयालम बाल साहित्य की ऐतिहासिक झाँकी बड़ी रोचक है। केरल में मुद्रण कला के प्रारम्भ का श्रेय ईसाई धर्म प्रचारकों को जाता है। उन्होंने 'चेरु पैतंङ्ळ क्कुं उपकारार्थ इंग्लीषिल निन्नु परिभाषप्पेट्टुत्तिया कथकळ' (छोटे बच्चों के लाभार्थ अंग्रेजी से अनूदित कहानियाँ) नामक पुस्तक सन् 1824 ई. में छपवायी। अब इसकी एकमात्र प्रति लन्दन के ब्रिटिश म्यूजियम पुस्तकालय में उपलब्ध है।[1]

मलयालम बाल साहित्य के इतिहास में सन् 1867 ई. का वर्ष महत्वपूर्ण है। इस वर्ष त्रावणकोर रियासत के महाराजा ने मलयालम की पाठ्यपुस्तक समिति के रूपायन का आदेश दिया। स्कूलों के लिए स्तरीकृत मलयालम पाठमालाएँ, अपठित पुस्तकें आदि तैयार की गईं। इस प्रकार एक तरह से ठोस मलयालम बाल साहित्य रूपायित हुआ। लगभग 1900 से प्रारम्भ किया गया यह बाल साहित्य मुख्यतया दो प्रकार पुस्तकें प्रस्तुत करता था- एक तो अंग्रेजी में प्रकाशित प्रसिद्ध किशोर साहित्य का मलयालम पुनराख्यान था। गुलिवर की यात्राएं, सिन्दबाद की जहाज़ यात्रा, रॉबिन्सन क्रूसो आदि इनमें प्रमुख हैं। इसी

1. मलयालम बाल साहित्य : डॉ. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर, पृ. 363

तरह रामायण, महाभारत आदि के प्रसंगों का भी पुनराख्यान किया गया। कोट्टरत्तिल शंकुणि द्वारा आठ भागों में रचित 'ऐतिह्यमाला' में केरल की अनेक लोककथाएँ बड़े ही रोचक ढंग से कही गई हैं।

मलयालम बाल साहित्य में कविता, गीत, कहानी, लघु उपन्यास, लघु नाटक, जीवनी, ऐतिहासिक कथाएँ, यात्रा वर्णन आदि सभी विधाओं में प्रचुर मात्रा में श्रेष्ठ रचनाएँ उपलब्ध हैं। प्रथम ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता जी. शंकर कुरुप सुन्दर और रोचक बाल कविताओं के तीन संग्रह प्रस्तुत किये। उनके समकालीन कवि वैल्लोप्पिल्ल, पी. कुंजिरामन नायर, इटश्शेरी, अक्कित्तम, पाला नारायणन नायर आदि की बाल कविताएँ भी बहुत लोकप्रिय हुईं। व्यापारिक मांग बढ़ने से जब बाल कविता का क्षेत्र आर्थिक रूप से लाभकारी लगने लगा तो इस क्षेत्र में जोर-आजमाइश करने वालों की बाढ़ सी आ गई किन्तु ये जितनी तेजी से उगे था उतनी ही तेजी से गायब भी हो गए।

मलयालम के बाल नाटक की धारा अपेक्षाकृत कम विकसित है। पारसी रंगमंच और तमिलं रंगमंच के प्रभाव के युग में नाटक के प्रारम्भिक खंड में दो बालपात्रों द्वारा स्वागत गान जैसा होता था, बस। प्रारम्भिक नाटकों में कुट्टमनु रचित 'बाल गोपालम' प्रसिद्ध हुआ, किन्तु आधुनिक संकल्पना के अनुसार उसकी गणना बाल नाटकों में नहीं की जा सकती। सही अर्थो में बाल नाटकों की रचना स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ही हुई। प्रो. जी. शंकर पिल्लै ने पुष्पकिरीटं, गुरुदक्षिणा, मछलम आदि नाटक रचे। उनकी प्रेरणा और प्रभाव से

ही दक्षिण केरल के वेंजारमूड्डु गांव में रंग-प्रभात नामक बाल थियेटर का प्रयोग शुरू हुआ। यहाँ कई देशी-विदेशी निर्देशकों ने अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया।

मलयालम में सूचनात्मक एवं वैज्ञानिक बाल साहित्य भी खूब लिखा गया है। मलयालम बाल साहित्य की प्रमुख धारा के रूप में बाल पत्रिकाओं का स्थान भी बेहद महत्वपूर्ण है। यहाँ अधिकांश रचनाएँ पहले पत्रिकाओं में छपने के बाद ही पुस्तकाकार मुद्रित होती हैं। पहले केवल 'बालन' नामक बाल पत्रिका ही प्रकाशित होती थी। सच तो यह है कि तब बाल पत्रिका की संकल्पना थी ही नहीं। बाद में जब समाचार पत्रों ने बच्चों के लिए पृथक स्तम्भ प्रारम्भ किये और उनकी अच्छी प्रतिक्रिया प्राप्त हुई तो बाल पत्रिकाएँ निकालने की पहल की गई। मलयालम बाल साहित्य के क्षेत्र में लेखकों की कमी नहीं है, आवश्यकता है तो उचित अवसर और पर्याप्त प्रोत्साहन की।

....

....

पंचम अध्याय

बाल साहित्य की विभिन्न विधायें और विधाकार

पंचम अध्याय

बाल साहित्य की विविध विधाएँ और विधाकार

जहाँ तक बाल साहित्य के विधागत वर्गीकरण का प्रश्न है तो यह कहा जा सकता है कि साहित्य बड़ों का हो या बच्चों का, दोनों की विधाएँ लगभग एक समान हैं। हिन्दी बाल साहित्य गद्य और पद्य की सभी विधाओं, यथा - गीत, कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, निबन्ध, संस्मरण, यात्रा वृतान्त, रेखाचित्र, जीवनी, पहेली आदि में लिखा गया है। सुयोग्य लेखकों ने इन विधाओं में प्रचुर मात्रा में सृजन किया है। इस अध्याय में हम इन विधाओं में उपलब्ध बाल साहित्य और उसके रचयिताओं का संक्षिप्त आकलन करेंगे।

बाल कविता/गीत

बच्चों के सरल और मासूम मन को सबसे ज्यादा आकर्षित गीत या कविताएँ ही करती हैं। इसीलिए बच्चों का आदि साहित्य अर्थात लोरियाँ और प्रभातियाँ इसी विधा में हैं। चींटी से लेकर ब्रह्माण्ड तक ऐसा कोई भी विषय नहीं है जिस पर मनीषियों की कलम से कविता निसृत न हुई हो। प्रारम्भ में बाल कविता के विषय सीमित था। ज्यादातर कविताएँ या तो ईश्वर की प्रार्थना

के रूप में लिखी गई या फिर पशु, पक्षी, सूरज, चाँद, सितारे आदि उनका वर्ण्य विषय रहे। स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले तक राष्ट्रीय भावनाएँ जागृत करने वाले बालगीत भी खूब लिखे गए किन्तु तब भी ज्यादा जोर नैतिक मूल्यों एवं सद्गुणों का विकास करने वाले बालगीतों पर ही था।

स्वतंत्रता के तुरन्त बाद का समय परिवर्तन का समय था। इस परिवर्तनकारी दौर में बाल कविताओं के विषय बदले, छन्द बदले, छन्दों के बन्ध बदले, स्वर बदले। निरर्थक- किन्तु बच्चों के लिए सार्थक- तुकवाले पद (नानसेन्स राइम्स) और ध्वनि पदों को गुनगुनाते हुए हर वर्ग के बच्चों को देखा जा सकता था। लोरियाँ और प्रभातियाँ भी नये सिरे से लिखी जाने लगीं। यह वह दौर था जब भारत के नवनिर्माण का सपना हर भारतीय के मन में पल रहा था, इसीलिए बाल कविताओं में भी राष्ट्रनिर्माण का जोश झलकने लगा।

वैसे तो हिन्दी में बालोपयोगी कविता लिखने वाला प्रथम कवि अमीर खुसरो को माना जाता है, परन्तु बाल स्वभाव का सहज और मोहक चित्रण करने वाले पहले कवि असंदिग्ध रूप से सूरदास ही हैं। इस प्रकार कहने को हिन्दी बालगीतों के इतिहास को चार सौ वर्ष पुराना कहा जा सकता है परन्तु 'बालगीत की वर्तमान कसौटी पर खरी उतरने वाली जो प्रथम कविता उपलब्ध है वह है भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की 'चने का लकटा'।[1] श्रीधर पाठक (1860-1928) से पूर्व हम किसी भी हिन्दी कवि की कविताएँ विशेष रूप से बच्चों के

1. बालगीत साहित्य : निरंकार देव सेवक, पृ. 143

लिए लिखित स्वरूप में नहीं पाते।'[1] उनकी भी अधिकांश बालोपयोगी कविताएँ सन् 1900 के बाद ही लिखी गईं अतः यह मान लेना चाहिये कि सही अर्थों में हिन्दी बालगीत लेखन की शुरूआत इसके बाद ही हुई।

सन् 1914 में प्रथम विश्वयुद्ध का प्रारम्भ हुआ। पराधीनता की बेड़ियों में जकड़े भारत का यद्यपि युद्ध से कोई सीधा सरोकार नहीं था परन्तु अंग्रेजो का सहयोग करने के कारण परोक्ष रूप से वह भी युद्ध में शामिल हो ही गया था। इसका सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि अनेक देशों के लोगों के सम्पर्क में आने और देश-विदेश घूमने के कारण तत्कालीन साहित्यकारों का दृष्टिकोण व्यापक हो गया। इस काल की हिन्दी कविता दो प्रवृत्तियों में विभाजित हो गई- एक तो स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति और दूसरी राष्ट्रीय भावना की प्रवृत्ति। श्रीधर पाठक पहली प्रवृति के कवि थे। अंग्रेजी साहित्य के अध्ययन का उन पर और उनकी शैली पर पर्याप्त प्रभाव था। गोपाल शरण सिंह, जगमोहन सिंह, रामनरेश त्रिपाठी आदि कवियों ने भी इसी शैली को अपनाया। दूसरी प्रवृति का प्रतिनिधित्व राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त और अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' कर रहे थे। हिन्दी बालगीत भी इन्हीं प्रवृत्तियों की छाया में पनपा।

श्रीधर पाठक, अयोध्या सिंह उपाध्याय एवं मैथिलीशरण गुप्त के अलावा जिन रचनाकारों ने बालगीतों के सृजन में उल्लेखनीय कार्य किया, उनमें से प्रमुख हैं- कामता प्रसाद गुरु, रामजीलाल शर्मा, मन्नन द्विवेदी 'गजपुरी',

1. बालगीत साहित्य : निरंकार देव सेवक, पृ. 144

रामनरेश त्रिपाठी, डॉ. विद्याभूषण विभु, मुरारीलाल शर्मा 'बालबन्धु', देवी प्रसाद गुप्त 'कुसुमाकर', गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश', मनोरंजन प्रसाद सिन्हा, ठाकुर श्रीनाथ सिंह, शम्भूदयाल सक्सेना, स्वर्ण सहोदर आदि। बीसवीं सदी के प्रथम दो दशकों में उपरोक्त कवि बालगीतों के दैदीप्यमान नक्षत्र थे।

अगले बीस साल बाल साहित्य के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन के साल थे। प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद देश में राजनीतिक हलचलों का एक नया दौर शुरू हुआ। स्वाधीनता आन्दोलन अपने चरमोत्कर्ष पर था। बालगीत साहित्य के लिए भी यह काल बहुत महत्वपूर्ण रहा। देश के विभिन्न हिस्सों से अनेक बाल पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। इस काल के बालगीत की भाषा भी पहले की अपेक्षा अधिक परिमार्जित हुई। उनके विषय भी पहले से अधिक विस्तृत हो गए। शिक्षा और उपदेश मात्र ही बालगीतों की रचना के प्रमुख उद्देश्य नहीं रह गए। राष्ट्रीय भावना भी पहले से कहीं अधिक प्रच्छन्न और सुन्दर रूप में इन बालगीतों में परिलक्षित हुई है।

इस समय के प्रमुख कवियों में रामसिंहासन सहाय 'मधुर', सुभद्रा कुमारी चौहान, ज्योति प्रसाद 'निर्मल', बलभद्र प्रसाद गुप्त 'रसिक', सोहनलाल द्विवेदी, विश्व प्रकाश 'कुसुम', रामदेव सिंह 'कलाधर', बाबूलाल भार्गव 'कीर्ति', गौरीशंकर 'लहरी', रमापति शुक्ल, त्रिभुवननाथ 'नाथ', देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त', आरसी प्रसाद सिंह, रामेश्वरदयाल दुबे, अब्दुल रहमान सागरी, सुमित्रा कुमारी सिन्हा, शकुन्तला सिरोठिया, रामावतार यादव 'शक्र',

सत्यप्रकाश कुलश्रेष्ठ, प्रह्लाद नारायण रायजादा, डॉ.रामकुमार वर्मा, रामधारी सिंह दिनकर, हरिवंशराय बच्चन, वीरेश्वर सिंह, विद्याभास्कर शुक्ल, अनन्तराम तिलवार, टीकाराम सिंह 'अंशुमाली', लक्ष्मीकान्त झा, विक्रमादित्य सिंह 'विक्रम', विद्यावती कोकिल, शंकरदेव विद्यालंकार, रामाशंकर जैतली, नरेन्द्र मालवीय, शिक्षार्थी, नर्मदा प्रसाद खरे, रामेश्वर प्रसाद गुरु 'कुमारहृदय', रामगोपाल रुद्र, कमला चौधरी आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनमें से कई कवियों की तो अनेक पुस्तकें अच्छे प्रकाशन के अभाव में प्रकाशित ही नहीं हो सकीं।[1]

सन् 1939 में प्रारम्भ हुए द्वितीय विश्व युद्ध ने देश के राजनीतिक और सामाजिक जीवन को झकझोर कर उसमें बहुत से परिवर्तन ला दिये थे। सन् 1942 का विद्रोह ब्रिटिश सरकार को उखाड़ फेंकने में भले ही कामयाब न हो सका किन्तु उसने समकालीन लेखकों में एक नई चेतना और जोश का संचार तो कर ही दिया था। 1945 में परमाणु बम के विस्फोट ने जापान के हिरोशिमा और नागासाकी नामक शहरों को पूरी तरह नेस्तनाबूद कर दिया था। अन्तत: 1947 में भारत आजाद हो गया। इस काल में भाषा-शैली की दृष्टि से बालगीत ने बहुत विकास किया।[2] ये मनोवैज्ञानिक दृष्टि से बच्चों के मन के पास और उनकी भावनाओं और कल्पनाओं के अपेक्षाकृत अधिक निकट हैं। बड़ों की

1. बालगीत साहित्य : निरंकार देव सेवक, पृ. 145
2. तदैव

कविता की देखादेखी अतुकान्त छन्द में भी बच्चों के लिए कविताएँ लिखी जाने लगीं, परन्तु वे बहुत अधिक लोकप्रिय नहीं हो सकीं।

इस काल में प्रमख रूप से रामकृष्ण खद्दरजी, द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी, डॉ. सुधीन्द्र, शिवदत्त शर्मा, ब्रजकिशोर नारायण, निरंकारदेव सेवक, शान्ति अग्रवाल, बन्धुरत्न, अशोक एम.ए., कृष्णकान्त तैलंग, दीनदयाल उपाध्याय, चन्द्रपाल सिंह यादव 'मयंक', प्रेमनारायण, कामिनी दीदी, रामावतार चेतन, राधेश्याम सक्सेना 'रसिकेश', विश्वदेव शर्मा, चिरंजीत, रामवचन सिंह आनन्द, श्रीप्रसाद, विष्णुकान्त पाण्डेय, राष्ट्रबन्धु, विनोद चन्द्र पाण्डेय, हरिकृष्ण देवसरे, बाबूलाल शर्मा 'प्रेम', विजय कृष्ण तैलंग, प्रतीश रंजन गुप्त, रामभरोसे गुप्त 'राकेश', लक्ष्मीदेवी 'चन्द्रिका', रघुवीर शरण 'मित्र', महेन्द्र भटनागर, धर्मपाल शास्त्री, सत्यप्रकाश मिलिन्द, गंगा प्रसाद 'कौशल', सुरेश दुबे 'सरस', देवेन्द्र दत्त तिवारी, रामजन्म सिंह 'शिरीष', आचार्य अज्ञात, लाला जगदलपुरी, कपिल, गौरीशंकर 'अंजलि',शंभूदयाल चतुर्वेदी, विश्वनाथ गुप्त, सरस्वती कुमार 'दीपक', सैयद राशिद अली, हजारीलाल श्रीवास्तव 'अधीर', वेणीमाधव शर्मा, हरिदयाल चतुर्वेदी, प्रेम बहादुर 'प्रेमी', उमाशंकर वर्मा, सुरेश कुमार 'सुमन', मनोरंजन सहाय श्रीवास्तव, सुधाकर पांडेय, वीरेन्द्र मिश्र, शान्ता सन्त, दयाशंकर मिश्र 'दद्दा', लक्ष्मी नारायण टण्डन, हरिकृष्णदास गुप्त 'हरि', अशोक कुमार सूरी, आशाकान्त बी. आचार्य, व्यंकटेश चन्द्र पांडेय,

नारायण लाल परमार, जगदीश चन्द्र शर्मा आदि ने प्रचुर मात्रा में बालगीतों की रचना की ।[1]

इस समय तक बालगीतों की रचना बड़े वेग से की जाने लगी थी । भाषा, शैली और विषयों की व्यापकता की दृष्टि से भी बालगीत निरन्तर उन्नत और समृद्ध होता चला गया । प्रकाशकों को भी यह अनुभव होने लगा था कि बालगीतों की पुस्तकों का प्रकाशन उनके लिए आर्थिक रूप से बहुत लाभकारी सिद्ध हो सकता है । इन सबका समग्र परिणाम यह हुआ कि बाल साहित्य बहुत बड़े परिमाण में तो प्रकाशित होने लगा किन्तु साथ ही साथ उसमें उत्कृष्टता का अभाव भी परिलक्षित होने लगा ।[2]

सातवें दशक के बाद जिन कवियों ने बाल गीतों को नई दिशा प्रदान की और उसे बुलन्दियों के उच्चतम शिखरों तक पहुँचाया उनमें डॉ. रमाकान्त श्रीवास्तव, प्रेमनारायण गौड़, युगकवि डॉ. रामस्वरूप खरे, रवीन्द्र कुमार 'राजेश', रुद्रनाथ पांडेय, जयप्रकाश भारती, जगदीश चन्द्र शर्मा, गणेशदत्त सारस्वत, प्रेमदत्त गुप्त 'विशाल', सैलानी सियोते, डॉ. मुनिलाल उपाध्याय 'सरस', सुन्दर लाल 'अरुणेश', डॉ. प्रतीक मिश्र, डॉ. महेश दिवाकर, राधेश्याम आर्य, रमाकान्त मिश्र 'स्वतंत्र', भगवती प्रसाद द्विवेदी, डॉ. अजय जनमेजय, रामनारायण त्रिपाठी 'पर्यटक', अखिलेश श्रीवास्तव 'चमन', डॉ.

1. बालगीत साहित्य : निरंकार देव सेवक, पृ. 153
2. भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम : सं. विनोद चन्द्र पांडेय, पृ. 147

रोहिताश्व अस्थाना, डॉ. सुरेन्द्र विक्रम, डॉ. अनिल चौधरी, सुनील जोगी आदि के नाम अग्रगण्य हैं।

बाल कहानी

गीत और कविता के बाद बच्चों के लिए सबसे अधिक हृदयग्राही विधा कहानी ही है। जिस प्रकार गीतों का प्रचलन मौखिक रूप से हुआ था उसी प्रकार बच्चों की कहानियों की शुरूआत दादी-नानी द्वारा सुनाई जाने वाली कहानियों से होती है। इन कहानियों में शिल्पकौशल भले ही न हो परन्तु बच्चों को कुछ न कुछ सिखाने की क्षमता अवश्य निहित होती थी। किस्सागोई की यह परम्परा आज भी जीवित है, लेकिन घरों के सिमटते आकारों ने दादी-नानी की महत्ता को बहुत कम कर दिया है।[1]

हिन्दी विश्व की संभवतः इकलौती ऐसी भाषा है जिसके पास 'पंचतंत्र', 'कथासरित्सागर', 'जातक कथाएँ', 'सिंहासन बत्तीसी' और 'बेताल पच्चीसी' जैसी अक्षय कथानिधियाँ हैं। इनकी कहानियों ने बच्चों और बड़ों का समान रूप से मनोरंजन किया है। बच्चों ने इन्हें सरल भाषा में सुना। सुनने-सुनाने की इस प्रक्रिया में ये कहानियाँ थोड़ी-बहुत बदलती भी गईं। जीवन के अनुभवों, सुनी हुई कथाओं और आख्यानों ने लोककथाओं का रूप भी ले लिया। फिर भी भारतीय कथाओं का भंडार कम न हुआ बल्कि वह तो बढ़ता ही गया।[2]

1. हाशिये पर खड़ी दादी : ब्रह्मानन्द (दैनिक नई दुनिया- 14 नवम्बर 1999)

2. बच्चों की सौ कहानियाँ : सं. हरिकृष्ण देवसरे (आमुख भाग से)

बच्चों के लिए अलग से सरल भाषा में, उनकी रुचि, उनके मनोविज्ञान, समाज और परिवेश के अनुकूल कथाएँ लिखी जाएँ- इस बात की आवश्यकता एक अरसे से महसूस की जा रही थी। इस दिशा में हुए प्रयासों ने हिन्दी में बाल कहानी के पृथक अस्तित्त्व को जन्म दिया। प्रारम्भिक उपलब्धियों से लेकर वर्तमान स्वरूप तक पहुँचने की हिन्दी बाल कहानी की विकास यात्रा की कहानी भी कम दिलचस्प नहीं है।

द्विवेदीपूर्व युग तक बल्कि कुछ हद तक द्विवेदी युग में भी जहाँ भारतीय कथाग्रंथों की पारंपरिक कहानियाँ अधिक प्रचलित थीं वहीं विदेशी कथाएँ जैसे अलिफ-लैला की कहानियाँ, गुलीवर और ग्रिम की कथाएँ भी प्रचलित थीं। अकबर-बीरबल, गोनू झा, बुलाकीराम नाई, लालबुझक्कड़ तथा तेनालीरामन् के किस्सों का अपना अलग ही अन्दाज था।[1] द्विवेदी युग में जब बच्चों के लिए स्वतंत्र कथालेखन पर बल दिया गया तब सबसे अधिक पौराणिक कहानियाँ प्रस्तुत की गईं। स्वयं आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने महाभारत और रामायण की कहानियाँ लिखीं। यह और बात है कि उनकी पांडित्यपूर्ण भाषा पूरी तरह से बच्चों के अनुरूप नहीं बन पाई। 'शिशु' और 'बालसखा' जैसी पत्रिकाओं के प्रकाशन से यह कमी तो दूर हुई किन्तु इन पत्रिकाओं में भी प्राचीन कथाग्रंथों की कहानियाँ ही अधिक रहती थीं।[2] मुंशी प्रेमचन्द ने

1. हिन्दी बाल कहानी : आवश्यक बातें : चित्रेश (भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम से, पृ. 119)

2. बच्चों की सौ कहानियाँ : सं. हरिकृष्ण देवसरे (आमुख भाग से)

हालाँकि बच्चों के लिए बहुत थोड़ी कहानियाँ लिखीं किन्तु उनकी मौलिकता ने बाल साहित्य को नई दिशा दी। बाद के लेखकों में बच्चों के लिए रोचक और मौलिक कहानियाँ लिखने की दिशा में शेख नईमुद्दीन मास्टर, हंसकुमार तिवारी, बाबूलाल भार्गव आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। पं. श्रीराम शर्मा ने शिकार की कहानियाँ लिखीं और जहूरबख्श ने मनोरंजक कहानियाँ। इन सभी कहानियों के दो ही मुख्य उद्देश्य था- एक तो बच्चों का मनोरंजन और दूसरे उनका चरित्र निर्माण।

स्वतंत्रता प्राप्ति के तुरन्त बाद भी बाल कथा साहित्य में कोई उल्लेखनीय गति दृष्टिगत नहीं हुई। राजा-रानी, भूत-प्रेत, परियाँ-जादूगर और पशु-पक्षी ही कहानियों के प्रमुख पात्र बने रहे। 1949 में हरिशंकर परसाई की एक कहानी 'मुन्नू की स्वतंत्रता' प्रकाशित हुई, इसमें पहली बार बाल मन की बातों को सहज अभिव्यक्ति मिली। बालकहानियों में आधुनिक बोध सन् 60 के बाद ही प्रकट हुआ। बाल पत्रिकाओं 'बालसखा' और 'पराग' ने इस दिशा में स्तुत्य प्रयास किये। भूपनारायण दीक्षित, हरिकृष्ण तैलंग, बादल कुमार बनर्जी आदि ने 'बालसखा' में प्रायोगिक और मौलिक कहानियाँ लिखीं। 'पराग' ने तो नई बालकथाओं की रचना के लिए एक आन्दोलन ही छेड़ दिया।[1]

सातवें दशक में अवतारसिंह, हरिकृष्ण देवसरे, मनहर चौहान, मस्तराम कपूर 'उर्मिल', हसन जमाल छीपा, हमीदुल्ला खाँ, शीला इन्द्र आदि ने अनेक

1. बच्चों की सौ कहानियाँ : सं. हरिकृष्ण देवसरे (आमुख भाग से)

मौलिक रचनाएँ दीं। 'धर्मयुग' के बालजगत ने भी अनेक प्रायोगिक क़थाएँ प्रकाशित कीं। राजेश कुमार जैन और सत्यस्वरूप दत्त ने जासूसी कहानियों में तो मनहर चौहान, मालती जोशी आदि ने मनोवैज्ञानिक बाल कहानियों के लेखन में कई नये और सार्थक प्रयोग किये।

इसी बीच परीकथाओं और राजा-रानी की कहानियों के विरोध में अभियान भी चलाए गए फिर भी नन्दन और चन्दामामा जैसी पत्रिकाएँ अनवरत अपने पुराने ढर्रे पर ही निकलती रहीं। अब तक बालपाठकों में नया भावबोध जागृत होने लगा था। उसने नई बालकथाओं में अपने मन की भावनाओं को प्रतिबिम्बित पाया।

बालकथा अभियानों के परिणामस्वरूप बालकहानियाँ परम्परागत लीक से हटकर मौलिक और आधुनिक परिवेश की सर्जनात्मकता की ओर अग्रसर हुईं और वे बालपाठकों की रुचियों तथा समस्याओं से सीधे जुड़ने में समर्थ हुईं। बच्चों के लिए पृथक कहानियाँ सृजित करने की आवश्यकता को तत्कालीन बड़ों के लेखकों ने भी अनुभव किया। इसी के फलस्वरूप जयशंकर प्रसाद (बालक चन्द्रगुप्त), सियाराम शरण गुप्त (बैल की बिक्री), पं. श्रीराम शर्मा (बाघ से भिड़न्त और रोमांचकारी कुश्ती) और मोहनलाल महतो 'वियोगी'(लोहार और तलवार) ने कई चर्चित कहानियाँ लिखीं। इसी समय सुखराम चौबे 'गुणाकर', वृन्दावनलाल वर्मा, रा.र. सर्वटे, शालिग्राम वर्मा आदि ने भी बच्चों के लिए कहानियाँ लिखीं। हिन्दी के जिन कथाकारों ने पूरी

लगन और निष्ठा से बाल साहित्य की भी सेवा की, उनमें पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का स्मरण बड़े आदर से किया जाता है। उन्होंने बच्चों के लिए 'दौड़' जैसी मनोवैज्ञानिक और मर्मस्पर्शी कहानी लिखी तो 'हीरे की आत्मकहानी' जैसे शैलीगत प्रयोग भी किये। इसी प्रकार विष्णु प्रभाकर की 'बाबूजी बरात में' जैसी कहानियाँ बच्चों को गुदगुदाती हैं तो उनकी भावनाओं को भी मुखर बनाती हैं। 'एटमबम बनाया' जैसी कहानी के लेखक अवतार सिंह अगर असमय ही दिवंगत न हुए होते तो उनसे निश्चित रूप से कई श्रेष्ठ कहानियाँ बाल कथा साहित्य को मिलतीं।[1]

नीति की बातें दो टूक शब्दों में नीरस ढंग से की जाएँ तो बच्चों को हजम नहीं होतीं, इसीलिए पंचतंत्रकार से लेकर अब तक नीतिज्ञान देने के लिए कथाओं को ही माध्यम बनाया गया है। इस दिशा में श्रीकृष्ण (चोरी का प्रायश्चित), श्रीव्यथित हृदय (बड़ों की बात, खरगोश की एक और रेस), संतराम वत्स (अभ्यास का महत्व), सत्य जैसवाल (आजादी का सवाल) आदि ने उल्लेखनीय प्रयास किये हैं। सत्तर के दशक के बाद बाल कहानियों की संख्या में अप्रत्याशित वृद्धि हुई। बच्चों की समस्याएँ, माता-पिता, भाई-बहन, मित्र, पड़ौसी और पूरे समाज से बच्चों के सम्बन्धों को लेकर रोचक कहानियाँ लिखी गईं।[2] इनमें मनहर चौहान (तीन मजाक एक रहस्य, चल पालनपुर), मालती

1. बच्चों की सौ कहानियाँ : सं. हरिकृष्ण देवसरे (आमुख भाग से)
2. तदैव

जोशी (मेहमान की वापसी), शांति मेहरोत्रा (मुसीबत है बड़ा भाई होना), मोहन राकेश (सुनहरा मुर्गा, काला बंदर, लाल अमरूद का पेड़), भीष्म साहनी (दोस्त कहूँ या दुश्मन), चन्द्रगुप्त विद्यालंकार (पहला विद्रोही), राजेन्द अवस्थी (तमाचा), शरद जोशी (क्या खोया क्या पाया), राजेन्द्र यादव (पिटाई का एक दिन), उपेन्द्र नाथ अश्क (लाल आँखे) आदि की रचनाएँ विशेष रूप से उल्लेखनीय है।[1]

बच्चों के लिए इतिहास कथाओं और साहस व शौर्य गाथाओं का विशिष्ट महत्व होता है। इस क्षेत्र में भी कई उल्लेखनीय रचनाओं का प्रणयन हुआ। अक्षय कुमार जैन ने परमवीर सेनानियों की कथाएँ (मेजर शैतान सिंह, सूबेदार जोगिन्दर सिंह) लिखीं, विनोद विभाकर ने भी शौर्यगाथाओं को प्रस्तुत किया। यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' ने राजस्थान के वीरतापूर्ण इतिहास की अनेक कथामणियाँ बालपाठकों को दीं। ऐतिहासिक कहानीकारों में गोकुल चन्द्र, कृष्ण श्रीवास्तव, मनहर चौहान, लक्ष्मीनारायण लाल, सुनीता कुट्टी, रामाधार सत्यार्थी, मनोहरलाल वर्मा, वृन्दावनलाल वर्मा, गोपालदास नागर, शिवकुमार गोयल आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेख्य हैं। किसी भी देश के महापुरुष ही उस देश के इतिहास और संस्कृति के संरक्षक होते हैं। अनन्त ने अपनी पुस्तक 'इतिहास नहीं भूलेगा' में भारत के ऐसे ही महापुरुषों को आधार बनाकर अनेक रोचक कहानियाँ लिखीं।

1. कहानी की विकास यात्रा : ब्रह्मानन्द (नवभारत- 11 जून 2002)

साहस और वीरता की कहानियाँ बच्चों को कुछ कर गुजरने की प्रेरणा देती हैं। इसी प्रेरणा के बल पर वे कठिन से कठिन कार्य को भी सरलता से कर सकते हैं। साहसिक कहानियाँ मनोरंजन तो करती ही हैं साथ ही वे बच्चों में विषम से विषम से परिस्थितियों से जूझने की क्षमता भी उत्पन्न करती हैं। इस विधा के कथाकारों में मनमोहन सरल, आत्मानन्द, बालबन्धु, दयाशंकर दद्दा, शिवकुमार, रमेश नारायण, राजेश कुमार जैन, श्रीकान्त व्यास, योगेन्द्र कुमार लल्ला आदि के नाम अग्रगण्य हैं।

बच्चों के लिए वैज्ञानिक फंतासियों की कहानियाँ भी खूब लिखी गई हैं। विज्ञान ने जीवन के हर क्षेत्र में अपनी महत्ता स्थापित कर ली है। विज्ञान की जानकारी देने के लिए यदि मात्र तथ्यों का ही प्रयोग किया जाये तो बच्चे उसे आत्मसात नहीं कर सकेंगे। इस जटिल और नीरस विषय को भी कहानी का रूप देकर रोचक बनाया जा सकता है। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व जहाँ ऐसी कहानियों का अकाल था वहीं स्वातंत्र्योत्तर काल में वैज्ञानिक कहानियों का खूब सृजन हुआ। वैज्ञानिक कहानियाँ लिखने वालों में डॉ. गोरखप्रसाद, जयप्रकाश भारती, राजेश दीक्षित, सुरेश सिंह, श्रीनाथ सिंह, तारकेश्वर शर्मा, आनन्द प्रकाश जैन, सैन्नी अशेष, डॉ. ओमप्रकाश सिंहल, हरिकृष्ण देवसरे आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।[1] सैन्नी अशेष की कहानी 'अंतरिक्ष में डकैती' ऐसे बच्चों की कहानी है जो अंतरिक्ष में खोये मित्रों को बड़ी वीरता से ढूंढ़कर लाते हैं।

1. बच्चों की सौ कहानियाँ : सं. हरिकृष्ण देवसरे (आमुख भाग से)

देवसरे की कहानी 'विश्वासघात' में यह सिद्ध किया गया है कि मनुष्य के लिए भौतिक सुविधाएँ जुटाने वाला विज्ञान कभी-कभी अभिशाप भी सिद्ध हो सकता है। डॉ. बैनर्जी का फार्मूला अंतरिक्ष की सैर के लिए था किन्तु उनका सहायक प्रेम कालरा उसका इस्तेमाल चोरी के लिए करता है। डॉ. सिंहल की 'राज की बात' में यह बताया गया है कि सस्ते भोजन से भी हम ऐसे पोषक तत्व प्राप्त कर सकते हैं जिनसे हमारा जीवन चुस्त-दुरुस्त रहे।

हिन्दी साहित्य के प्रारम्भिक काल में पशु-पक्षियों का उपयोग कथावाचक के रूप में किया जाता रहा है। इन कहानियों के पशु-पक्षी मनुष्य की भाषा में बोलते हैं। इन कहानियों का मूल स्त्रोत प्राय: कोई लोककथा ही होती है। इस वर्ग के कहानीकारों में रामनारायण उपाध्याय, भगवतसिंह, मुबारक अली, नर्मदाप्रसाद मिश्र, जगदानन्द झा आदि प्रमुख हैं।

बाल साहित्य का सर्वाधिक समृद्ध पक्ष लोककथाओं का है। ये किसी भी देश या समाज विशेष की सर्वांगीण झाँकी प्रस्तुत करती हैं। कमल शुक्ल की 'उत्तर प्रदेश की लोककथाएँ', शिवमूर्ति सिंह वत्स की 'भोजपुरी की लोककथाएँ' तथा नारायणलाल परमार की 'छत्तीसगढ़ की लोककथाएँ' मनोरंजक होने के साथ ही शिक्षाप्रद भी हैं। संतराम की 'पंजाब की लोककहानियाँ' में संग्रहीत कहानियों में चमत्कारिक घटनाओं की प्रधानता है। कृष्णलाल हंस के संग्रह 'आकाश दानी दे पानी' में गढ़वाली लोककथाओं पर आधारित उपदेशात्मक कहानियाँ हैं।

बाल साहित्य में हास्यकथाओं का भी लम्बा सिलिसिला है। इन कथाओं के प्रचलन का उद्देश्य यही था कि बच्चे मनोरंजन के साथ-साथ कुछ शिक्षा भी ग्रहण करें। आरम्भ में तेनालीराम और बीरबल के किस्से ही इन कहानियों का आधार रहे, परन्तु बाद में लेखकों ने इस दिशा में भी मौलिक प्रतिभा का परिचय दिया और कई नये लोकप्रिय पात्रों का सृजन किया। आनन्द कुमार ने 'चार दिन की चाँदनी' तथा 'गुरु जी बुरे फंसे' जैसी बहुचर्चित कहानियाँ लिखीं तो शैलेश मटियानी की 'ईश्वर की मिठाई' तथा श्रीकृष्ण की 'मुफ्त की अक्ल' को भी बच्चों ने खूब पसन्द किया। गिरिराज किशोर ने 'सोने की गुड़िया', जगन्नाथ प्रसाद प्रभाकर ने 'लाल बुझक्कड़', नारायण दत्त पांडेय ने 'मूर्खों की दुनिया', मनोहर वर्मा ने 'तमाशे में तमाशा' जैसी कहानियाँ लिखकर इस परम्परा को आगे बढ़ाया।

बाल साहित्य में परीकथाओं का महत्व सदा से ही रहा है। इनको अलग करके बाल कहानियों की चर्चा मुकम्मल हो ही नहीं सकती। चमत्कारों से भरी ये कहानियाँ यद्यपि पूरी तरह कपोल कल्पना पर ही आधारित होती हैं लेकिन ये बच्चों का भरपूर मनोरंजन करने के साथ-साथ उनकी कल्पना शक्ति को भी उर्वर बनाती हैं। किन्तु अब बच्चों को केवल अलौकिकता के आधार पर संतुष्ट नहीं किया जा सकता, इसीलिए वर्तमान लेखकों ने पुरानी लीक से हटकर बीच का रास्ता अपनाया है।[1]

1. कहानी की विकास यात्रा : ब्रह्मानन्द (नवभारत- 11 जून 2002)

प्रकाश मनु की कहानी 'लौट आओ माँ' किसी अलौकिक परीलोक की कहानी न होकर हमारी इसी धरती की कहानी है। इसमें यह बताया गया है कि धरती का प्रेम, वात्सल्य और सौन्दर्य अलौकिक परियों को भी आकर्षित करती हैं। देवेन्द्र कुमार की 'जागने वाली चिड़िया', डॉ. कमला कमलेश की 'परियों का तालाब' भी लौकिक जगत की ही कथाएँ हैं।

अस्तु, हिन्दी बालकथा साहित्य अब नये मूल्यों की खोज एवं स्थापना की दिशा में अग्रसर है। ये कहानियाँ बच्चों का मनोरंजन और ज्ञानवर्द्धन करने के साथ-साथ उनमें संघर्ष करने की क्षमता भी विकसित कर रही हैं।

बाल उपन्यास

यद्यपि यह सच है कि बच्चों को सबसे ज्यादा गीत और कहानियाँ ही पसन्द आती हैं, पर बड़े होते बच्चों को छोटे और दिलचस्प कथानक वाले बाल उपन्यास पढ़ने में भी खूब मजा आता है। उन्नीसवीं सदी तक बच्चों के लिए लिखने वाले लेखकों ने इस विधा में लेखन प्रारम्भ नहीं किया था। बाल उपन्यासों का प्रारम्भ बीसवीं शताब्दी से ही हुआ। अपने शैशवकाल में इन उपन्यासों को अपेक्षाकृत सम्मान नहीं मिला। बच्चों में इनके लोकप्रिय होने में कई वर्ष लग गए। इसका एक कारण यह भी रहा कि बच्चे कौन सी किताबें पढ़ें यह तय करने का अधिकार बड़ों ने अपने पास सुरक्षित कर रखा था और ज्यादातर अभिभावकों को लगता था कि बच्चों को उपन्यास नहीं पढ़ना चाहिये।

उच्च शिक्षित मध्यमवर्गीय परिवारों में भी बच्चों को पर्याप्त मानसिक खुराक उपलब्ध कराने की प्रक्रिया धीरे-धीरे विकसित हुई। बाल उपन्यासों को पृथक विधा के रूप में प्रतिष्ठित कराने में 'बालसखा', 'किशोर', 'पराग', 'नन्दन', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' और 'धर्मयुग' जैसी पत्रिकाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।[1]

बाल पाठकों का एक अच्छा-खासा वर्ग तैयार हो जाने पर बाल उपन्यासों की मांग भी खूब बढ़ गई। पिछली सदी के आखिरी तीन दशकों में तो बड़ों की तरह ही बच्चों के लिए भी अनेक प्रकाशकों ने पॉकेट बुक आकार में कम कीमत में बाल उपन्यासों का प्रकाशन प्रारम्भ कर दिया। यह शृंखलाएँ खूब चलीं। ये प्रकाशक हर माह औसतन चार या पाँच पुस्तकों का सेट प्रकाशित करते था। पर पिछले कुछ वर्षों में टेलीविजन और इंटरनेट के बढ़ते वर्चस्व ने इन उपन्यासों की मांग बहुत कम कर दी है। इसी कारण कई अधिकांश प्रकाशकों ने बाल उपन्यासों का प्रकाशन बन्द कर दिया है।[2]

यूँ तो लगभग हर विषय पर बाल उपन्यास लिखे गए हैं किन्तु साहसपूर्ण तथा रोमांचक उपन्यास ही बच्चों द्वारा पसन्द किये गए हैं। ऐतिहासिक उपन्यासों में सुशील कुमार का 'मत चूके चौहान', हरिकृष्ण देवसरे के 'आल्हा-ऊदल, सोहराब रुस्तम', कुणाल श्रीवास्तव का 'राजपूत का बेटा', बाँके बिहारी

1. बच्चों के 12 उपन्यास : राधेश्याम प्रगल्भ, आमुख भाग से
2. तदैव

भटनागर के 'जय सोमनाथ' तथा 'मेवाड़ का सूर्य', अक्षय कुमार जैन का 'शिवाजी', राधेश्याम प्रगल्भ के 'शाही हकीम', 'इंदल का विवाह', 'एक कटोरा पानी', यादवेन्द्र शर्मा 'अस्सी घाव', वीरेन्द्र गुप्त के 'चाणक्य' आदि उपन्यासों का नाम उल्लेखनीय है। इन बाल उपन्यासों में ऐतिहासिकता की रक्षा के साथ-साथ रोचकता का भी बराबर ध्यान रखा गया है और कथानक में कहीं भी शुष्कता या नीरसता नहीं आने पाई है। महाभारत-रामायण कालीन पात्रों अथवा घटनाओं पर आधारित उपन्यासों में कुणाल श्रीवास्तव कृत 'लव-कुश', गोविन्द सिंह कृत 'सूरज का बेटा', श्रीव्यथित हृदय कृत 'गंगापुत्र', 'आकाशवाणी' आदि की गणना की जा सकती है।

सब जानते हैं कि बच्चे साहसपूर्ण तथा रोमांचक उपन्यास पसन्द करते हैं। सस्पेन्स और जिज्ञासा से भरे उपन्यास उन्हें वैसे ही और उपन्यास पढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं। इसीलिए जासूसी उपन्यास बच्चों को सबसे अच्छे लगते हैं। ऐसे उपन्यास तुरन्त निर्णय लेने की शक्ति तथा साहसिकता का संचार करती हैं। पर विषय चयन के प्रति लेखक को बहुत सजग रहना पड़ता है, जरा सी चूक बच्चों को गलत दिशा दे सकती है।[1]

भारत-पाक युद्ध की पृष्ठभूमि पर लिखा गया जयप्रकाश भारती का उपन्यास 'नमक का कर्ज' बच्चों ने ही नहीं बड़ों ने भी खूब पसन्द किया था। कच्छ का नमक पूरा भारत खाता है। युद्ध के समय भारतीय सेनाएँ इसी नमक के कर्ज को

1. कहानी की विकास यात्रा : ब्रह्मानन्द (नवभारत- 11 जून 2002)

उतारने के लिए पहुँच जाती हैं। कंजरकोट गांव पर सहसा दुश्मनों का हमला होता है। गांववासियों के पास हथियार नहीं था, जिसके कारण वे दुश्मनों के सामने अधिक समय तक नहीं टिक पाते। कुछ बन्दी बना लिये जाते हैं कुछ शहीद हो जाते हैं। गाँव तहस-नहस हो जाता है। भारत युद्ध नहीं चाहता पर आत्मरक्षा के लिए सभी तत्पर हैं। कंजरकोट के दो बच्चे भी युद्ध के समय साहस और वीरता का परिचय देते हैं। वे सिपाहियों की सेवा भी करते हैं। जब वे भटकते हुए पाक सीमा में प्रवेश कर जाते हैं तो एक बुढ़िया न केवल उन्हें आश्रय देती है बल्कि उनकी भूख-प्यास भी मिटाती है और कहती है 'क्या हिन्दुस्तान क्या पाकिस्तान ? सारी जमीन तो ऊपर वाले की है आदमी तो यूँ ही हक जताता है।' कैम्प में किरण दीदी बच्चों में साहस का संचार करती है। देवदास और गुलाबदास उसी की प्रेरणा पाकर गाँव में घुस आये आतंकवादियों को पकड़ने में सक्षम हो पाते हैं। आतंकवादी उनके गाँव के कुओं में जहर मिलाने आये थे।[1]

'नमक का कर्ज' उपन्यास उपदेशात्मक अधिक है। कई जगह देशभक्ति, देशप्रेम, शांति संदेश आदि पर लेखक भाषण देने लगता है। यदि ये बातें कथा के किसी पात्र या घटनाओं के माध्यम से सामने आतीं तो अधिक प्रभावशाली हो सकती थीं। किरण दीदी के कहे गए किस्सों से बच्चों के मन में देशभक्ति, वीरता आदि के भाव अपनेआप जागृत हो जाते हैं।

1. बच्चों के 12 उपन्यास : राधेश्याम प्रगल्भ, आमुख भाग से

विमला शर्मा के उपन्यास 'एक था छोटा सिपाही' का सुरजा भी गुलाबदास की तरह देश पर मर-मिटने वाला बालक है। वह अकेला ही विषम परिस्थितियों का सामना करता है और अकेला एक सेना की टुकड़ी के बराबर बहादुरी दिखाता है। उसकी बचपन से इच्छा थी कि वो बड़ा होकर फौजी बने, इसीलिए वह सेना के जवान दयाराम से मित्रता कर लेता है। दयाराम उसमें अपने पुत्र की छवि देखता है और उसे सेना के तौर-तरीकों की ट्रेनिंग देता है। युद्ध में चीनी सैनिक दयाराम को बन्दी बनाकर ले जाते हैं तब सुरजा दयाराम की खोज में निकल पड़ता है और चीनी फौजियों की नजरों से बचता-बचाता दयाराम को खोज निकालता है। पर दयाराम अकेले कैद से भागने से इन्कार कर देता है। वह सुरजा को समझाता है कि चीनियों के शस्त्रागार को किस तरह नष्ट किया जा सकता है। अन्ततः सुरजा शस्त्रागार नष्ट करने में सफल हो जाता है।[1]

युद्ध की पृष्ठभूमि पर लिखे गए उपन्यासों के अतिरिक्त हिन्दी में ऐसे बाल उपन्यासों की भी कमी नहीं है जिनमें बच्चों को या तो विघटनकारी तत्वों का सामना करते हुए दिखाया गया है या फिर बाल नायकों की समझबूझ के कारण पुलिस को उन तत्वों को पकड़ने में सहायता मिलती है। शकुन्तला सीरोठिया के उपन्यास 'जंगली जानवरों के बीच अकेली लड़की', देवेन्द्र कुमार का 'पेड़ नहीं कट रहे हैं', शिवसागर मिश्र का 'बहादुर लड़का', शांति भटनागर का 'माँ

1. बच्चों के 12 उपन्यास : राधेश्याम प्रगल्भ, आमुख भाग से

का आँचल', अवतार सिंह का 'खोखला सिक्का', रामकुमार भ्रमर का 'डाकुओं के बीच' आदि ऐसे ही उपन्यास हैं।

'जंगली जानवरों के बीच अकेली लड़की' जासूसी उपन्यास है। लेखिका ने बच्चों की रुचि, ग्रहणशक्ति तथा उनके मनोविज्ञान पूरा ध्यान रखा है। श्यामली जंगल में रहती है। चीतू नामक चीता तथा मिंकू नामक बन्दर उसके मित्र हैं। कुछ असामाजिक तत्व श्यामली के पिता का खजाना लूटने के लिए जंगल में आते हैं। बचपन में ही पिता से बिछुड़ गई श्यामली जंगली जानवरों के बीच रहकर ही बड़ी हुई है। जब रत्नाकर जंगल में प्रवेश करता है तो श्यामली पहले उसे अपना शत्रु ही समझती है, पर फिर अपनी पूरी कहानी उसे सुना देती है और पिता द्वारा दिये गए लॉकेट की बात भी बताती है। उसका लॉकेट चोरी हो जाता है जिसे वह रत्नाकर के पास देखती है। वह रत्नाकर को चोर समझकर गोरों के हाथ कैद करवा देती है। बाद में उसे मालूम होता है कि गोरे लोग ही उसके दुश्मन हैं और उसके पिता का खजाना लूटने के इरादे से आये हैं। चीतू और मिंकू रत्नाकर को छुड़ाते हैं और डाकुओं को सजा देते हैं।

'पेड़ नहीं कट रहे हैं' उपन्यास की कथा असामाजिक तत्वों तथा उनकी गतिविधियों की पृष्ठभूमि को लेकर चलती है। जानू निर्धन, अनाथ बालक है। पेड़-पौधों, पक्षियों से उसे प्यार है क्योंकि उन्होंने ही उसे आश्रय दिया है। अजीत अमीर माँ-बाप का बेटा है, उसका साथ गन्दे लोगों का है। पढ़ने-लिखने में उसकी रुचि नहीं है। घूमना-फिरना,दोस्तों को खिलाना-पिलाना

तथा उधार लेना वह सीख जाता है। एक दिन तो वह अपना बस्ता ही कबाड़ी को बेच देता है। जानू , अजीत को इस तरह गन्दे रास्ते पर आगे बढ़ते हुए नहीं देख पाता। वह कबाड़ी से बस्ता वापस लाकर उसे देता है, पर अजीत फिर भी नहीं सुधरता। अजीत के साथी ही उसे बन्दी बना लेते हैं। जानू उसे छुड़ाने के लिए अपनी जान जोखिम में डालता है। अन्त में अजीत जानू का सच्चा दोस्त बन जाता है और सही रास्ते पर चलने लगता है।

'बहादुर लड़का' रोचक और शिक्षाप्रद उपन्यास है। प्रभात की वीरता और साहसपूर्ण कार्यों से बच्चों को शिक्षा मिलती है। प्रभात अपनी बहन मंजू को बच्चे उठा लेने वाले गिरोह से मुक्त कराता है। उसी के कारण पुलिस उस गिरोह को पकड़ पाती है। कथा में प्रवाह है और बच्चों को यह शिक्षा भी मिलती है कि संकट के समय घबराना नहीं चाहिये बल्कि सूझबूझ और धैर्य से काम लेना चाहिये।

'माँ का आँचल' कुछ बिगड़े हुए बच्चों की कहानी को हमारे सामने रखता है। रोहित, सुरेश तथा विजय के साथ रहकर बिगड़ जाता है। घर से पैसे चुराना, सहपाठियों की चीजों को पार करने जैसी बुरी आदतों तथा उनके दुष्परिणामों को यह उपन्यास उभारता है। कहानी बच्चों के इस भ्रम को भी तोड़ती है कि शहरों में बड़े मजे हैं और वहाँ पैसा कमाना बहुत आसान है।

'खोखला सिक्का' विघटनकारियों, देशद्रोहियों तथा विदेशी ताकतों द्वारा देश की एकता को नष्ट करने के प्रयासों का पर्दाफाश करता है। 'डाकुओं के

बीच' चन्दन के साहस की कहानी है। चम्बल के डाकुओं तथा उनकी लूटमार से आतंकित आसपास के क्षेत्रों को चन्दन अपनी आँखों से देखता है। वह डाकुओं को सुधारने का संकल्प लेता है। यह कथा बालक के साहस तथा निडरता को हमारे सामने रखती है। उपन्यासकार ने डाकू जालिमसिंह का हृदयपरिवर्तन बड़े ही मनोवैज्ञानिक ढंग से कराया है।

जयप्रकाश भारती का 'बर्फ की गुड़िया', अमरनाथ शुक्ल का 'कुन्दन', भगवतीशरण मिश्र कृत 'बालसेना' आदि उपन्यासों में शोषितों और दलितों पर होने वाले अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाई गई है। 'बर्फ की गुड़िया' का रीछ जमींदार का इसीलिए शत्रु है क्योंकि उसने अपने कुएँ से उसके मालिक को पानी नहीं भरने दिया था। उसका बेटा प्यास से तड़पकर मर गया था। रीछ जब बच्चों को यह कहानी सुनाता है तो उनकी पूर्ण सहानुभूति हरिजन, उसके बेटे तथा रीछ के साथ हो जाती है। 'कुन्दन' उपन्यास का कुन्दन नीची जाति का होने के कारण आगे बैठकर रामलीला नहीं देख सकता। उच्च जाति के लोग उसके साथ बैठना और उसका आगे बढ़ना पसन्द नहीं करते। कुन्दन को लेखक ने एक आदर्श चरित्र के रूप में चित्रित किया है। नीची जाति का होकर भी वह परिश्रम से पढ़ता है। गांव के ब्राह्मण के लड़के नहीं पढ़ पाते पर उसे कृषि की उपाधि लेने तथा गांव का कायापलट करने में सफलता मिलती है।

'बालसेना' का विषय तनिक भिन्न है। इसमें यह संदेश देने का प्रयास किया गया है कि परम्परागत संस्कारों तथा कुरीतियों से मुक्ति के लिए व्यक्ति का

शिक्षित होना आवश्यक है , इसीलिए प्रौढ़ शिक्षा की आवश्यकता को अनुभव किया जा रहा है।

विभा देवसरे का 'शनिलोक' तथा राजेश कुमार जैन का 'नकली चाँद' उपन्यास विज्ञान के आधुनिक ज्ञान पर आधारित है। देवेन्द्र कुमार का उपन्यास 'नानी माँ का महल' काल्पनिक दुनिया की सैर कराता है। पाठक ऐसे लोक में विचरण करता है जिसे परियों का देश कहा जा सकता है। उपन्यास की रचना छोटे बच्चों को ध्यान में रखकर की गई है। परियों की तरह उड़ते बच्चे तथा अन्य चमत्कार छोटे बच्चों को ही पसन्द आते हैं तथा उनकी कल्पना को पंख लगा देते हैं।

राधेश्याम 'प्रगल्भ' का उपन्यास 'शाही हकीम' मानवता, भाईचारा, आपसी प्रेम को प्रकट करने तथा साम्प्रदायिक भेदभाव को दूर करने के उद्देश्य से लिखा गया है। 'सुरखाब के पर' परम्परागत राजकुमारों का संकट झेलते हुए, राक्षसों, दैत्यों का सामना करते हुए लक्ष्य तक पहुँचने की कथा पर आधारित उपन्यास है। साहसिक यात्रा की दृष्टि से वीरकुमार 'अधीर' का 'बीस बरस की मौत' उपन्यास भी महत्वपूर्ण है। 'सागर का घोड़ा' समुद्री यात्राओं तथा समुद्री डाकुओं के साथ मुठभेड़ों की कथा है। भगवत शरण उपाध्याय अपने इस उपाध्याय में सागर के विस्तृत ज्ञान को बच्चों के सामने रखते हैं। यह उपन्यास बच्चों को समुद्री यात्राओं के दौरान आने वाली कठिनाइयों से भी परिचित कराता है।

यह तो कुछ बाल उपन्यासों की झलक थी । इनके अलावा भी सैंकड़ो उपन्यास लिखे गए हैं । इतने सारे बाल उपन्यासों की भरमार के बावजूद यह कहना मेरी विवशता है कि हिन्दी में बच्चों के लिए अच्छे उपन्यास कम ही लिखे गए हैं । इस दिशा में अभी बहुत कुछ किये जाने की आवश्यकता है ।

बाल नाटक

हिन्दी में बच्चों के नाटक लिखने की आवश्यकता पिछली सदी के प्रारम्भ से ही अनुभव की जाती रही है । इस दिशा में प्रयास भी हुए, लेकिन प्रारम्भ में जो नाटक लिखे गए उनकी भाषा और स्वरूप बच्चों के अनुरूप नहीं बन पाया । यह और बात है कि बच्चों ने उसे सरल बनाकर बनाकर किसी तरह मंच के योग्य बना लिया । राजा लक्ष्मण सिंह के नाटक 'शकुंतला' और भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के नाटक 'अँधेर नगरी' के साथ यही हुआ ।[1]

सन् 1917 में सरल नाटक माला के नाम से बाल नाटकों का एक संकलन प्रकाशित हुआ । इसमें 51 नाटक संकलित किये गए था । संपादक के अनुसार इन नाटकों का संग्रह करते समय इस बात का ध्यान रखा गया था कि 'अश्लीलता और अनुचित शृंगार रस न आवे, स्त्री पात्र न आवे, परदों को विशेष उलझाव न रहे और बच्चों को यथासंभव शिक्षा भी मिले ।'[2] यहाँ विशेष उल्लेखनीय तथ्य यह है कि इन नाटकों का उद्देश्य बच्चों को साहित्य उपलब्ध

1. बाल नाटक- सृजनात्मक सार्थकता : विष्णु प्रभाकर (हिन्दी बाल साहित्य-परम्परा और प्रयोग से, पृ. 95)

2. तदैव

कराना न होकर कुछ और ही था। स्वयं संपादक के शब्दों में - 'जब किसी स्कूल में किसी उच्च पदाधिकारी का शुभागमन होता है अथवा कोई शुभ अवसर उपस्थित होता है तो एकत्रित जनसमुदाय के मनोविनोद के लिए कोई नाटक खेलने का प्रयत्न बहुधा किया जाता है .... यद्यपि हिन्दी में नाटकों का अभाव नहीं है, तथापि अच्छे नाटकों की संख्या बहुत थोड़ी है।'[1]

बच्चों के नाटकों की दिशा में द्विवेदी युग और उसके बाद भी कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई। जो भी छोटे-छोटे नाटक पाठ्यपुस्तकों में उपलब्ध हुए, वे दरअसल बड़ों के नाटकों को काट-छाँटकर उनकी भाषा को सरल करके प्रस्तुत किये गए नाटक ही था। 'प्रताप प्रतिज्ञा', 'राखी की लाज', 'मातृभूमि का मान' आदि ऐसी ही रचनाएँ हैं। बच्चों के लिए पृथक नाटकों की रचना की ओर स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कारगर प्रयास किये गये। सन् 1954 में नर्मदा प्रसाद खरे कृत 'नवीन बाल नाटक माला' दो भागों में प्रकाशित की गई। इसके छोटे-छोटे नाटकों में कम से कम पात्र रखे गए था और कथानक भी छोटे-छोटे ही था। इन नाटकों को बच्चे कक्षा या घर के कमरे में खेल-खेल में ही प्रस्तुत कर सकते था। इस समय तक बच्चों के पत्रों में भी सरल और अभिनेय बाल नाटकों का प्रकाशन प्रारम्भ हो गया था। 1956 में भारत के बाल विशेषांक में कई अच्छी रचनाएँ प्रकाशित हुईं। युक्तिभद्र दीक्षित कृत 'अक्षर सम्मेलन', रमेश वर्मा कृत 'टिकट नहीं लिया' और उमांकात मालवीय कृत 'सूरज की जीत' ऐसी ही रचनाएँ हैं।

1. बच्चों के 100 नाटक : हरिकृष्ण देवसरे, आमुख भाग से

इसी वर्ष प्रकाशित केशवचन्द्र वर्मा का एकांकी संग्रह 'बच्चों की कचहरी' काफी चर्चित हुआ। इस संग्रह के सभी एकांकी अभिनेय तो था ही, इसके विषय भी बच्चों की समस्याओं और उनके परिवेश से सीधे जुड़े था। 'बच्चों की कचहरी' में एक ऐसी घरेलू अदालत का दृश्य प्रस्तुत किया गया है जिसमें अपराधी 'माली' पर मुकदमा चलाया जाता है। बेचारा माली परेशान होकर कह उठता है- 'चिरियन केर जान जाय, लरिकन केर खिलौना।' 'काला चोर' में जासूसी उपन्यास पढ़ने वाले एक पढ़ाकू लड़के की कहानी है जो सपने में काले चोर से भिड़ जाता है। 'बड़े भैया' की समस्या हल करने में प्रयत्नशील बच्चे अंत में किस तरह खामोश हो जाते हैं, यह एक रोचक स्थिति है। शेखी बघारने वाले एक बच्चे की पोल खुलती है 'शेर का शिकार' में।

1957 में प्रकाशित 'चचा छक्कन के ड्रामे' में कुदसिया जैदी ने बड़ी ही रोचक स्थितियों की कल्पना की थी। सहजता और सरलता इन नाटकों की प्रमुख विशेषता थी। सन् 1962 में श्रीकृष्ण और योगेन्द्र कुमार लल्ला के संपादन में 'प्रतिनिधि बाल एकांकी' संकलन का प्रकाशन हुआ। यह संकलन बाल नाट्य साहित्य में मील का पत्थर बना।[1] इसके बाद तो कई संग्रह सामने आने लगे। बच्चों में राष्ट्रीय भावना जागृत करने और राष्ट्रीय समस्याओं से उन्हें अवगत कराने में नाटकों ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। 1962 भारत पर हुए चीनी हमले के बाद तो ऐसे कई नाटक और एकांकी प्रकाशित हुए जिनमें एकता, सहयोग और साहस की

1. बच्चों के 100 नाटक : हरिकृष्ण देवसरे, आमुख भाग से

भावना को बल प्रदान किया गया था। मनोहर वर्मा कृत 'हम सब एक हैं' में गुड्डे-गुड़िया की शादी के बहाने विभिन्न प्रांतों के विभिन्न भाषा-भाषियों के बीच एकता स्थापित की गई। 'सहयोग' (बालकराम नागर) की रस्सी यदि परिश्रम से तैयार की जाये तभी मजबूत बनेगी वरना हमारी हमारी फूट का भूत ही हमें खा जायेगा। 'हम एक हैं' (कमलेश्वर), 'राह अनेक मंजिल एक' (राधेश्याम प्रगल्भ), 'बाल निकेतन' (सरस्वती कुमार दीपक), 'बचत आन्दोलन' (आनन्द प्रकाश जैन) आदि भी ऐसे ही एकांकी हैं जिनमें समस्या के साथ-साथ उनके समाधान में बच्चों की क्या भूमिका हो सकती है, यह भी समझाया गया है। बाल पत्रिका 'पराग' ने बाल एंकांकी प्रतियोगिता आयोजित कर नये लेखकों को प्रोत्साहित किया। 'जासूसी का शौक' (राजकमल जौहरी), 'झगड़ालू लड़का' (श्रीकृष्ण), 'पुस्तकालय' आदि एकांकी इसी प्रतियोगिता की देन हैं।

कमलेश्वर ने बच्चों के लिए कई रोचक एकांकियों की रचना की। उन्होंने बच्चों की समस्याओं और उनके आपसी सम्बन्धों का सूक्ष्मता से अध्ययन किया। 'दोस्ती', 'पैसों का पेड़' आदि इसी कोटि के एकांकी हैं। घनश्याम गोयल ने अपने दिलचस्प नाटक 'ज्योतिष का चमत्कार' में समझाया है कि जादू और ज्योतिष बच्चों को मजा तो देते हैं किन्तु इनके प्रति अंधविश्वासी बनना खतरे से खाली नहीं। राधेश्याम 'प्रगल्भ' की एकांकी 'हारिये न हिम्मत' यह सिखाती है कि भूलों से प्रेरणा लेकर निरन्तर आगे बढ़ता रहना चाहिये।

बच्चों के लिए जिन स्वनामधन्य नाटककारों ने कलम उठाई है उनमें विष्णु

प्रभाकर जैसे रचनाकारों के प्रति बाल साहित्य सदैव ऋणी रहेगा। उन्होंने बच्चों के क्रियाकलापों, उनकी आदतों और दैनिक जीवन की स्थितियों से अनेक कथानक उठाकर नाटक लिखे हैं। 'पुस्तक कीट' दिन-रात कीड़े की तरह पुस्तक से चिपटी रहने वाली बालिका की समस्या है, 'बहादुर बेटा' में देश के लिए कुछ कर-गुजरने की चाह है तो 'हड़ताल' में बच्चों की अपनी समस्या प्रस्तुत की गई है। ऐतिहासिक और पौराणिक एकांकियों का अपना विशिष्ट महत्व होता है। इस तरह के एकांकी जहाँ बच्चों को देश की सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और वीरता की परंपरा से जोड़ते हैं, वहीं सामयिक सन्दर्भ में उनके अर्थों को भी स्पष्ट करते हैं। 'सिद्धार्थ का गृहत्याग' (नरेश मेहता), 'टेढ़ी उंगली' (मन्मथ नाथ गुप्त) आदि ऐसी ही रचनाएँ हैं।

घर के सदस्यों, विशेषकर भाई-बहनों के सम्बन्ध में अनेक बार बालोचित झगड़े उठ खड़े होते हैं। 'झूठ का दान'(देवराज दिनेश) और 'पानी के रसगुल्ले'(रमेश भाई) में ऐसी ही स्थितियों का समाधान है। 'मजेदार मामाजी' (सत्येन्द्र शरत्), 'चकमा', 'शोर' और 'उपवास' (मस्तराम कपूर 'उर्मिल') जैसे एकांकी परिवार में अक्सर उत्पन्न हो जाने वाली मजेदार स्थितियों का चित्रण कर बच्चों को गुदगुदाने में समर्थ हुई हैं।

बड़े लोग अक्सर ही बच्चों की आदतों को सुधारने की बात कहते हैं। बच्चों की आदतें कोई मामूली तो होती नहीं उनका इलाज भी विशिष्ट ही होता है। इस दिशा में भी कई नाटककारों ने कलम चलाई है। 'आदत सुधार दवाखाना' (मंगल

सक्सेना), 'झूठ का अलार्म' (वेद राही), 'ऐ रोने वालो' (सवदेश दीपक), 'भूल सुधार' (देववती शर्मा), 'अनुशासन' (महेन्द्र नाथ झा), 'डर' (श्याम व्यास) आदि ऐसे ही सशक्त एकांकी हैं।

आधुनिक समाज और प्रजातांत्रिक व्यवस्था ने बच्चों को भी नई चेतना दी है, उन्हें अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जागरूक कराया है। 'तोतली भाषा का सूबा' (सत्य जैसवाल), 'हमें बापू से शिकायत है' (अमृतलाल बेगड़), 'हिरण्यकश्यप मर्डर केस' (श्रीकृष्ण), 'ये भी धरती के बेटे हैं' (ओम प्रकाश आदित्य), 'श्वानधर्म यह जिन्दाबाद' (लक्ष्मीकांत वैष्णव) और 'बाल संसद' जैसे नाटकों में इन स्थितियों का उपयोग बड़ी कुशलता के साथ किया गया है।

बाल नाटकों और एकांकियों में आधुनिक भावबोध को अभिव्यक्त करने के भी कुछ सफल प्रयोग हुए हैं। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने 'भों भों-खों खों' एक कुत्ते और बंदर के माध्यम से शोषण के विरुद्ध आवाज उठाई है और 'लाख की नाक' में सामंतवादी सत्ता के बहरे होने का अहसास कराया है।

बच्चों के लिए हास्य नाटक लिखना सबसे टेढ़ी खीर माना जाता है। इस क्षेत्र में पर्याप्त कार्य हुआ है। 'डॉ. चुनचुन' (गोविन्द शर्मा), 'नाटक जो नहीं हो सका' (केशव दुबे), 'दस पैसे के तानसेन' (के.पी.सक्सेना) आदि एकांकियों में हास्य अपनी पूरी शक्ति के साथ प्रकट हुआ है।

बाल नाटक और एकांकी लेखन के क्षेत्र में जो कार्य हुआ है वह निसंदेह उत्साहजनक है, किन्तु पिछले कुछ वर्षों से इस क्षेत्र में कोई उल्लेखनीय उपलब्धि

न होना चिन्तित भी करता है। यहाँ इस तथ्य की ओर भी ध्यान देना होगा कि जो बाल नाटककार नाटकों का सृजन कर रहे हैं वे अपनी रचनाओं को प्रकाशित करवाने की अपेक्षा उन्हें दूरदर्शन, विभिन्न टी.वी. चैनलों और आकाशवाणी को देना ज्यादा उचित मानते हैं। इससे आर्थिक लाभ भी अधिक होता है और नाटक की पहुँच भी अधिक लोगों तक हो जाती है। ऐसे प्रयास किये जाने चाहिये जिनसे नाटकों के प्रकाशन को प्रोत्साहन मिले।

जीवनी साहित्य

बाल साहित्य में जीवनियों का महत्व इसलिए बहुत अधिक है क्योंकि इनके जरिये हम बच्चों को महापुरुषों की विशेषताओं के बारे में बताकर उनके मन में इन्हीं महापुरुषों जैसा बनने और कुछ कर दिखाने का संकल्प जागृत करते हैं। आरम्भ में जब बच्चों के व्यक्तिगत अनुभव लगभग शून्य होते हैं तब वे पूरी तरह से अनुकरण पर ही आश्रित रहते हैं। यह अनुकरण वे क्रमशः अपने परिवारजनों का, परिवेश का, संगी-साथियों का और गुरुजनों का तो करते ही हैं, एक निश्चित स्तर का अक्षरज्ञान हो जाने पर पुस्तकों के पात्रों से तादात्म्य स्थापित कर उनके पात्रों से भी प्रेरणा लेते हैं।[1]

एक उम्र तक तो बच्चे पूरी तरह से कल्पना लोक में रमे रहते हैं, परन्तु धीरे-धीरे जब वे जीवन की यथार्थताओं के निकट आने लगते हैं तब उनकी जिज्ञासा तुष्टि के उपादानों में भी अन्तर आने लगता है। उनके मन में ऐसे पात्रों के साथ

1. जीवनी साहित्य : डॉ. आशा जोशी , पृ. 159

मानसिक विचरण की जिज्ञासा-वृत्ति उत्पन्न हो जाती है, जो उन्हीं की भाँति मानवीय हों। यहीं पर जीवनी साहित्य का अथवा मानवीय पात्रों के कार्यकलापों पर आधारित बालोपयोगी साहित्य का प्रवेश होता है। बच्चे विभिन्न क्षेत्रों के नायकों से सीखते हैं, उनसे प्रेरणा लेते हैं और अभी व्यवहार में तो नहीं पर कल्पना के धरातल पर उनका अनुकरण करने के लिए सचेष्ट रहते हैं। इस प्रकार जीवनी साहित्य का महत्व स्वयंसिद्ध है।

हिन्दी में बच्चों के लिए जीवनी लेखन का क्रमिक विकास द्विवेदी युग से माना जाता है। वह भारत के पुनर्जागरण का काल था। इस समय बाल पाठकों के लिए ऐसी जीवनियाँ लिखी गईं जिनके माध्यम से वे देश के धर्म, संस्कृति, इतिहास आदि विभिन्न क्षेत्रों के महान नायकों से परिचित हों और उनके जीवन से प्रेरणा ग्रहण करें। तत्कालीन बाल पत्रिकाओं में भी समय-समय पर जीवनियों का प्रकाशन होता रहा। बाल साहित्य की अन्य विधाओं की भाँति जीवनी लेखन के क्षेत्र में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ही गति परिलक्षित होती है। विवरणात्मकता के स्थान पर लेखकों ने जीवनियों में ऐसे प्रसंगों और घटनाओं का अधिक समावेश किया है जो उनके चरित्र नायकों के विविध गुणों और विशेषताओं को उजागर करते हैं।

बच्चों का दिशा-निर्देशन भावी राष्ट्र जीवन का एक महत्वपूर्ण कार्य है। बच्चे के विकासशील व्यक्तित्व को दिशा देने में अभिभावकों और अध्यापकों के साथ-साथ साहित्य की भूमिका भी बहुत महत्वपूर्ण होती है। हिन्दी के बाल साहित्यकारों

ने अपने दायित्व को समझा है और विभिन्न महापुरुषों के जीवन चरित को बहुत सरल और सुबोध भाषा में बच्चों तक पहुँचाया है। हिन्दी में पौराणिक चरित्रों से लेकर विभिन्न संतों, राष्ट्र निर्माताओं, क्रांतिकारियों, साहसी वीरों और प्रसिद्ध विद्वानों की जीवनियाँ लिखी गई हैं।

बाल जीवनी लेखन के क्षेत्र में येगदान करने वाले साहित्यकारों में आनन्द प्रकाश जैन, कमलेश्वर, कन्हैयालाल नन्दन, कौशलेन्द्र पाण्डेय, गार्गी गुप्ता, गोपाल कृष्ण कौल, चक्रधर नलिन, गोपाल दास नागर, चतुरसेन, चन्द्रपाल सिह यादव 'मयंक', जयप्रकाश भारती, तरुण भाई, देवराज दिनेश, द्वारिका प्रसाद माहेश्परी, नरेन्द्र शर्मा, निरंकार देव सेवक, पृथ्वीनाथ पाण्डेय, डॉ. पाण्डेय रामेन्द्र, प्रभाकर माचवे, प्रयाग नारायण त्रिपाठी, प्रसाद निष्काम, मगन अवस्थी, मनहर चौहान, मन्मथ नाथ गुप्त, महावीर प्रसाद द्विवेदी, मुकुन्द देव शर्मा, मोहन राकेश, यशपाल जैन, रमेश तिवारी, राजेन्द्र अवस्थी, डॉ. रामस्वरूप खरे, रमाकांत श्रीवास्तव, राजेन्द्र भट्ट, राधेश्याम कुशवाह, रामवचन सिंह, राम स्वरूप दुबे, रामेश्वर दयाल दुबे, डॉ. राष्ट्रबन्धु, रोहिताश्व अस्थाना, विनोद चन्द्र पाण्डेय, विनोद रस्तोगी, विश्वनाथ अय्यर, विष्णुकान्त पांडेय, विष्णु प्रभाकर, व्यथित हृदय, शंकर सुल्तानपुरी, शकुंतला सिरोठिया, शारदा प्रसाद 'शारदेन्दु', शिशशंकर मिश्र, शुकदेव प्रसाद, डॉ. शोभनाथ लाल, श्यामसिंह 'शशि', श्रीनाथ सिंह, सत्यदेव नारायण सिन्हा, सरोजनी कुलश्रेष्ठ, सावित्री शर्मा, सुदर्शन चौपड़ा, डॉ. सुरेन्द्र विक्रम, स्नेहलता पाठक, डॉ. हरि कृष्ण देवसरे आदि के

नाम उल्लेखनीय है।

प्रसंगवश कुछ प्रकाशकों के नाम का उल्लेख भी आवश्यक है जिन्होंने इस क्षेत्र में अविस्मरणीय योगदान दिया है। भारत सरकार के प्रकाशन विभाग ने 'भारत के गौरव' ग्रंथमाला में विभिन्न क्षेत्रों के लगभग सभी शिखर चरित्रों की जीवनियां प्रकाशित की हैं। चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट का तो यह मुख्य कार्य ही है। नेशनल बुक ट्रस्ट ने भी इस दिशा में बहुत काम किया है। सस्ता साहित्य मंडल ने 'समाज विकास माला' शीर्षक से बड़ी संख्या में जीवनी की पुस्तकें प्रकाशित की हैं।

....

....

षष्ठ अध्याय

प्रमुख शिशु गीतकार

षष्ठ अध्याय

प्रमुख शिशु गीतकार

बाल साहित्य में सबसे कठिन कार्य शिशु गीतों की रचना माना जाता है। इन गीतों में भाव या भाषा का चमत्कार दिखाने की तनिक भी गुंजाइश नहीं होती। ये तो उतने ही सरल और सहज होने चाहिये जितना सरल शिशु का हृदय होता है। पुरानी पीढ़ी के कवियों में अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', कामता प्रसाद गुरु, रामनरेश त्रिपाठी, सुदर्शनाचार्य, मुरारीलाल शर्मा, मनोरंजन एम.ए., सुभद्रा कुमारी चौहान, ठाकुर श्रीनाथ सिंह, सोहनलाल द्विवेदी आदि ने कुछ शिशुगीत लिखे हैं लेकिन उनकी संख्या बहुत कम है। रामनरेश त्रिपाठी का बालगीत संग्रह 'मनमोहन' इस दिशा में उल्लेखनीय प्रयास है। इसका एक गीत इस प्रकार है :-

'बिन्नू की गाड़ी।
चिन्नू अनाड़ी ।।
ले चला अगाड़ी।
आ गई पहाड़ी ।।'

ठाकुर श्रीनाथ सिंह की 'पिपहरी' पुस्तक में संकलित 'बरात' कविता की

पहली चार पँक्तियां शिशुओं के लिए उपयुक्त हैं :-

'मुन्नू-मुन्नू छत पर आजा।
बजने लगा द्वार पर बाजा ।।
पीं पीं पीं पीं ढम ढम ढम ढम।
खिड़की पर से देखेंगे हम ।।'

स्वर्ण सहोदर के 'गिनती के गीत' का पहला गीत इस प्रकार है :-

'एक खिलाड़ी तगड़ा है।
एक पैर से लंगड़ा है ।।
बूढ़ा एक पुराना है।
एक आँख से काना है ।।'

कुछ प्रमुख शिशु गीतकारों के बारे में हम यहाँ चर्चा करेंगे :-

शकुन्तला सिरोठिया

डॉ. भँवरलाल शर्मा तथा सुजानी शर्मा की पुत्री शकुन्तला का जन्म 15 दिसम्बर 1915 में राजस्थान के कोटा जिले में हुआ था। मात्र दो वर्ष की आयु में ही माँ का देहान्त हो गया। मातृविहीना बालिका का लालन-पालन कभी मामा के पास तो कभी पितामह के पास होने लगा। माँ की मृत्यु के बाद पिता ने दो विवाह किये किन्तु दोनों ही पत्नियाँ दस-दस वर्ष बाद दिवंगत हो गईं। शकुन्तला का अध्ययन नियमित नहीं हो सका। सन् 1933 में जब महादेवी वर्मा महिला विद्यापीठ इलाहाबाद में प्रधानाचार्य होकर आईं तब शकुन्तलाजी को एक वर्ष तक उनका शिष्यत्व

प्राप्त करने का सुअवसर मिला। 1934 में उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा में स्वर्ण पदक प्राप्त किया। म.प्र. के दमोह जिले के श्री भुवन भूषण सिरोठिया से विवाह के बाद ये शकुन्तला सिरोठिया बन गईं। 14 वर्ष की अल्पायु उनकी सर्वप्रथम बाल रचना 'शिशु' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई। इसके बाद तो 'सरस्वती', 'सुधा' आदि पत्रिकाओं में आपकी रचनाएँ निरन्तर प्रकाशित होने लगीं। आपने दो वर्ष तक 'नवज्योति' का संपादन किया। कई वर्षों तक 'हिन्दू विश्व' की संपादक रहीं। आकाशवाणी से भी आपकी रचनाएँ निरन्तर प्रसारित होती रहती हैं। उनकी लोरियाँ, शिशुगीत, बालगीत और कहानियां अप्रतिम हैं।

शकुन्तलाजी की प्रकाशित कृतियों में काँटों में फूल, गाओ मुन्न, नन्हीं चिड़ियाँ, चटकीले फूल, काले मेघा पानी दे, आ री निंदिया, सोओ सुख निंदिया, गीतों भरी कहानी, उन्होंने शिकार खेला, शिशु गीतमाल (दो भाग), शिशु नगर, जाग पहरुए इत्यादि उल्लेखनीय हैं।

उनके कुछ लोकप्रिश शिशु गीत दृष्टव्य हैं :-

-'ढुम्मक ढुम भाई ढुम्मक ढुम,
मैं हूँ राजा , नौकर तुम।
चच्-चच् बात गलत कहते हो ,
मैं हूँ राजा नौकर तुम।'

-'मोर है मेरा नाम रे,
जंगल मेरा गाँव रे।

वर्षा में खुश होकर नाचूं,

मैं बादल की छाँव रे।'

डॉ. सरोजनी कुलश्रेष्ठ

आपका जन्म 4 मार्च 1923 को मथुरा में डॉ. हरस्वरूप कुलश्रेष्ठ के घर में हुआ। आपने 1951 से अध्यापन कार्य प्रारम्भ किया और 1983 तक मेरठ, अजमेर व मथुरा के विभिन्न महाविद्यालयों प्रवक्ता, विभागाध्यक्ष व प्राचार्य के रूप में कुशलतापूर्वक कार्य किया। बहुआयामी व्यक्तित्व की धनी सरोजनी कुलश्रेष्ठ ने साहित्य की प्रत्येक विधा में उत्कृष्ट सृजन किया है। आप प्रयोगधर्मी प्रवृत्ति के लिए विख्यात हैं। अपनी रचनाओं में आपने कई नये-नये प्रयोग किये हैं। आपकी प्रमुख कृतियों में आ जा री निंदिया, साधना,हिन्दी में साहित्य में कृष्ण, चाँदी की पायल,प्रकृति और हम, ब्रज की लोक कहानियाँ, भोर भई अब जागो प्यारे, ये प्यारे-प्यारे जीव जगत के आदि प्रमुख हैं।

आपको उत्कृष्ट साहित्य सृजन के लिए कई संस्थाओं ने सम्मानित एवं पुरस्कृत किया है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ने 'साहित्य महोपाध्याय', बाबू वृन्दावनदास हिन्दी संस्थान मथुरा ने 'साहित्य मणि', ब्रज साहित्य संगम आगरा ने 'विदुषीरत्न', बाल साहित्य संस्थान लखनऊने 'बाल साहित्य श्री' तथा उ.प्र. हिन्दी संस्थान लखनऊ ने 'सुभद्रा कुमारी चौहान महिला बाल साहित्यकार सम्मान' से समलंकृत किया है।

आपके कुछ शिशु गीत इस प्रकार हैं :-

'शेरू पिल्ला सुन्दर है,

कूं - कूं करता दिन भर है।

एक ऊन का गोला सा,

बैठा रहता भोला सा।

दूध खूब पी जाता है,

बिस्कुट गप खा जाता है।'

एक और सुन्दर शिशु गीत देखें :-

'श्याम चिरइया चूं- चूं- चूं।

मोती पिल्ला कूं- कूं - कूं।।

सोनू तोता रटता है।

बन्दर खों- खों करता है।।'

मानवती आर्य

फैजाबाद लि के ग्राम बरडांडा निवासी श्यामता प्रसाद पांडेय और श्रीमती छविरानी की पुत्री मानवती का जन्म 30 अक्टूबर 1920 को वर्मा के मैकटीला नगर में हुआ था। स्कूली शिक्षा बर्मी तथा अंग्रेजी में हुई। हिन्दी का अध्ययन घर में ही पिता से प्राप्त किया। उम्र के प्रारम्भिक 26 वर्ष वर्मा में व्यतीत किये। द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ने पर 1946 के अन्त में भारत वापस आने के काफी समय बाद इन्टर, बीए, बीटी तथा एम.ए. (अंग्रेजी) की उपाधियाँ अर्जित कीं। ले. कर्नल

लक्ष्मी सहगल के माध्यम से नेताजी सुभाष चन्द्र बोस से मिलीं और अंग्रेजों के खिलाफ जंग में उनकी सहयोगिनी बनीं। सन् 1936 में पहली कविता लाहौर से प्रकाशित मासिक पत्रिका 'शांति' में प्रकाशित हुई। कई वर्षों तक 'बाल दर्शन' की संपादक रहीं। आपके द्वारा शिशुओं के लिए सृजित पुस्तक 'दादी अम्मा मुझे बताओ' और 'दादी माँ की सीख'बहुत चर्चित हुई। उ.प्र. हिन्दी संस्थान द्वारा 1994 में 'सुभद्रा कुमारी चौहान महिला बाल साहित्यकार' सम्मान से अलंकृत किया।

आपके कुछ प्रमुख शिशुगीत इस प्रकार हैं :-

'दादी अम्मा मुझे बताओ,
सच्ची बात मुझे समझाओ।
मुझको यों ही मत बहलाना,
चन्दा का नाता समझाना।
चन्दा क्यों मामा कहलाता ?
कैसे है मामा का नाता ?'

एक और सरस शिशु गीत :-

'दादी अम्मा चली न जाना,
कोई करना नहीं बहाना।
जब मैं सो जाऊँगा तब भी,
मेरे पास यहीं सो जाना।'

हजारीमल बाँठिया

आपका जन्म 24 सितम्बर 1923 को बीकानेर (राजस्थान) में हुआ। पिता का नाम फूलचन्द बाँठिया तथा माँ का नाम मगनबाई था। आपको बुलाकीचन्द बाँठिया तथा सुन्दरबाई दंपती ने गोद लिया था। आपने पुरातत्व सम्बन्धी कार्यों में स्मरणीय भूमिका निभाई है। सम्पूर्ण विश्व में सर्वप्रथम तुलसीकृत रामचरित मानस और बाल्मीकि रामायण पर तुलनात्मक शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करने वाले इटली के विद्वान डॉ. एल.पी. तैस्सीतोरी की समाधि खोजकर बीकानेर में उसका पुनर्निमाण कराया। एक शिशुगीत अवलोकनीय है :-

'मेरी नानी बड़ी सयानी।
कहती रहती नयी कहानी।।
एक था राजा एक थी रानी।
राजा सुन्दर रानी कानी।।'

डॉ. श्रीप्रसाद

श्रीप्रसाद जी का जन्म आगरा जिले के ग्राम पारना में 5 जनवरी 1932 को हुआ था। पिता का नाम पं. रामनारायण चुरारिया था। आपका बचपन अभावों और संघर्षो में बीता। अनेक कठिनाइयों को झेलते हुए अपनी शिक्षा पूरी की। सन् 1948 में अपने गाँव से वाराणसी आ गए। यहाँ आने पर बचपन के साहित्यिक संस्कार पल्लवित होने लगे। हिन्दी से एम.ए. करने के बाद आपने बाल साहित्य की प्रत्येक विधा में रचनाएँ लिखीं। आप हिन्दी बाल साहित्य के अकेले ऐसे पुरोधा

हैं जिन्होंने लगभग दस हजार से भी अधिक रोचक और प्रेरणास्पद शिशु और बाल गीतों का प्रणयन किया है।

1958 से प्रारम्भ हुई सृजनयात्रा ने फिर कभी विराम नहीं लिया। आपकी लेखनी ने बच्चों को एक से बढ़कर एक रोचक रचनाएँ दी हैं। पहला बालगीत संग्रह 'मेरा साथी घोड़ा' 1974 में प्रकाशित हुआ। इसे भारत सरकार ने पुरस्कृत किया। परवर्ती काव्य संग्रहों में से 'आ री कोयल', 'खिड़की से सूरज', 'फूलों के गीत' और 'झिलमिल तारे' को उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा पुरस्कृत किया गया।

स्वीडन में 77 देशों की प्रतिनिधि बाल कविताओं का एक संकलन 'विश्व बाल कविता संग्रह' प्रकाशित हुआ जिसमें आप अकेले भारतीय हिन्दी कवि हैं। इस संग्रह में आपकी कविता 'बिल्ली को जुकाम' संग्रहीत की गई है। श्रीप्रसादजी सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी में हिन्दी विभाग के रीडर रहे। आकाशवाणी और दूरदर्शन से तो आपकी रचनाएँ प्रसारित होती ही रहती हैं इसके अलावा आपके बालगीतों के कई कैसेट भी बन चुके हैं। उ.प्र. हिन्दी संस्थान द्वारा प्रकाशित 'प्रतिनिधि बालगीत' पुस्तक का संपादन भी आपने किया है। इण्डो अमेरिकन 'हू इज हू' में भी आपका परिचय सम्मिलित किया गया है। उ.प्र. हिन्दी संस्थान ने अपने बाल साहित्य के सर्वोच्च सम्मान 'बाल साहित्य भारती' से आपको सम्मानित किया है। अन्य कई सरकारी और सामाजिक संस्थाओं द्वारा भी आपको सम्मानित किया जा चुका है।

श्रीप्रसादजी की प्रमुख कृतियों में मेरा साथी घोड़ा, खिड़की से सूरज, आ री कोयल, अक्कड़-बक्कड़ का नगर, ढम ढमा ढम, गीत विज्ञान के, भारत गीत, चिड़ियाघर की सैर, फूलों के गीत, तक तक धिन, झिलमिल तारे, खेला और गाओ, गीत गीत में गिनती, गाओ गीत पाओ सीख आदि उल्लेखनीय हैं।

शिशुगीतों की एक झलक :-

'हल्लम-हल्लम हौदा,
हाथी चल्लम-चल्लम।
हम बैठे हाथी पर
हाथी चल्लम-चल्लम।'

एक अन्य गीत :-

'ब्याह हुआ बिल्लू घर आये
बिल्ली आई दुल्हन बन
अब दोनो बाजार जा रहे
पोशाकें पहने, बन ठन।
लायेंगे खरीदकर आलू
धनिया, मिरचा और मटर।
इन दोनों ने बना लिया है
अपना एक नया सा घर।'

आपके कुछ गीत पाठ्यक्रम में भी शामिल किये गये हैं।

गोपीचन्द श्रीनागर

आपका जन्म 17 मार्च सन् 1934 को कानपुर में हुआ था। पिता का नाम बाबू मानिकचन्द्र जौहरी तथा माता का नाम राजरानी था। 1955 में डी.ए.वी. कॉलेज कानपुर से कला स्नातक की उपाधि लेने के बाद रेलवे में नौकरी करने लगे। मौलिकता के धनी श्रीनागर जी ने कई नवीन प्रयोगों से बाल साहित्य को समृद्धि प्रदान की। आप प्रयोगधर्मी रचनाकार हैं। आपकी एक हजार से अधिक रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं।

आपकी प्रकाशित कृतियों में दादी की पहेलियाँ, चुनमुन (बालगीत संग्रह), राम की कथा (शिशु गीतों में), नटखट (बाल कहानियाँ व बालगीत), जय झाँसी की रानी, रुनझुन बालगीत, गीतों से हम सीखें ज्ञान आदि उल्लेखनीय हैं। समीक्षकों ने इन कृतियों की मुक्तकंठ से सराहना की है।

कुछ प्रमुख शिशुगीत इस प्रकार हैं :-

'गुपचुप-गुपचुप पीती पानी,
गुपचुप हंसती मछली रानी।
रंग बिरंगी मखमल वाली,
मना रही जल में दीवाली।'

एक अन्य शिशुगीत :-

'चरपर-चरपर करती चिड़िया,
तान सुरीली भरती चिड़िया।

सुबह-सुबह मन हरती चिड़िया,

झरने-सी सुर झरती चिड़िया।'

इन्दिरा परमार

श्रीमती इन्दिरा परमार का जन्म 14 नवम्बर 1942 को उड़ीसा के बरमपुर जिले के ग्राम छेलिया में हुआ। पिता का नाम लक्ष्मण महंती था। बचपन से ही मेधावी छात्रा रहीं इन्दिराजी के पति नारायण लाल परमार भी प्रख्यात साहित्यकार हैं। कितना सुखद संयोग है कि उनका जन्मदिन बालदिवस को पड़ता है। बाल मनोविज्ञान एवं बाल मनोवृत्तियों की बारीक समझ आपकी रचनाओं में साफ परिलक्षित होती है।

म.प्र. साहित्य परिषद, भोपाल ने उनकी पुस्तक 'जंगल में स्कूल' को वर्ष 1966 का रविशंकर शुक्ल पुरस्कार प्रदान किया। पाठ्यक्रमों में भी आपकी कुछ कविताएँ सम्मिलित की गईं हैं। इन्दिराजी की प्रमुख प्रकाशित कृतियाँ हैं- निंदिया रानी, आगे बढ़ते जायेंगे, जंगल में स्कूल, अच्छी आदतें और स्वास्थ्य, ज्वार क्यों नहीं आता आदि। शिशु गीत की एक झलक यहाँ दृष्टव्य है -

'सुबह हुई तो बड़े मजे से ,

शहर घूमने निकली चिड़िया।

किन्तु कहीं पर मिला न दाना

घूम घूमकर हार गई वह।

पड़ा उसे बेहद पछताना।'

'हाथी की पतलून' नामक कविता की यह पँक्तियां देखें -

'हाथी मामा से वह बोला
सुन लो मिस्टर लम्बू।
प्रेस किया करते हम कपड़े
ले जाओ यह तम्बू।'

डॉ. विद्याविन्दु सिंह

आपका जन्म 2 जुलाई 1947 को फैजाबाद जिले के ग्राम जयतिपुर सोनावा में हुआ। पिता का नाम देवनारायण सिंह व माता का नाम प्राण देवी था। बहुत कम उम्र में ही आपने कविता लिखना प्रारम्भ कर दिया था। विगत कई वर्षों से उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान में उप निदेशक के रूप में कार्यरत विद्याजी ने लगभग 20 पुस्तकें साहित्य जगत को प्रदान की हैं। आपकी शैली सरल और भाषा हृदयग्राही है। आप प्रौढ़ साहित्य की तो ख्यातिलब्ध रचनाकार हैं ही, साथ ही बच्चों के लिए भी अनेक सार्थक कृतियों का सृजन किया है। बाल साहित्य की प्रकाशित कृतियों में पीर पराई, साँठ-गाँठ, अवध की लोककथाएँ, अँधेरे की दीप, राजा की पोल आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

आपकी उत्कृष्ट सृजन धर्मिता को दृष्टिगत रखते हुए उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने सुभद्रा कुमारी चौहान पदक से व हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ने साहित्य महोपाध्याय उपाधि से सम्मानित किया। उ.प्र. प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय ने आपके लघु उपन्यास 'ये बेटियाँ' की पांडुलिपि को पुरस्कृत किया। आपका एक

लोकप्रिय शिशुगीत यहाँ दृष्टव्य है :-

'मैंने देखा एक गुपाल,
सोया था वह बिछा पुआल।
उठकर जब वह खड़ा हुआ ,
छोटा था पर बड़ा हुआ।
नहीं हाथ में वंशी थी,
बस पानी की कलशी थी।
काली कमली पास न थी,
पाने की भी आस न थी।
सरदी से काँपे थर-थर,
मोहक आँखें आतीं भर।'

सूर्यकुमार पाण्डेय

आपका जन्म 1 जनवरी 1956 को हुआ था। पिता का नाम योगेन्द्र पाण्डेय था। आपका नाम बालगीतकारों की अगली पँक्ति में लिया जाता है। श्री पाण्डेय की प्रमुख प्रकाशित कृतियों में - गीत तुम्हारे, चूहे राजा, फूल खिले, हम बच्चे, बन्दर जी की दुम, मेरी प्रिय बाल कविताएँ आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। आपके शिशुगीतों में व्यंग्य का पुट उन्हें और अधिक प्रभावशाली बना देता है। प्रवाहमयी भाषा के कारण ये कंठस्थ भी जल्दी हो जाते हैं। बच्चों के लिए उन्होंने रोचक और उद्देश्यपरक गीत लिखे। यह गीत देखें -

'इतने मीठे गाने गाती,

लगता जैसे मिसरी खाती।

तानसेन सी बनी गवैया,

गीत सुनाती सोन चिरैया।।'

यह शिशुगीत तो बच्चों में बहुत लोकप्रिय हुआ -

'पूछ रहा है बबलू - मम्मी,

मुझे जरा बतलाना,

दस मुँह था रावण के, किस

मुँह से खाता था खाना।

दस सिर था, किस करवट

मम्मी रावण सोता होगा।

दस तोंदे होंगी रावण की,

कितना मोटा होगा।'

राजनारायण चौधरी :- आपका जन्म 3 फरवरी 1938 को बिहार के समस्तीपुर जिले में हुआ था। पिता का नाम वाघो चौधरी था। बिहार सरकार के आपूर्ति विभाग में कार्यरत रहे श्री चौधरी की रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं। एक शिशुगीत दृष्टव्य है :-

'घर पिछवाड़े दादाजी की

बगिया लगे कमाल की।

जुही, चमेली, बेला फूले

कलियाँ करें ठिठोली रे।'

आजाद रामपुरी

आपका जन्म मुरैना (म.प्र.) जिले के रामपुरकलाँ (सबलगढ़) में 28 सितम्बर 1945 को हुआ था। सम्प्रति, महालेखाकार कार्यालय ग्वालियर में कार्यरत हैं। सुनो कहानी खेलों की, आविष्कारों की कहानी आदि उनकी प्रमुख प्रकाशित कृतियाँ हैं। सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में आपकी रचनाएँ निरन्तर प्रकाशित होती रहती हैं। एक शिशुगीत दृष्टव्य है :-

'किस्सा वही पुरानी बातें, दादी यही बतातीं ।

अँधियारे के पीछे-पीछे, नई रोशनी लाती।'

श्रीराम श्रीवास्तव 'कमलेश'

श्रीरामजी का जन्म 8 अक्टूबर 1912 को प्रतापगढ़ जिले के ग्राम लखापुर (सांगीपुर) में लक्ष्मण प्रसाद श्रीवास्तव के परिवार में हुआ था। आपके द्वारा रचित पुस्तक 'राष्ट्रीय पर्व संगीत' बच्चों को काफी पसन्द आयी थी। आपकी 'चन्दामामा' नामक कविता की कुछ पँक्तियाँ प्रस्तुत हैं -

'चन्दामामा चमक रहे हैं,

कितना सुन्दर दमक रहे हैं।

मम्मी! मामा ये कहलाते,

किन्तु तुम्हारे पास न आते।

टॉफी लेकर कभी न आते,

कभी न कोई चीज खिलाते।

ये तुमको भी भूल गये हैं,

क्या तुमसे ये रूठ गये हैं ?

हम इनसे मिलने जायेंगे,

इनको अपने घर लायेंगे।'

रामभरोसे गुप्त 'राकेश'

गुप्तजी का जन्म 1 जनवरी 1924 को आलमपुर जिला भिण्ड (म.प्र.) में हुआ था। पिता का नाम पन्नलाल गुप्त था। बाल साहित्य की प्रकाशित कृतियों में - क्या बनोगे, निर्माणों के ढोल बजे, बाल एकांकी, बाल कथाएँ आदि प्रमुख हैं। इनका एक शिशुगीत दृष्टव्य है -

'चूहा लाया पान-सुपाड़ी,

खोल दुकान बना पनवाड़ी।

बिल्ली लेने आई पान,

खड़े हुए चूहे के कान।

लगा काँपने थर-थर वह,

डरकर बिल में भागा वह।

चुहिया नाच-नाचकर गाए,

जान बची औ' लाखों पाए।'

विष्णुकान्त पाण्डेय

पाण्डेयजी का जन्म 7 मई 1933 को संग्रामपुर, पूर्वी चम्पारन (बिहार)में हुआ था। इनके पिता का नाम रामभवन पाण्डेय था। आप द्वारा रचित शिशु गीत, लो ये प्यारे-प्यारे गीत, सारे गीत तुम्हारे गीत, गाता चल मुस्काता चल आदि पुस्तकें खूब सराही गईं। हिन्दी की लगभग सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं ने आपकी रचनाओं को बड़े सम्मान के साथ प्रकाशित किया है। एक लोकप्रिय शिशुगीत देखें -

'चूहे ने बिल्ली को लिख दी चिठ्ठी एक जवाबी,
बन्द करो घर, तुम रख जाओ मेरे बिल पर चाबी।
दिया जवाब तुरत बिल्ली ने, खुद चाबी ले जाओ,
मैं अब बूढ़ी हुई मुझे मत इतना अधिक सताओ।'

डॉ. किशोरी शरण शर्मा

शर्माजी जन्म 16 जून 1936 को केवानी, सारण (बिहार) में हुआ था। आपके पिता का नाम द्वारिकानाथ था। आपने एम.ए., पी-एच. डी की उपाधि अर्जित की। वैसे तो बड़ों के लिखी आपकी रचनाएँ भी प्रशंसित हुई हैं किन्तु बाल साहित्य के क्षेत्र में आपने आपना विशिष्ट स्थान बनाया है। एक शिशुगीत प्रस्तुत है -

'गुड़िया रानी बड़ी सयानी, बात पते की करती।
बोली तुतली, भाषा तुतली, ठुमक ठुमक कर चलती।।
फूलों के बागों में जाती , तितली उसको प्यारी।
हाथ बढ़ाती पकड़ न पाती, फिर भी हँसती न्यारी।।'

डॉ. पाण्डेय रामेन्द्र

आपका जन्म 8 अगस्त 1942 को हुआ था। आप फीरोज गांधी पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, रायबरेली में हिन्दी के विभागाध्यक्ष रहे। लोकप्रिय शिशु गीत 'रेल' की कुछ पँक्तियाँ प्रस्तुत हैं -

'देखो देखो आयी रेल,
छुक छुक करती आयी रेल।
डीजल पीती आग उगलती,
देखो कैसा धुआँ उड़ाती।
कभी न थकती चलती जाती,
सबको अपने घर पहुँचाती।'

सुमित्रा पाण्डेय

श्रीमती सुमित्रा पाण्डेय का जन्म 25 जुलाई 1947 को लखनऊ में हुआ। आपके पिता का नाम श्री गिरिजा प्रसाद पाण्डेय था। आपने एम.ए. (प्राचीन इतिहास) तक की शिक्षा प्राप्त की। स्वतंत्रता की अमर कहानी, गौरव-गान, हिन्दी कवियों का सुयश गान आदि उनकी चर्चित पुस्तकें हैं।

एक शिशुगीत की कुछ पँक्तियाँ देखें :-

'बिल्ली रानी, बिल्ली रानी।
भोली-भाली, भूरी काली,
कैसी सुन्दर और निराली।'

डॉ. अरुणेन्द्र चन्द्र त्रिपाठी 'अरुण'

अरुणजी का जन्म 1 जनवरी 1953 को डूहाँ विहरा जिला बलिया में हुआ। आपके द्वारा विरचित बाल साहित्य विभिन्न पत्रिकाओं में निरन्तर प्रकाशित हो रहा है। शिशुगीत की कुछ पँक्तियां दृष्टव्य हैं -

'चन्दा मामा पहन पजामा, टहला करते रात में।
सज धज कर दूल्हा बन चलते तारों संग बारात में।।
आसमान में लगते ऐसे, जैसे चाँदी की थाली।
अगल-बगल तारे फबते हैं, जैसे दूध भरी प्याली।।'

डॉ. अजय प्रसून

इनका जन्म 18 जनवरी 1954 को लखनऊ में हुआ। आपके पिता का नाम सरोज कुमार द्विवेदी था। प्रसूनजी ने एम.ए., बी.ए.एम.एस. आदि उपाधियाँ प्राप्त कीं। गाओ गीत सुनाओ गीत, बच्चो शिष्टाचार न भूलो, बच्चों की प्यारी कविताएँ, बच्चों गायें गीत आदि आपकी प्रमुख प्रकाशित कृतियाँ हैं। आपका एक सरस शिशुगीत उल्लेखनीय है -

'बाल दिवस फिर आया है।
पंचशील का नारा है,
सारा विश्व हमारा है।
झण्डा ऊँचा रहे सदा ही
भारत माँ को भाया है।'

उपरोक्त शिशु गीतकारों के अलावा डॉ. हरीश निगम, राधेश्यम कुशवाहा, यश मालवीय, अपर्णा गुप्ता,रसिक किशोर सिंह 'नीरज', पवन कुमार सिंह, कैलाश निगम, मत्या मिश्र, महेश कटारे 'सुगम', अंशु शुक्ला, सत्यव्रत मिश्र 'सत्य', रमेश गुप्त, संत कुमार टंडन 'रसिक', सरला दुबे, सरोजनी अग्रवाल, डॉ. कृष्णा श्रीवास्तव, हरिशंकर कश्यप आदि रचनाकार भी शिशु गीतों के प्रणयन में संलग्न हैं।

....

....

सप्तम अध्याय

प्रमुख बाल गीतकार एवं पहेलीकार

सप्तम अध्याय

प्रमुख बाल गीतकार

हिन्दी बालगीतों ने अपने लगभग सौ साल के इतिहास में अनेक उतार-चढ़ाव देखे हैं। इस अवधि में वह उत्तरोत्तर विकास की ओर अग्रसर रहा है। इसके भण्डार को समृद्ध करने में अनेक मूर्धन्य कवियों ने अपना अमूल्य योगदान दिया है। इन सबका यदि उल्लेखमात्र ही किया जाये तब भी एक पृथक ग्रंथ की आवश्यकता होगी। इस अध्याय में मैंने उन कवियों की चर्चा की है जिन्होंने पिछली सदी के उत्तरार्द्ध में बालगीत लिखकर धूम मचाई अथवा जो वर्तमान में बालगीतों का सृजन कर रहे हैं।

पिछली सदी के प्रारम्भ में पं. श्रीधर पाठक, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', कामता प्रसाद गुरु, रामजीलाल शर्मा, मन्नन द्विवेदी 'गजपुरी', रामनरेश त्रिपाठी, डॉ. विद्याभूषण 'विभु', मुरारी लाल शर्मा 'बालबन्धु', देवी प्रसाद गुप्त 'कुसुमाकर', मनोरंजन प्रसाद सिन्हा, ठाकुर श्रीनाथ सिंह, शम्भूदयाल सक्सेना, स्वर्ण सहोदर आदि बच्चों के लिए मनोरंजक और शिक्षाप्रद गीत लिखे। तीसरे और चौथा दशक में रामसिंहासन सहाय 'मधुर', सुभद्राकुमारी चौहान,बलभद्र प्रसाद गुप्त रसिक, सोहनलान द्विवेदी, विश्व प्रकाश 'कुसुम', रामदेवसिंह

'कलाधर', गौरीशंकर लहरी, रमापति शुक्ल, देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त', आरसी प्रसाद सिंह, अब्दुल रहमान सागरी, सुमित्रा कुमारी सिन्हा, शकुन्तला सिरोठिया आदि ने बाल गीतों को न केवल संख्यात्मक दृष्टि से बल्कि गुणात्मक दृष्टि से भी समृद्ध किया।

पाँचवे दशक और उसके बाद से बालगीतों की रचना में लगे कुछ प्रमुख बालगीतकारों का संक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जा रहा है :-

रामकृष्ण शर्मा खद्दरजी

आदत से खद्दर पहनने के कारण जब बच्चे उन्हें खद्दरजी कहने लगे तो उन्होंने भी अपना उपनाम ही खद्दरजी रख लिया। इनका जन्म सन् 1916 में दिल्ली में हुआ था। आपने इंटर तक शिक्षा प्राप्त की। खद्दरजी का सारा जीवन बाल शिक्षण संस्थाओं को खोलने और चलाने में बीता। दिल्ली में उन्होंने बालभारती, हैप्पी स्कूल तथा बाल प्रशिक्षण केन्द्र और अलवर में बाल मंदिर नाम से बच्चों के स्कूल चलाये। दिल्ली से वह 'हमारे बालक' नाम से एक मासिक पत्र भी निकालते थे। उनके बालगीत की बानगी यहाँ प्रस्तुत हैं-

'छह साल की छोकरी,
भरकर लाई टोकरी।
टोकरी में आम है,
नहीं बताती दाम है।
हमको देती आम है,

नहीं बताती नाम है।

नाम नहीं अब पूछना,

हमें आम हैं चूसना।'

द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी

आपका जन्म सन् 1917 में रोहना जिला आगरा में हुआ था। आगरा से एम.ए. करने के बाद उन्होंने एल.टी पास किया और शिक्षा विभाग में अध्यापक हो गए। शिक्षा विभाग की ओर से निकलने वाली 'नवज्योति' पत्रिका के संपादक और शिक्षा प्रसार अधिकारी भी रहे। बच्चों के लिए उनकी लहरें, माखन मिसरी, बढ़े चलो, फूल और शूल, कातो गाओ, बुद्धि बड़ी या बल, यह मित्रता आदि कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

आपका एक बालगीत दृष्टव्य है-

'हम बाल हैं, गोपाल हैं ,

हम हिन्द की संतान हैं।

पढ़ने चले, बढ़ने चले,

गाने चले गुणगान हैं ।।

जो हैं बड़े , आगे बढ़ें,

उनका करे सम्मान हम।

हम वीर हैं, रणधीर हैं,

चलते लिए मुस्कान हम ।।'

डॉ. सुधीन्द्र

डॉ. ब्रह्मदत्त मिश्र 'सुधीन्द्र' का जन्म सन् 1917 में खैराबाद (कोटा) में हुआ था। उन्होंने अपनी निर्धनता से निरन्तर संघर्ष करते हुए एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की और वनस्थली विद्यापीठ जयपुर में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष हो गए। राजपूताना विश्वविद्यालय से उन्होंने 'हिन्दी कविता में युगान्तर' शोध प्रबन्ध पर पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। आपके कई कविता संग्रह और आलोचना की पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। बच्चों के लिए लिखी गई उनकी पुस्तक 'मेरे गीत' का एक गीत यहाँ प्रस्तुत है -

'पोथी मेरी, पोथी मेरी।
इसके पन्ने पन्ने में लगी हुई विद्या की ढेरी।
इसमें हैं तस्वीरें सुन्दर, सिंह मगर पंछी नर बन्दर।
अरे कहें क्या बड़े बड़े हैं भरे तमाशे इसके अन्दर।'

शिवदत्त शर्मा

आपका जन्म सन् 1918 में भरतपुर राज्य के नगर नामक कस्बे में हुआ था। आगरा विश्वविद्यालय से एम.ए., एल-एल.बी तक की शिक्षा प्राप्त करने के बाद प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट हो गए। बच्चों के लिए उन्होंने बहुत सी सुन्दर कविताएँ लिखीं हैं। एक कविता यहाँ प्रस्तुत है -

'धरती तेरी ही गोदी पर खेल कूद हम बड़े हुए।
तेरी मिट्टी से बल पाकर ही पैरों पर खड़े हुए।।

कैसे फिर तेरी छाती पर सहन करें अत्याचारी।

टूट पड़ेंगे वज्र सरीखे हम तो हैं इतने भारी।।'

ब्रजकिशोर नारायण

आपका जन्म सन् 1919 में चम्पारन जिले के ग्राम बड़इला में हुआ। आठ वर्ष की अवस्था में पहली कविता लिखी। सन् 1941 में पंजाब की सुप्रसिद्ध पत्रिका 'शांति' के सम्पादक हुए। इसके बाद हिन्दी मिलाप, हिन्दुस्तान, लोकमान्य जैसे प्रतिष्ठित पत्रों का सफलतापूर्वक सम्पादन किया। बच्चों के लिए प्रकाशित पुस्तकों में आ री निंदिया, हँसी-खुशी। गोल गपोड़े, ताक धिना धिन, पेटू पांडे आदि खूब लोकप्रिय हुईं। उनकी एक लोरी दृष्टव्य है -

'मेरी बिटिया सो जा, सो जा।

कुत्ता तबला बजा रहा है, नाच रही है बिल्ली।

कुत्ता जायेगा कलकत्ता , बिल्ली जाये दिल्ली।।

घोड़ा बाबू ढोल बजायें, बछड़ा जी सारंगी।

बन्दर बाबू काम न करते, खाते हैं नारंगी।।'

निरंकारदेव सेवक

आपका जन्म सन् 1919 में बरेली उ.प्र. में हुआ था। वहीं शिक्षा पाकर एम.ए., एल-एल.बी. की परीक्षाएँ पास कीं। बी.टी. और साहित्य रत्न की परीक्षाएँ बनारस से उत्तीर्ण कीं। प्रारम्भ में अध्यापन के बाद वकालत प्रारम्भ कर दी। बच्चों के लिए मुन्ना के गीत, धूपछाया, चाचा नेहरू के गीत, दूध-जलेबी, माखन

मिसरी, रिमझिम, फूलों के गीत, पंचतन्त्री, मटर के दाने,टेसू के गीत, महापुरुषों के गीत, ईसप की गीत कथाएँ, फ्रांस की कहानियाँ, रूस की कहानियाँ, जापान की कहानियाँ आदि पुस्तकें प्रकाशित हुईं। एक चर्चित बालगीत प्रस्तुत है -

'अगर मगर दो भाई थे।
लड़ते खूब लड़ाई थे।।
अगर मगर से छोटा था।
मगर मगर से खोटा था।।
अगर मगर कुछ कहता था।
मगर नहीं चुप रहता था।।
बोल बीच में पड़ता था।
और अगर से लड़ता था।।
अगर एक दिन झल्लाया।
गुस्से में भरकर आया।।
और मगर पर टूट पड़ा।
हुई खूब गुत्थम गुत्था।।
छिड़ी महाभारत भारी।
गिरीं मेज-कुर्सी सारी।।
माँ यह सुनकर घबराई।
बेलन ले बाहर आई।

दोनों के दो-दो जड़कर।

अलग दिये कर अगर मगर।।

खबरदार जो कभी लड़े।

बन्द करो यह सब झगड़े।।'

शांति अग्रवाल

आपका जन्म सन् 1920 में बरेली (उ.प्र.) में हुआ था। एम.ए. साहित्य रत्न तक की शिक्षा प्राप्त की। पति विश्म्भरनाथ अग्रवाल इतिहास के प्राध्यापक था। आपके दो बालगीत संग्रह बाल वीणा और जागा हिन्दुस्तान बेहद लोकप्रिय हुए। एक बालगीत यहाँ उद्धृत है -

'अभी खबर लन्दन से आई ।

मक्खीरानी उसको लाई।।

भुनगे ने हाथी को मारा।

हाथी क्या करता बेचारा।।

घुस बैठा मटके के अन्दर।

मटके में था ढाई बन्दर।।

उन्हें देखकर हाथी रोया।

रोते रोते ही वह सोया।।

रुकी न आँसू की धारा।

मटका बना समुन्दर खारा।।'

अशोक एम.ए.

सुन्दर लाल वर्मा 'अशोक' का जन्म सन् 1922 में जाजगीर जिला बिलासपुर (म.प्र.) में हुआ। उन्होंने एम.ए., साहित्यालंकार, साहित्य रत्न तथा हिन्दी प्रभाकर परीक्षाएँ पास कीं। इन्द्रधनुष, गौरव, आरती और मंगला जैसी पत्रिकाओं के सम्पादक रहे। बच्चों के लिए उनकी सहोदरा, शैलगाथा, शिकारी, बालगीतांजलि, मोतीचूर का लड्डू, मुर्दा राजकुमार, रेलगाड़ी, भूतों का डेरा, समुद्र परी, जादू की सारंगी, जादू का झूला, सोने की मछलियाँ, फुलझड़ी, स्वप्नलोक, घुनघुना, राजा भैया, मोहनभोग, सोनचिरैया, धरती के लाल आदि बालोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। एक बालगीत प्रस्तुत है -

'चन्दा मामा चन्दा मामा अपने पास बुलाओ।
अपने रथ में मुझे उठाकर नभ की सैर कराओ।।
चन्दा मामा जल्दी से अब मुझे दिखाओ तारे।
चमक रहे हैं दमक रहे हैं लगते हैं जो प्यारे।।
चन्दा मामा रोज रात को सज धज कर तुम आते।
सूरज की किरनें आते ही कहो कहाँ छिप जाते।।'

चन्द्रपाल सिंह यादव 'मयंक'

मयंक जी का जन्म सन् 1925 में कानपुर में हुआ था। वहीं रहकर उन्होंने बी.ए., एल-एल.बी. तक की शिक्षा प्राप्त की। उन्होंने सहयोगी साप्ताहिक के बाल स्तम्भ का भी संपादन किया। उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं - जीवनवीणा, वीरांगना

लक्ष्मी, पागल, किसानगीत, साहसी सेठानी, परियों का नाच, सैर सपाटा आदि। उनकी एक बालोपयोगी कविता दृष्टव्य है -

'कुत्तों में हो गई लड़ाई। फिर तो भारी आफत आई।।

आसपास के कुत्ते आकर। सभी जमा हो गए वहाँ पर।।

लगे भोंकने शोर मचाने। जोर जोर से वह चिल्लाने।।

बड़ा मजा बच्चों को आया। बच्चों ने भी रंग दिखाया।।

लड़ते कुत्तों को उकसाया। कुत्तों के संग शोर मचाया।।'

प्रेमनारायण गौड़

आपका जन्म सन् 1927 में प्रयाग में हुआ था। वहीं उन्होंने बी.ए. प्रथम वर्ष तक शिक्षा प्राप्त की। सन् 1951 में उन्होंने प्रयाग में बाल परिषद नामक संस्था की स्थापना की। इस संस्था ने बच्चों के लिए विविध कार्यक्रम तो आयोजित किये ही साथ ही अनेक लेखकों को भी अनुकूल वातावरण उपलब्ध कराकर उन्हें बाल साहित्य के प्रणयन के लिए प्रोत्साहित किया। लगभग एक दर्जन पुस्तकों के प्रणेता प्रेमनारायणजी की सर्वाधिक प्रसिद्ध पुस्तक चमचम चन्दा है। उनकी एक कविता यहाँ प्रस्तुत है -

'चन्दा मामा चमक रहे हैं नभ में आसन मारे।

देख उन्हें कितने खुश होते हैं हम बच्चे सारे।।

लिये साथ तारों की टोली नभ में चक्कर खाते।

आँख मिचौनी खेला करते हरदम हैं मुस्काते।।'

कामिनी दीदी

कामिनी दीदी का नाम उमा सूद है और सिनेमा संसार में वे कामिनी कौशल के नाम से जाती हैं। कामिनी कौशल के प्रशंसकों में से बहुत कम लोगों को यह पता है कि बच्चों के लिए कविताएँ लिखने वालीं कामिनी दीदी भी वही हैं।उनका जन्म सन् 1927 में लाहौर में हुआ था। हिन्दी की अनेक सुप्रसिद्ध फिल्मों में उन्होंने अभिनय किया है। वे पराग मासिक की संपादिका रह चुकी हैं। बच्चों के लिए उन्होंने कई पुस्तकें लिखी हैं। उनका एक बालगीत दृष्टव्य है -

'आज रात बिस्तर में लेटे सोचा मैंने ध्यान लगाकर।
कितने रंग की चीजें खाईं मैंने दिन भर मंगा मंगा कर।।
श्वेत रंग का दूध पिया था, पीला मक्खन साथ लिया था।
फिर था लाल संतरे खाये, रंग-बिरंगे सेव चबाये।।
आइसक्रीम गुलाबी चाटी, पूरी चाकलेट भी काटी।
पेट भरा था हरी मटर से और लाल लाल गाजर से।।
मैंने इतना सब था खाया, पेट अचानक फटने आया।
अगर कहीं सचमुच जाता फट, इन्द्रधनुष बाहर आता झट।।'

रामावतार चेतन

आपका जन्म सन् 1928 में हुआ था। प्रारम्भिक शिक्षा फतहपुर और कानपुर में, स्नातक इलाहाबाद से और स्नातकोत्तर डिग्री बम्बई विश्वविद्यालय से प्राप्त की। इन्होंने ढाई वर्ष तक धर्मयुग के संपादकीय विभाग में काम किया। आप

सोफिया कॉलेज बम्बई में हिन्दी के प्राध्यापक रहे। उनकी बालोपयोगी रचनाएँ बालमित्र के नाम से छपती थीं। उन्होंने बच्चों के लिए सुनो कहानी, दूब के मोती आदि पुस्तकें लिखीं। एक कविता यहाँ प्रस्तुत है -

'सुनो सुनो हे मेरे साथी।
हम पालेंगे यश के हाथी।।
एक पाँत तैयार करेंगे।
गलियों गलियों में विचरेंगे।।
देख हमारी चाल निराली।
लोग सभी पीटेंगे ताली।।
भारी होंगे कदम हमारे।
कुछ न करेंगे बिना विचारे।।
नाक हमारी होगी ऊँची।
आदर देगी धरा समूची।।
सदा सामने को हेरेंगे।
आँख न पीछे को फेरेंगे।।'

राधेश्याम सक्सेना 'रसिकेश'

आपका जन्म सन् 1928 में हुआ था। उन्होंने बच्चों के लिए सुन्दर कविताएँ लिखीं। आपने बी.ए. साहित्य रत्न तक शिक्षा प्राप्त की। उनकी बालोपयोगी कविताओं की पुस्तक 'ठिठोली' के नाम से प्रकाशित हुई है।

एक कविता यहाँ प्रस्तुत है -

'नन्हें-मुन्ने भाई। करना नहीं लड़ाई।।

आओ खेल खेलें। गेंद बल्ला ले लें।।

तुमको कैरम प्यारी। करो जल्द तैयारी।।

मेरी मुठ्ठी खोलो। इसमें क्या है बोलो।।

मेरी मुठ्ठी खाली। खाली बजती ताली।।

खेल खतम है सारा। पैसा हजम तुम्हारा।।'

विश्वदेव शर्मा

आपका जन्म सन् 1931 में इलाहाबाद में हुआ था। शर्माजी ने आगरा विश्वविद्यालय से हिन्दी में तथा पंजाब विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में एम.ए. तथा पत्रकारिता की उपाधि प्राप्त की। उन्होंने दिल्ली व मेरठ के कई समाचार पत्रों के सम्पादकीय विभाग में महत्वपूर्ण दायित्वों का निर्वहन किया। बच्चों के लिए लिखीं फूल पत्ती, धरती के गीत, श्रम के स्वर, बाल संकेत गान, प्रतिनिधि हास्य कहानियाँ आदि कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। आपकी एक बहुचर्चित और लोकप्रिय कविता यहाँ प्रस्तुत है -

'भरा समन्दर गोपी चन्दर बोल मेरी मछली कितना पानी ?

मिला नदी में नाला जाकर। तब उमड़ी नदिया उफनाकर।।

बोल मेरी मछली कितना पानी ? कमर कमर तक गहरा पानी।।

भरा समन्दर गोपी चन्दर बोल मेरी मछली कितना पानी ?'

डॉ. रमाकान्त श्रीवास्तव

आपका जन्म 15 जुलाई 1921 को रायबरेली जिले की लालगंज तहसील में हुआ। पिता का नाम शिवनारायण श्रीवास्तव था। आपने परास्नातक तक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त सम्पादन के क्षेत्र में अप्रतिम स्थान प्राप्त किया। कई संग्रहणीय ग्रंथों के सम्पादन के साथ ही साथ मासिक पत्रिकाओं का भ सम्पादन किया है। प्रकाशित कृतियों में नाच दिखा रे मोर, मेहनत का फल आदि उल्लेखनीय हैं। आपके बालगीतों में लयात्मकता के साथ-साथ ग्राह्यता भी होती है। निम्न पँक्तियाँ अवलोकनीय हैं -

'रात शीघ्र जो सो जाते हैं,
नहीं व्यर्थ जगते रहते हैं।
नींद उन्हें गहरी आती है,
स्वस्थ ताजगी भर जाती है।
जल्दी सोना जल्दी उठना,
समय व्यर्थ में कभी न खोना।
जीवन का उद्देश्य बनाओ,
बढ़कर सुन्दर नाम कमाओ।।'

रघुनाथ प्रसाद 'विकल'

आपका जन्म 10 फरवरी 1925 को मुजफ्फरपुर (बिहार) जिले के बाघी ग्राम के एक कायस्थ परिवार में हुआ था। पिता का नाम बासुकी नाथ श्रीवास्तव था।

आपने एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की। आप द्वारा रचित कृति 'स्वप्न और सत्य' काफी चर्चित हुई। एक बालगीत दृष्टव्य है-

'मन भर अब बरसेगा सावन,
लो अगस्त आया मन भावन।
इसी माह में धधक उठी थी,
नौ अगस्त की ज्वाला पावन।।
आजादी के छिड़े युद्ध का
'पन्द्रह' को था हुआ समापन।
और तभी तो पासा पलटा,
हुआ गुलामी का निष्कासन।।'

नारायण लाल परमार

परमारजी का जन्म 1 जनवरी 1927 को अंजार (कच्छ) गुजरात में हुआ था। पिता का नाम नानजी लाल परमार था। एम.ए. (हिन्दी), साहित्य रत्न तक शिक्षा प्राप्त करने के बाद प्राध्यापक के रूप में कार्य किया। चार मित्र, पन्द्रह अगस्त, गद्दार कौन, जीवन की शिक्षा, छत्तीसगढ़ की लोककथाएँ, चरित्रबोध की कहानियाँ, चलो गीत गायें, बचपन की बाँसुरी आदि आपकी प्रसिद्ध कृतियाँ हैं। एक उदाहरण अवलोकनीय है -

'अधरों पर मुस्कान है,
हम धरती की शान हैं।

आज हमारी आँखों में ही,

हँसता हिन्दुस्तान है।'

युगकवि डॉ. रामस्वरूप खरे

आपका जन्म एक सम्भ्रान्त कायस्थ परिवार में ए सितम्बर सन् 1932 को झाँसी जिले के गुढ़ा नामक ग्राम में हुआ था। पिता का नाम श्री वंशीधर खरे और माता का नाम राजरानी था। प्रारम्भिक शिक्षा गाँव में ही हुई,माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए तहसील मुख्यालय महरौनी आये जहाँ से 1948 में मिडिल परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।

सन् 1952 में पुरुषोत्तम नारायण माध्यमिक विद्यालय, ललितपुर से हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की। यहीं से आपने पटवारियान ट्रेनिंग ली जिसमें आपका संभाग में सर्वप्रथम स्थान रहा। हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से 'विशारद' तथा 'साहित्य रत्न' की उपाधियाँ प्राप्त कीं। इण्टर से एम.ए. तक की सभी परीक्षाएँ आपने असंस्थागत परीक्षार्थी के रूप में उत्तीर्ण कीं। सन् 1966 से आप दयानन्द वैदिक स्नातकोत्तर महाविद्यालय उरई में क्रमशः हिन्दी प्राध्यापक, विभागाध्यक्ष और प्राचार्य के पद पर कार्य करते हुए जून 1993 में इसी संस्था से सेवानिवृत्त हुए। युग निर्माण योजना के संचालक तपोनिष्ठ वेदमूर्ति पं. श्रीराम शर्मा आचार्य ने स्वरूपजी को 'युगकवि' की उपाधि से अभिनन्दित किया था। स्वरूपजी अब तक शताधिक पुस्तकों का सृजन कर चुके हैं। इनमें से मात्र दो दर्जन पुस्तकें प्रकाशित हो पाई हैं, शेष समस्त साहित्य प्रकाशन की प्रतीक्षा में

है। अर्चना, शतमन्यु, मेरे स्वप्न तुम्हारे चित्र, पूजा के फूल, बिखरे मोती आदि पुस्तकें कई विद्वानों द्वारा सराही गयी हैं। बाल साहित्य में शिवाजी, सुभाष, रिमझिम रिमझिम, सुन सुन सुन-गुन गुन गुन,तितली, इतिहास गा रहा है, झाँसी की रानी, गुल्ली डंडा, कोयल रानी, मेरा स्कूल, वीर बालक, धूल भरे हीरे हैं हम आदि आपकी उल्लेखनीय कृतियाँ हैं। राष्ट्रप्रेम से ओत-प्रोत एक बालगीत दृष्टव्य है -

'अभय रहेंगे हम इस जग में,
प्रेम बीज को बोना है।
देशभक्ति की बहती सुरसरि
में अपने कर धोना है।।
है 'स्वरूप' जग को बतलाना
मौत सदैव खिलौना है।
भारत माँ के हृदय हार में,
शीश-प्रसून पिरोना है।।'

रामवचन सिंह 'आनन्द'

आपका जन्म 25 दिसम्बर 1932 को शहाबाद (अब भोजपुर)जिलान्तर्गत ग्राम आरा में हुआ था। आपके पिता का नाम महावीर सिंह था। इनकी रचनाओं में मनोरंजन एवं ज्ञानवर्द्धन का सुन्दर समन्वय देखने को मिलता है। प्रथम बाल कविता 1947 में 'बालसखा' में प्रकाशित हुई थी। अध्यापन का व्यवसाय अपनाने

के कारण आपको बाल मनोविज्ञान को निकट से समझने का भरपूर अवसर मिला। आनन्दजी की लेखनशैली में मौलिकता स्पष्ट रूप से झलकती है, देखें यह उदाहरण-

'बड़े खिलाड़ी हम हम हम।
हममें पूरा दम दम दम।।
युग युग से तो खेल चुके हैं,
हम भी गुल्ली डंडा।
नहीं रगों में बहा हमारी
खून कभी भी ठण्डा।।'

रवीन्द्र कुमार राजेश

आपका जन्म 15 फरवरी सन् 1933 को बरेली के श्री मुकुट बिहारी लाल के घर में हुआ। एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त राजेशजी की प्रमुख प्रकाशित कृतियों में जय भारत जय भारती, पढ़ें पढ़ायें ज्ञान बढ़ायें, जीवन ज्योति आदि प्रमुख हैं। सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में भी आपकी रचनाएँ निरंतर प्रकाशित होती रहती हैं। एक प्रेरक बालगीत की झलकी -

'बच्चों तुमको रक्षा करनी
भारत माँ की शान की।
तुम्हें सुरक्षित रखनी होगी
सीमा हिन्दुस्तान की।'

डॉ. राष्ट्रबन्धु

डॉ. श्रीकृष्ण चन्द्र तिवारी 'राष्ट्रबंधु' का जन्म सहारनपुर में 2 अक्टूबर 1933 को हुआ। पिता का नाम देवीप्रसाद तिवारी एवं माता का नाम भगवती देवी था। आप अपने माता-पिता की बारहवीं संतान थे, आपके जन्म के पूर्व 11 भाई दिवंगत हो चुके थे। राष्ट्रबंधुजी का बचपन बहुत ही कष्टमय रहा। बाल्यावस्था में ही अभावों के झंझावातों को झेलते-झेलते आप श्रमशील एवं कर्तव्यनिष्ठ हो गए। सन् 1949 में अर्थाभाव के कारण हाईस्कूल परीक्षा का फार्म न भर पाने के कारण परीक्षा से वंचित रह गए। अगले वर्ष हरिजन आश्रम में रहकर व्यक्तिगत परीक्षार्थी के रूप में हाईस्कूल परीक्षा उत्तीर्ण की। अनेक मुश्किलों से जूझते हुए आपने हिन्दी एवं अंग्रेजी विषय में एम.ए. करने के बाद 'बाल साहित्य का मनोवैज्ञानिक अध्ययन' विषय पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत कर पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। उन दिनों बच्चों के लिए लिखी जाने वाली पुस्तकों की समीक्षा आठ-दस पँक्तियों में ही छपने की प्रथा चल रही थी। इस स्थिति को बदलने के उद्देश्य से आपने 1978 में 'बाल साहित्य समीक्षा' का प्रकाशन प्रारम्भ किया। इस पत्रिका का प्रकाशन अभी भी जारी है। आपकी प्रमुख प्रकाशित कृतियों में बाल भूषण, देशप्रेम के गीत, बालगीत, टेसू जी की भारत यात्रा,तीस तितलियाँ, राजू के गीत, विक्रमादित्य का सिंहासन, यह मत सोचो तुम गरीब हो, प्रयोगों की कहानियाँ आदि उल्लेखनीय हैं। आपके बहुचर्चित गीतों की कुछ पँक्तियां अवलोकनीय हैं -

'कानपूर कनकैया

बहती गंगा मैया।

चले रेल का पहिया

चना जोर गरम।'

एक अन्य सरस गीत -

'काले मेघा पानी दे

पानी दे गुड़धानी दे।

लड्डू बरसें खेत में

बच्चे हरषें रेत में ।'

रुद्रनाथ पाण्डेय

पाण्डेयजी का जन्म दिसंबर 1933 में गोण्डा जिले के ग्राम अलगटवापुर में हुआ था।आपने अंग्रेजी तथा संस्कृत में स्नातकोत्तर उपाधियाँ अजि़त कीं। दैनिक नवजीवन में साहित्य संपादक के रूप में कई वर्षों तक कार्य किया। आपने यह है उत्तर प्रदेश, झाँकी देश महान की, आजादी के अंगारे, सच्चा सुख, विजय तिलक आदि प्रसिद्ध हैं। एक गीत की कुछ पँक्तियां दृष्टव्य हैं -

'नानी नानी मेरी कहानी

बाल दिवस की कहो कहानी।

बच्चे क्यों हैं इसे मनाते

खेल खेल में खुशी मनाते।'

बाबूलाल शर्मा 'प्रेम'

आपका जन्म 1 मई सन् 1935 को हरदोई जिले के नेबादा अलादादपुर में हुआ था। आपने मैट्रिक तक शिक्षा प्राप्त की। प्रेमजी के गीतों में नवीनता एवं मौलिकता के दर्शन होते हैं। मौलिक भावभूमि पर आधारित एक बालगीत दृष्टव्य है -

'पक्षियों की सभा भोर जुड़ने लगी,
हर गली घाट पर धूल उड़ने लगी।
गर्मियों की सुहानी सुबह आ गई,
बाग वन में अनोखी छटा छा गई।'

जय प्रकाश भारती

भारतीजी का जन्म 2 जनवरी 1936 को मेरठ में हुआ था। बाल साहित्य को बाल मन के अनुकूल बोधगम्य भाषा एवं शैली में प्रस्तुत करना आपकी विशेषता है। आपने अनेक सार्थक एवं उपयोगी पुस्तक प्रसूनों को माँ भारती के चरणों में अर्पित किया है। आप द्वारा रचित बाल साहित्य की पुस्तकों में अनजान से पहचान, अपने-अपने आईने, रुनझुन-रुनझुन, अनन्त आकाश अथाह सागर, लो गुब्बारे, विश्व की महान यात्रायें, वे तो बने सितारे इत्यादि विशेष उल्लेखनीय हैं। कई प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित भारती जी सौ से अधिक पुस्तकों का सम्पादन कर चुके हैं। साप्ताहिक हिन्दुस्तान में सह सम्पादक रहने के बाद आपने हिन्दुस्तान टाइम्स समूह की ही जानीमानी बाल पत्रिका नन्दन का कई वर्षों तक सम्पादन किया। दावत नामक एक बाल कविता की कुछ पँक्तियां प्रस्तुत हैं -

'शादी की दावत है भाई,

डटकर खाओ खूब मिठाई।

गरमा गरम जलेबी आई,

कितनी आई किसने खाई।

कोई नहीं पूछता भाई,

गोल कचोरी पूरी आई,

सबने बढ़ बढ़ खूब उठाई।'

डॉ. गणेश दत्त सारस्वत

आपका जन्म 10 सितम्बर 1936 को सीतापुर जिले के बिसवा नामक ग्राम में पं. उमादत्त सारस्वत के घर में हुआ। संस्कृत एवं हिन्दी से एम.ए. करने के उपरान्त आपने 'सीतापुर जनपद के कवि : व्यक्तित्व एवं कृतियाँ' शीर्षक से शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करके पी-णच.डी. की उपाधि प्राप्त की। विभिन्न महाविद्यालयों में अध्यापन कार्य किया।

महामहिम राष्ट्रपति महोदय ने एन.सी.सी के प्रति आपकी निष्ठा को देखते हुए 'मेजर' का अवैतनिक पद देकर सम्मानित किया। आपको उ.प्र. हिन्दी संस्थान से साहित्य भूषण सम्मान सहित कई प्रतिष्ठित सम्मान प्राप्त हो चुके हैं। 'डॉक्टर बाबा' एवं 'जागो भैया' नाम से प्रकाशित आपके बाल काव्य संग्रह काफी प्रसिद्ध हुए। बालकों को अपनी संस्कृति एवं प्रकृति के प्रति अनुराग की प्रेरणा देती हुई कुछ पँक्तियां दृष्टव्य हैं -

'हहर-हहर हहराने वाला,

लहर लहर लहराने वाला।

दोनों हाथों से अपने नित

ढेरों रत्न लुटाने वाला।

नाप सका है जिसे न कोई-

सागर जिसका नाम है।

ईश्वर के उस नीर रूप को

श्रद्धा सहित प्रणाम है।'

जगदीश चन्द्र वर्मा

आपका जन्म 26 अप्रैल सन् 1937 को उदयपुर के गिलूँड नामक ग्राम में हुआ। पिता का नाम बाबूराम उपाध्याय था। आपने एम.ए., बी.एड. तक शिक्षा प्राप्त की। शर्माजी की प्रकाशित कृतियों में बालगीत, चौक-छक्के, किरणों की मुस्कान, मेवाड़ मंजरी आदि प्रमुख हैं। आपने अपने बालगीतों में उर्दू शब्दों का भी प्रभावी प्रयोग किया है -

'वीरों का सरताज़ दशहरा,

आया है फिर आज दशहरा।

स्वाभिमानियों का सदियों से

बना हुआ है नाज़ दशहरा।।'

प्रेमचन्द्र गुप्त 'विशाल'

आपका जन्म 8 सितम्बर 1938 को मथुरा में रामकृष्ण गुप्त के घर में हुआ था। प्रकाशित कृतियों में फुलवारी के फूल, गुब्बारे वाला, होनहार आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। उत्कृष्ट साहित्य सृजन के लिए आपको अनेक पुरस्कार प्राप्त हो चुके हैं। एक रोचक बालगीत की झलक दृष्टव्य है -

'स्कूल गया तो दीदी बोली,
डैडी कौन तुम्हारे हैं ?
मदर तुम्हारी क्या करतीं ?
अंकिल कौन तुम्हारे हैं ?
मैं रोकर बोला दीदी से,
इन्हें नहीं मैं जानता।
केवल पापा, मम्मी, चाचा
की सूरत पहचानता।'

विनोद चन्द्र पाण्डेय 'विनोद'

पाण्डेय जी का जन्म 16 लवम्बर सन् 1940 को ग्राम पण्डरी (अमेठी) के ख्यातिप्राप्त अधिवक्ता पं. विजयपाल पाण्डेय के परिवार में हुआ। इनकी माता का नाम सरला देवी पाण्डेय है। आपने बी.ए. की परीक्षा प्रयाग विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कर सर्वश्रेष्ठ छात्र का कुलपति पदक प्राप्त किया। एम.ए. की परीक्षा भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करने के बाद प्रयाग विश्वविद्यालय में ही

प्राध्यापक हो गए। सन् 1964 में प्रशासनिक सेवा में चयनित होने के बाद विभिन्न उत्तरदायित्वपूर्ण पदों पर सफलतापूर्वक कार्य किया। विनोदजी की प्रथम काव्य पुस्तक 'विनोद वाटिका' जब प्रकाशित हुई थी तब वे मात्र 12 वर्ष के थे। तब से आज तक सृजन और प्रकाशन का सिलसिला अबाध गति से जारी है। उनकी प्रकाशित कृतियों में वीर सौभद्र, गुरु दक्षिणा, चक्रव्यूह, धन्य जवाहर, जय सुभाष, पढ़ो कहानी गाओ गीत, गिलहरी, उपवन, अमर कथा बापू की, मेलजोल से रहना सीखो, बच्चों के गीत, शिशु गीतिका, उत्सव गीत, बाल सहगान, किशोर गीतिका, नाचें गायें धूम मचायें, अक्षर गीत, जागो हुआ सबेरा, फलों के गीत आदि उल्लेखनीय हैं। आपके बालगीतों में सरलता, सरसता, रोचकता एवं गेयता का अनुपम संगम देखने को मिलता है। एक उदाहरण दृष्टव्य है -

'मेरी कक्षा मेरी कक्षा।
इसमें मिलती अच्छी शिक्षा।।
यहीं बैठते बच्चे सारे।
सब हैं साथी मित्र हमारे।।'

एक और उदाहरण देखें -

'होता फल सुकुमार संतरा।
है कैसा उपहार संतरा।।
उपजाता है प्यार संतरा।
लाता नई बहार संतरा।।'

डॉ. मुनिलाल उपाध्याय 'सरस'

आपका जन्म 10 अप्रैल 1942 को सीतारामपुर नगर बाजार बस्ती(उ.प्र.) में हुआ था। आपने हिन्दी, संस्कृत, प्राचीन इतिहास एवं पुरातत्व तथा मध्यकालीन इतिहास से एम.ए. की उपाधियाँ प्राप्त करने के बाद पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। प्रकाशित कृतियों में नेहा स्नेहा, जलेबी, बाल बताशा, सरस बाल कथाएँ एवं चरण पादुका प्रमुख हैं। आपस में मिल बाँटकर खाने की यीख देता हुआ एक बालगीत दृष्टव्य है -

'नेहा मेहा साथ-साथ जब पढ़ने प्रतिदिन जातीं।
उनकी मम्मी खोल टिफिन तब पूड़ी रख समझातीं।।
इन्टरवल के बीच खोलकर, दोनों मिलकर खाना।
रीता गीता मिले सुनीता, उनको साथ खिलाना।।
प्यार सबों में बाँट बाँटकर खुश हो पढ़ना नेहा।
जावो पढ़ने मेरी बिटिया, नेहा और सनेहा।।'

राधेश्याम आर्य

आपका जन्म 10 फरवरी सन् 1953 में सुल्तानपुर जिले के पूरेदरियाव नामक ग्राम में हुआ था। आपने एम.ए., एल.एल-बी. तक की शिक्षा प्राप्त की। भारत भूमि,हिमालय, श्रद्धा आदि आपकी प्रमुख प्रकाशित कृतियाँ हैं। आपके द्वारा रचित कुछ पँक्तियां दृष्टव्य हैं -

'भारत माँ के हम हैं लाल,

हमीं राम हैं बाल गोपाल।

छिपा हुआ पुरुषत्व हमीं में

लाल-बाल हैं हम ही पाल।।'

भगवती प्रसाद द्विवेदी

आपका जन्म 1 जुलाई सन् 1955 को बलिया के पास दलछपरा नामक ग्राम में हुआ था। पिता का नाम राजमंगल द्विवेदी है। आपने एम.एस-सी., विद्यावाचस्पति आदि उपाधियाँ अर्जित कीं। आप भारत सरकार के दूरसंचार विभाग में कार्यरत हैं। सफलता की सीढ़ियाँ, नया जीवन, गीत खुशी के, गीत प्यार के, महानता, नन्हें गीत आदि आपकी प्रमुख प्रकाशित कृतियाँ हैं। एक बालगीत प्रस्तुत है -

'ऊँट मियाँ बारात सजाकर, निकले ब्याह रचाने।

गधे राम लगे मस्ती में, हेचूँ- हेचूँ- हेचूँ गाने।

पंडित बन सियार जी बैठे, बन्दर मामा नाई,

दुल्हन सज-धज मण्डप में आ, मंद-मंद मुस्काई।'

डॉ. रोहिताश्व अस्थाना

आपका जन्म 1 दिसम्बर सन् 1959 को हरदोई जिले के अटवा अली मर्दन्पुी नामक ग्राम में हुआ था। पिता का नाम हरिश्चन्द्र अस्थाना तथा माँ का नाम विमला देवी था। हिन्दी से परास्नातक उपाधि अर्जित करने के बाद आपने 'हिन्दी ग़ज़ल उद्भव और विकास' नामक शोध ग्रंथ प्रस्तुत कर पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। अस्थाना जी की सृजन यात्रा सन् 1969 ई. से प्रारम्भ हुई। अभी तक

आपने 25 कृतियाँ देकर साहित्य जगत को समृद्धि प्रदान की। बच्चों के लिए लिखी आपकी पुस्तकों में स्वप्न लोक, काफ़िले का सूरत, बच्चों की वापसी, सोनू की उड़ान, आओ गायें धूम मचाये, आओ गायें गीत रसीले, आओ गायें मन बहलायें, मोनू के गीत, नन्ही ग़ज़लें, गीतों की माला, जय इंदिरा आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। आपकी अनेक कृतियाँ विभिन्न संस्थाओं से पुरस्कृत हो चुकी हैं। एक बाल ग़ज़ल दृष्टव्य है-

'गाती श्रम का गीत गिलहरी।
करती सबसे प्रीत गिलहरी।।
खाती है अखरोट मजे से,
क्यों होवे भयभीत गिलहरी।।
कल का काम आज ही करके
लेती है जग जीत गिलहरी।।'

उपरोक्त गीतकारों के अलावा जिन अन्य गीतकारों ने बाल गीतों की रचना में सुयश अर्जित किया है उनमें शिवचरण चौहान, रामानुज त्रिपाठी, अहद प्रकाश, भालचन्द्र सेठिया, रमेश चन्द्र पन्त, राधेलाल नवचक्र, बालकृष्ण गर्ग, दामोदर अग्रवाल, शम्भू प्रसाद श्रीवास्तव, शेरजंग गर्ग, विनेन्द्र स्वरूप सक्सेना 'दीपेश', अशोक अंजुम, राजा चौरसिया, सुशील सिद्धार्थ, प्रत्यूष गुलेरी, लोकेश्वर नाथ सक्सेना, संतोष गुप्ता, प्रेम किशोर पटाखा, रवीन्द्र भारतीय, राम सागर 'सदन', देवकरण जोशी 'दीपक', महेश कटारे 'सुगम', तारादत्त निर्विरोध, सियाराम

मिश्र, अमरनाथ वाजपेयी आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है।

बाल पहेलीकार

बाल साहित्य में पहेलियों का महत्व उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है। पहले तो पहेलियों का सृजन केवल मनोरंजन और खेल-खेल में समय काटने के लिए किया जाता था लेकिन पिछले कुछ वर्षों से इनके सृजन का मुख्य उद्देश्य ज्ञानवर्द्धन हो गया है। बच्चों को पहेलियाँ बूझने में सर्वाधिक आनन्द आता है, इस मनोविज्ञान को ध्यान में रखकर बाल साहित्यकारों ने पहेलियों के माध्यम से बच्चों को ज्ञान की बातें बताना भी प्रारम्भ किया।

सुविख्यात बाल साहित्यकार युगकवि डॉ. रामस्वरूप खरे ने अलग-अलग विषयों से सम्बन्धित डेढ़ दर्जन से अधिक पहेली पुस्तकों का सृजन किया है। इनमें पौराणिक, वैज्ञानिक, ऐतिहासिक, खेल सम्बन्धी, पुरातात्विक,राजनीतिक आदि विषयों से सम्बन्धित पहेलियाँ शामिल हैं। इस क्षेत्र में आपके योगदान का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि आपके द्वारा बनाई गई पहेलियों की संख्या लगभग दस हजार तक पहुँच चुकी है। इनके अलावा जगदीश तोमर, महेश चन्द्र शुक्ल, कल्पनाथ सिंह, डॉ. राजेन्द्र मिलन, अजय शर्मा 'यात्री', रामराज 'राज', प्रबुद्ध त्रिपाठी, सुनील कुमार सत्यम, मोहम्मद दिलशाद हसन, मोहम्मद फहीम 'फम्मी', शैलेन्द्र कुमार चतुर्वेदी, वीणा, सुरेन्द्र श्रीवास्तव, देवशर्मा विचित्र, दुर्गाप्रसाद शुक्ल'आजाद', प्रदीप पंकज, महेश चन्द्र त्रिपाठी आदि ने भी रोचक और ज्ञानवर्द्धक पहेलियों की रचना की है। इन पहेलीकारों की कुछ

प्रसिद्ध पहेलियां यहाँ उद्धृत की रही हैं -

जगदीश तोमर :-

'अमृतसर का एक बाग है,
वीर शहीदों का स्मारक।
कहो कौन जो बलिदानों की
परम्परा का अक्षय धारक ?' **(जलियाँवाला बाग)**

'कृष्ण भक्ति में मोद मग्न थी,
वह थी प्रेम दीवानी।
बोलो किसने गाया, मैं तो-
गिरधर हाथ बिकानी।' **(मीराबाई)**

महेश चन्द्र शुक्ल :-

'पहन के रहते आधी धोती,
घड़ी कमर में लटकी होती।
सत्य अहिंसा की परिपाटी
चलें थामकर कर में लाठी।
कौन थे आजादी की आँधी,
मोहनदास करमचन्द गाँधी।'

डॉ. राजेन्द्र मिलन :-

'अँगुली जैसी कुछ बड़ी,

नर्म हरी सी फुलझड़ी।
पिंडी सालिगराम की,
मुश्किल से दस ग्राम की।' (भिण्डी)

'गोल-गोल पीला-पीला
सख्त नहीं ढीला-ढीला।
पिया और खाया जाता
सबके काम खूब आता।' (नींबू)

कल्पनाथ सिंह :-

'बिना फूल फल कैसे आया,
इसका भेद कोई ना पाया।
गाँव गली में इसका नाम,
बूझो नाम बनाओ काम।।' (गूलर)

'बिन बोले हर बात बताये,
पढ़ना लिखना सभी सिखाये।
नहीं किसी से करे लड़ाई,
नाम बताओ इसका भाई।' (कलम)

प्रबुद्ध त्रिपाठी :-

'वस्तु कौन सी इस दुनिया में,
सबसे ज्यादा मूल्यवान है।
घड़ियों में प्रयुक्त होती है,
इसमें गुणवत्ता महान है।' (रेडियम)

सुनील कुमार सत्यम :-

'संग हमारे चलती है पर
उसको पकड़ न पायें।
अँधकार में घुलमिल जाती
चार अक्षर का नाम बतायें।' **(परछाईं)**

'दिन हो या चाहे हो रैन,
मिलता कभी न मुझको चैन।
अनपढ़ नहीं है मेरा यार,
पढ़े हुओं से मुझको प्यार।' **(कलम)**

युगकवि डॉ. रामस्वरूप खरे :-

'दुबली पतली मेरी काया,
मैंने जन्म खेत में पाया।
हरा मुकुट सिर पर है छाया,
नाम बताओ पाओ माया।' **(मूली)**

'कुम्भकरण घननाद निशाचर
को किसने संहारा था ?
सेतु बाँध सागर पर, किसने
दुष्ट दशानन को मारा था?' **(भगवान श्रीराम)**

मोहम्मद दिलशाद हसन :-

'एक जानवर मोटा ताजा,
माँस खाता ताजा - ताजा।

सबसे है बलवान, बलिष्ठ,

कहलाता जंगल का राजा।' (शेर)

शैलेन्द्र कुमार चतुर्वेदी :-

'एक चीज ऐसी कहलाए,

हर जन मजबूरी में खाए।

पर कैसी मजबूरी हाय,

खाकर भी भूखा रह जाए।' (कसम)

'मध्य कटे तो कान बनूं

आदि कटे तो खून।

करता हूँ इन्साफ भले ही,

पड़े बहाना खून।' (कानून)

वीणा :- 'मुँह पर रक्खे अपना हाथ,

बोला करती है दिन रात।

जब हो जाती बन्द जबान,

लोग ऐंठते उसके कान।' (घड़ी)

....

....

अष्टम अध्याय

प्रमुख बाल कहानीकार

अष्टम अध्याय

प्रमुख बाल कहानीकार

बच्चों के लिए लिखी जाने कहानियों ने बहुत कम समय में विकास की लम्बी यात्रा तय की है। पिछले सौ वर्षों की कालावधि में बच्चों की मानसिकता में भी क्रांतिकारी परिवर्तन आया है। आज के बच्चे कहानी को केवल सुनते या पढ़ते नहीं हैं बल्कि अपनी वैज्ञानिक दृष्टि से कहानी के परिवेश, पात्र, घटनाक्रम आदि की समीक्षा भी करते हैं। चन्द्रमा पर देवताओं के निवास या परीलोक जैसी बातें बाल पाठकों को अब आसानी से हजम नहीं होतीं।

यद्यपि यह सच है कि बच्चों के लिए कहानी लेखन को ज्यादातर साहित्यकार अभी भी गंभीरता से नहीं लेते किन्तु कुछ लेखकों ने इस दिशा में प्रशंसनीय पहल करते हुए कई उत्कृष्ट कहानियाँ लिखी हैं। वास्तव में बात सिर्फ लिखने की नहीं है, समस्या है लिख सकने लायक तैयारी की। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार बच्चों की जानी पहचानी दुनिया बहुत सीमित होती है। यद्यपि टीवी और इंटरनेट जैसे सशक्त सूचना माध्यमों ने इस स्थिति को काफी हद तक बदल दिया है। इसके चलते अगर सामाजिक परिवेश सिकुड़ा है तो जानकारियों के क्षितिज असीम भी हुए हैं। ऐसे में बच्चों की दुनिया को सीमित मानना शायद सही आकलन न हो,

फिर भी बच्चों की और बड़ों की मानसिकता में आधारभूत अन्तर तो होते ही हैं। इस अन्तर को ध्यान में रखकर ही बच्चों के लिये कहानियों का लेखन होना चाहिये। वर्तमान में जो लेखक बाल कहानियों का सृजन कर रहे हैं उनमें से कुछ का परिचय यहाँ दिया जा रहा है-

डॉ. रतनलाल शर्मा

आपका जन्म 5 जुलाई सन् 1931 में बुलन्दशहर जिले के बालका नामक ग्राम में हुआ था। आपने एम.ए. (हिन्दी) करने के बाद पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। आपकी प्रकाशित कृतियों में संकल्प, भरोसा, अप्रैल फूल, पानी चोर सियार आदि उल्लेखनीय हैं। आपने कई आलोचनात्मक ग्रंथों का भी प्रणयन किया है। आपने कई महत्वपूर्ण पत्रिकाओं, संकलनों एवं स्मारिकाओं का सम्पादन किया है।

डॉ. गुरुशरण

आपका जन्म इटावा जिले के इकदिल नामक नगर में 4 सितम्बर सन् 1931 को हुआ था। आपने राजनीति विज्ञान से परास्नातक की उपाधि प्राप्त करने के बाद 'चम्बल घाटी में डाकू समस्या के समाधान में राज्य शासन और सर्वोदय का योगदान' पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। सन् 1955 से आरम्भ हुई आपकी सृजन यात्रा अविराम गति से आगे बढ़ती ही जा रही है। आपकी बालोपयोगी कृतियों में भारत रत्न, धरती मुस्कराई, मुख क्या देखें दर्पण में, आओ खेलें खेल (मध्यप्रदेश शासन द्वारा पुरस्कृत) आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

शकुन्तला वर्मा

इनका जन्म 4 जनवरी सन् 1932 को लखनऊ में हुआ था। पिता का नाम काली कृष्ण नारायण था। आपने एम.ए. तक शिक्षा प्राप्त की।बाल कहानी के क्षेत्र में आपका स्थान अप्रतिम है। आपकी प्रकाशित कृतियों में सुबह का भूला, घर के बुद्धू घर को आये, मुझे माफ कर दो, राजा बेटा, पिकनिक आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। आपकी बाल कहानियों में वातानुकूल भाषा, काल्पनिक कथावस्तु, भावात्मक शैली एवं तद्भव शब्दों का प्रयोग देखने को मिलता है। सहज एवं स्वाभाविक कथोपकथन आपकी बाल कहानियों को रोचक बनाते हैं।

मनोहर वर्मा

आपका जन्म 7 अगस्त 1934 को अजमेर (राजस्थान) में हुआ था। बाल साहित्य के मूर्धन्य रचनाकार एवं बाल पत्र-पत्रिकाओं के सफल सम्पादक मनोहर वर्मा एक ऐसे मौलिक सृजेता और वरेण्य सम्पादक हैं जिन्हें बाल मन के अनुकूल साहित्य सृजित करने में अप्रतिम सफलता प्राप्त हुई है। वर्माजी की अब तक 91 बालोपयोगी कृतियाँ प्रकाशित हुईं हैं, जो उनकी साधना एवं तपस्या का सजीव उदाहरण हैं। आपकी प्रकाशित कृतियों में डॉ. चम्पक और मचलू, भुलक्कड़ बिन्नी, हम सब एक हैं, वचन का मोल, लड़ाई के मैदान से खत, मैं नेहरू बनने चला, आओ खेलें फुटबाल, तमाशे में तमाशा, म्याऊँ - म्याऊँ, बंटी का स्कूल, इनसे भी मिलिए, चन्दा मामा और बुलबुले, जानवरों से इंटरव्यू, आग का गोला, समाज सुधारक, हमारे धार्मिक महापुरुष, हमारे क्रांतिकारी, हमारे वैज्ञानिक

आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं।

आपने 450 पृष्ठीय 'भारतीय बाल साहित्य विवेचन विशेषाँक 'तथा पंडित जवाहरलाल नेहरू की प्रथम पुण्य तिथि पर प्रकाशित 'बाल साहित्य वार्षिकी 1965' का सम्पादन किया। सन् 1986 से 1992 तक बच्चों की प्रसिद्ध पत्रिका बालहंस के सम्पादक रहे। वर्माजी को अनेक सम्मान एवं उपाधियों से विभूषित किया जा चुका है। आपकी बालकथाओं में सरल एवं सुबोध भाषा का प्रयोग देखने को मिलता है। आपकी कहानियों में ऐतिहासिक एवं पौराणिक कथानकों का प्रचुर प्रयोग देखने को मिलता है। सहज एवं स्वाभाविक कथोपकथन एवं बाल मनोवैज्ञानिक शैली आपकी कहानियों को संग्रहणीयता प्रदान करती है।

डॉ. श्याम सिंह 'शशि'

आपका जन्म हरिद्वार के निकट एक कृषक परिवार में हुआ था। शशिजी आठवीं कक्षा से एम.ए. तक की सभी कक्षाओं में प्रथम रहे। आपने हिमालय एवं रोमा यायावरों पर प्रचुर मात्रा में साहित्य लिखकर यायावर साहित्य की श्रीवृद्धि की है। आपको अपने उत्कृष्ट साहित्यिक अवदान के लिए सन् 1990 में 'पद्मश्री' जैसे उच्च राष्ट्रीय सम्मान से विभूषित किया गया। आपने बाल साहित्य को बीस सार्थक कृतियाँ प्रदान की हैं। शशिजी ने बच्चों की पत्रिका 'बाल भारती' का भी सम्पादन किया। आपके द्वारा सृजित कुल पुस्तकों की संख्या एक सौ पचास से भी अधिक है। कई पुरस्कारों और उपाधियों से विभूषित डॉ. शशि ने 'सामाजिक विज्ञान हिन्दी विश्वकोश' जैसे महाग्रंथ का भी सम्पादन किया। आपके प्रेरक एवं

बहुआयामी व्यक्तित्व और कृतित्व पर लगभग दस विश्वविद्यालयों में शोधकार्य हो चुके हैं।

आपकी बाल कहानियाँ सौद्देश्य एवं उपयोगी होती हैं। छोटे-छोटे वाक्यों में सहज कथोपकथन, पात्रानुकूल सरल भाषा तथा मनोवैज्ञानिक शैली के कारण आपकी बाल कहानियाँ सार्थकता एवं लोकप्रियता के उच्च शिखरों का संस्पर्श करती हैं।

रतन शर्मा

श्रीमती रतन शर्मा का जन्म 7 जुलाई 1934 को लाहौर में हुआ था। भारत विभाजन के समय आपका परिवार दिल्ली में आकर बस गया। सन् 1959 में आपका विवाह डॉ. रत्नलाल शर्मा के साथ हुआ। यों तो आपने महिलाओं के भी लिखा पर बाल साहित्य के लेखन में आपकी विशेष रुचि रही। मनमोहन, धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, बालमंच, बाल भारती आदि पत्रिकाओं तथा हिन्दी के सभी प्रमुख समाचार पत्रामें आपकी रचनाएँ निरन्तर प्रकाशित होती रहती हैं। प्रकाशित कृतियों में काजू और किशमिश, मीठे पराँठे, सोने की जड़, खेल खिलौने आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं।

आपकी बाल कहानी 'पटाखे और दीपावली' में बाल मनोविज्ञान का सुन्दर निरूपण हुआ है। छोटे-छोटे वाक्य एवं संवाद बड़े ही प्रभावी हैं। देखें- 'सुकेशी ने तपाक से कहा- तुम ही न चलाओ, मैं तो चलाऊँगी। पैर मेरी फुलझड़ी से थोड़े ही जला था। सरिता ने फुलझड़ी छुड़ाने के बाद गरम सींक रास्ते में फेंक दी थी,

उसी से जल गया था।'

घनश्याम रंजन

आपका जन्म 15 नवम्बर सन् 1935 को लखनऊ में हुआ था। आपका प्रथम बाल उपन्यास 'उसका नाम दीना' सन् 1970 में प्रकाशित हुआ। रंजनजी श्रेष्ठ बाल कहानीकार होने के साथ-साथ कुशल सम्पादक भी हैं। आपने कई वर्षों तक बच्चों की प्रसिद्ध पत्रिका 'चमाचम' का सम्पादन किया। बाल चित्रकला के क्षेत्र में भी आपकी उपलब्धियाँ सुविस्तृत हैं। रंजनजी ने कई महत्वपूर्ण ग्रंथों एवं संकलनों का सम्पादन भी किया है। 'आर्टिस्ट्स डाइरेक्टरी 1981', 'साहित्यकार निर्देशिका 1992', 'रिफरेन्स इंडिया', 'इण्डो-यूरोपियन हू इज हू' आदि ग्रंथों एवं निर्देशिकाओं में भी आपका उल्लेख हुआ है।

ऊषा सक्सेना

आपका जन्म बुन्देलखण्ड के ऐतिहासिक नगर उरई में हुआ। हाईस्कूल के बाद आपकी सम्पूर्ण शिक्षा इलाहाबाद में सम्पन्न हुई। ऊषाजी ने बाल साहित्य की निबन्ध, समीक्षा, कहानी, नाटक, गीति काव्य, रेडियो नाटक आदि सभी विधाओं में लेखन कर अपनी एक अलग पहचान बनाई है। आपने अन्य भाषाओं की कई कहानियों का हिन्दी में रूपान्तरण किया है। आकाशवाणी व दूरदर्शन से प्रसारण के अलावा हिन्दी के प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में आपकी कहानियाँ निरंतर प्रकाशित होती रहती हैं। बाल साहित्य में आपकी प्रकाशित कृतियों में 'एक बिरवा चन्दन का', 'पथ अभिलाषी' तथा हँसते गाते चेहरे प्रमुख हैं। आपने कई भाषाओं की

लोककथाओं का भी हिन्दी में अनुवाद किया है। ऊषाजी की बाल कहानियों में सरलता एवं सहजता की स्पष्ट झाँकी दर्शनीय है। शैली में रोचकता के साथ-साथ प्रवाह भी होने से बच्चों में आपका लेखन बहुत लोकप्रिय हुआ है।

योगेन्द्र कुमार लल्ला

आपका जन्म 5 जनवरी 1937 को मेरठ जिले के मवाना नामक ग्राम में हुआ था। बाल साहित्य के सृजन, संवर्द्धन तथा प्रचार-प्रसार के लिए समर्पित लल्लाजी ने अपनी प्रखर लेखनी के माध्यम से बाल साहित्य को कई सार्थक कृतियाँ देकर समृद्ध किया है। आप जहाँ एक मौलिक बाल रचनाकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं वहीं एक सम्पादक के रूप में भी विशिष्ट स्थान रखते हैं। आपने बाल पत्रिकाओं एवं बाल साहित्य संकलनों के सम्पादक के रूप में कई नये लेखकों का निर्माण किया है। लल्लाजी मौलिक सृजन के पक्षधर हैं। आपकी बाल साहित्य की प्रमुख प्रकाशित कृतियों में सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा, खेल भी विज्ञान भी, मक्खी और मच्छर की कहानी, तोते जी, स्मृति चित्रण,हड़ताल करो, कंजूस जमींदार आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। विभिन्न सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा आपको कई सम्मानों से अलंकृत किया जा चुका है। आपकी 'स्मृति चित्रण' नामक पुस्तक उत्तर प्रदेश शिक्षा परिषद इलाहाबाद द्वारा इन्टरमीडिएट के पाठ्यक्रम में निर्धारित की गई है।

कौशलेन्द्र पाण्डेय

आपका जन्म 28 दिसम्बर सन् 1937 में रायबरेली जिले के बन्नावा नामक ग्राम

में हुआ था। पिता का नाम चन्द्रशेखर पाण्डेय था। एम.ए. तक की शिक्षा प्राप्त करने के बाद राजकीय सेवा में संलग्न हो गए। बच्चों के लिए आपकी अब प्रकाशित कृतियों में छक्का, टॉफी, देशभक्त रोबोट आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। 'आत्मबोध' नामक बाल कहानी आपकी बड़ी ही प्रेरक एवं उपयोगी बाल कहानी है।

अनंत कुशवाहा

गंगा प्रसाद कुशवाहा 'अनन्त' का जन्म 10 जुलाई 1938 को जौनपुर (उ.प्र.) में हुआ था। अनन्तजी ने राजस्थान तथा मध्यप्रदेश के आदिवासी क्षेत्रों का भ्रमण कर आदिवासियों की संस्कृति, समस्याओं तथा उनकी आवश्यकताओं का भलीभाँति अध्ययन किया। सन् 1975 से 1986 तक जनसम्पर्क विभाग राजस्थान में सीनियर आर्टिस्ट के रूप में कार्य करने के बाद 1986 में आप सुप्रसिद्ध बाल पत्रिका 'बालहंस' के सम्पादक बने। साहित्य एवं चित्रकला के प्रति अटूट अनुराग एवं तापस साधना का ही सुपरणिाम है कि अनन्तजी की लगभग तीन सौ चित्रकथाएँ, दो हजार व्यंग्य चित्र, सौ से अधिक कहानियाँ एवं दो सौ से अधिक कविताएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। आपने राजस्थान के शिक्षा विभाग के लिए बाल काव्य संकलन 'पंख-पंख रंग' का सम्पादन भी किया है। आपको अनेक प्रतिष्ठित सम्मान एवं पुरस्कार प्राप्त हो चुके हैं।

'हिलक हिलक कर रोया' कहानी में आपने भाई-बहन के पवित्र प्रेम का बड़ा ही मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। सरल एवं सटीक संवादों, सुगठित भाषा एवं

भावात्मक शैली से युक्त इस कहानी का एक अंश देखें -

'बहन ने रमजान की ओर देखकर कहा-भाई साहब मैं आपको राखी बाँध दूँ तो आप मना तो नहीं करेंगे ?

रमज़ान चौंक पड़ा। मैं तो मुसलमान हूँ........आप हिन्दू हैं।

उससे क्या ? भाई-बहन के रिश्ते में जाति आड़े नहीं आती। मैं आपको राखी बाँधूंगी।'

डॉ. हरिकृष्ण देवसरे

आपका जन्म 3 मार्च सन् 1940 को गाजियाबाद जिले के चन्द्रनगर नामक ग्राम में हुआ था। बाल साहित्य पर शोध की परम्परा का सूत्रपात करने वाले डॉ. देवसरे ने हिन्दी बाल साहित्य पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत कर जबलपुर विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। आपने बच्चों की सुप्रसिद्ध पत्रिका 'पराग' का सात वर्ष तक सफल सम्पादन किया।

डॉ. देवसरे की उपलब्धियाँ बहुआयामी हैं। दूरदर्शन से आपके दस से अधिक बाल धारावाहिक और पाँच टेली फिल्म प्रसारित हो चुकी हैं। 'दरार', 'खाली हाथ', 'छुट्टी का स्कूल' एवं 'प्रहरी' धारावाहिक विशेष चर्चित हुए। आपने बाल साहित्य को चार चार मानक ग्रंथ दिये हैं जिनके विकल्प आज तक उपलब्ध नहीं हैं।

बच्चों की सौ कविताएँ, बच्चों के सौ नाटक, बच्चों की सौ कहानियाँ और बाल साहित्य समीक्षा पर एक ग्रंथ 'बाल साहित्य : रचना और समीक्षा'। आपकी

दो कृतियाँ 'हिन्दी बाल साहित्य - एक अध्ययन' तथा 'बाल साहित्य : रचना और प्रक्रिया' आपके बाल साहित्य के क्षेत्र में प्रशंस्य योगदान का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। विभिन्न राज्यों के पाठ्यक्रमों में आपकी अनेक रचनाएँ सम्मिलित की गईं हैं। अनेक संस्थाओं द्वारा आपको सम्मानित एवं अभिनन्दित किया जा चुका है। आपने राजा-रानी एवं परियों की पारम्परिक बाल कथाओं पर प्रश्न चिह्न लगाते हुए नवीन प्रयोगों से युक्त मौलिक सृजन को प्रोत्साहित किया है। आपकी 'छींक' नामक प्रसिद्ध बाल कहानी में विक्रम के पिता कहीं जाते समय छींक होने को अपशकुन बताते हैं।

देवसरे जी ने इस धारणा का खण्डन करते हुए अपनी बात कहानी के नायक विक्रम के माध्यम से इस प्रकार कहलाई है-'पिताजी, कैसी बात करते हैं? भला किसी के छींकने से अपशकुन होता है?'

दिनेश चन्द्र दुबे

आपका जन्म 20 जून सन् 1942 को दतिया (म.प्र.) में हुआ था। पिता का नाम भगवान दास दुबे है। आपने बी.ए. तक की शिक्षा झाँसी में तथा विधि स्नातक की उपाधि लखनऊ विश्वविद्यालय से 1962 में प्राप्त की। न्यायिक सेवा में उच्च पदों पर कार्य करते हुए आप मध्यप्रदेश में विभिन्न स्थानों पर पदस्थ रहें। देश के प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में आपकी रचनाएँ निरन्तर प्रकाशित होती रहती हैं। आपकी बाल साहित्य की प्रकाशित कृतियों में नकली राजकुमार, नकली भूत, राजा का न्याय, एक दिन का बादशाह, मृत्युदण्ड आदि विशेष रूप से

उल्लेखनीय हैं।

मनोरमा श्रीवास्तव

आपका जन्म 15 अक्टूबर सन् 1944 में विंसवा (सीतापुर) में हुआ था। आपने एम.ए.(समाज शास्त्र, संस्कृत), साहित्य रत्न, एल.टी., टी.ए.सी. आदि उपाधियाँ प्राप्त कीं। बाल कहानी लेखन के क्षेत्र में आपने विशेष ख्याति अर्जित की है। बाल मनोविज्ञान के अनुकूल रोचक, शिक्षाप्रद एवं मनोरंजक कहानियों के प्रणयन में आप सिद्धहस्त हैं। आपकी 'गीत सिखाऊंगी' एवं 'बोल बोल मैना रानी' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। दोनों बाल कहानियों के पात्र पशु-पक्षी हैं। सरल सुबोध भाषा, सहज कथोपकथन एवं मनोवैज्ञानिक शैली से युक्त आपकी कहानियाँ बच्चों ने बेहद पसन्द की हैं।

विनय कुमार मालवीय

आपका जन्म 16 अक्टूबर सन् 1950 में इलाहाबाद में हुआ था। आपके पिता का नाम लालजी मालवीय है। आपने अपनी लेखनी के द्वारा ईमानदार, सोनू की लापरवाही, सच्चा दोस्त, टॉमी की वफादारी,साहब का परिचय, पढ़ाई का महत्व आदि बाल कहानी संग्रह देकर बाल साहित्य को समृद्ध किया है। उत्कृष्ट साहित्य सृजन के लिए कई संगठनों एवं संस्थाओं ने आपको पुरस्कृत एवं सम्मानित किया है। आपकी बाल कहानियाँ सौद्देश्य एवं शिक्षाप्रद होने के साथ ही साथ रोचक एवं मनोरंजक भी होती हैं। बच्चों को स्वस्थ मनोरंजन एवं शिक्षा प्रदान करना ही आपको बाल कहानियों का मुख्य ध्येय होता है। सरलता, सहजता एवं रोचकता

आपकी सभी कहानियों की विशेषता है। स्वाभाविक कथोपकथन उन्हें और भी प्रभावशाली बना देते हैं। 'बुद्धिमान खरगोश' नामक कहानी में खरगोश की बुद्धिमता का सफल एवं मनोवैज्ञानिक ढंग से चित्रण किया गया है।

विमला रस्तोगी

आपका जन्म मुरादाबाद (उ.प्र.) जिले के सम्भल नामक ग्राम में हुआ था। आपने अर्थशास्त्र एवं हिन्दी विषय में परास्नातक की उपाधि प्राप्त की। बचपन में ही बालकों को प्रौढ़ बनाता आधुनिक प्रदूषण आपकी चिन्ता का प्रमुख विषय है। आप बच्चों की मुक्त मुस्कान एवं निश्छल व्यवहार को कायम रखने और उनके चहुँमुखी विकास के उद्देश्य को लेकर बाल कहानियों के सृजन में निरत हैं। आपकी प्रकाशित कृतियों में विश्व की श्रेष्ठ लोककथाएँ, मणि की परख, सपनों का संसार आदि प्रमुख हैं। आपकी कहानी, नाटक, कविता एवं आलेख के रूप में लगभग सौ रचनाएँ आकाशवाणी दिल्ली से प्रसारित हो चुकी हैं। सरल एवं बोधगम्य भाषा-शेली के कारण आपकी कहानियाँ बच्चों को खूब पसन्द आती हैं। 'छोटा काम बड़ा काम' में समाजसेवा का भाव कितने सफल तरीके से आपने व्यक्त किया है, देखें- 'जिस दिन विवेक की बहन फिसलकर गिरी, मैंने उसी दिन फैसला कर लिया। सड़क ठीक कराने की अपनी योजना मैंने दोस्तों को बतायी। संयोग से दास्तों ने मुझे सहयोग दिया। हमने अपनी कमीज के लिए मिले रुपयों को इस काम में लगाया है।'

लक्ष्मीनारायण 'पयोधि'

आपका जन्म 20 मार्च 1957 को महाराष्ट्र के गढ़चिरौली जिले के ग्राम अंकीसा में हुआ। पिता का नाम मल्लैया ताटी तथा माँ का नाम गंगा देवी था। आपने आदिवासी बच्चों के लिए प्रचुर मात्रा में उपयोगी साहित्य सृजित किया है। आपकी वनवासी क्रांतिवीर, सम्बन्धों के एवज में, तितली परी, कुक्कू के गीत, रामबोला, इन्द्रधनुष के घेरे में आदि कृतियाँ विशेष उल्लेखनीय हैं।

आदिम कल्याण विभाग मध्यप्रदेश, म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल, भारतीय बाल कल्याण संस्थान कानपुर आदि संस्थानों द्वारा आपको पुरस्कृत एवं अलंकृत किया जा चुका है। आपने 'समझ झरोखा' नामक बाल पत्रिका का कई वर्षों तक सफल सम्पादन किया।

सुधीर सक्सेना 'सुधि'

आपका जन्म 11 जुलाई 1959 को अजमेर (राजस्थान) में हुआ था। आपने स्नातक की उपाधि प्राप्त करने के बाद पत्रकारिता प्रारम्भ की। आपने अनेक दैनिक, साप्ताहिक एवं मासिक पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादकीय विभाग में कार्य किया। आकाशवाणी और दूरदर्शन से भी आपकी अनेक रचनाएँ प्रसारित हो चुकी हैं। आपने राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा आयोजित राज्य स्तरीय काव्य प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त किया। विद्यार्थी जीवन में उत्कृष्ट लेखन के लिए उपकुलपति पदक से सम्मानित हुए। बाल कहानी संकलन पर राजस्थान साहित्य अकादमी का शम्भूदयाल सक्सेना पुरस्कार प्राप्त किया। सहज कथोपकथन एवं मनोवैज्ञानिक शैली से युक्त आपकी यथार्थपरक कहानियाँ सफलता एवं सार्थकता

की परिधि का स्पर्श करती हैं। भाई-बहन के पवित्र प्रेम एवं ऊँच-नीच में समानता का भाव जागृत करती आपकी बाल कहानी 'तीसरी राखी' का यह अंश देखें-

'रक्षाबंधन का दिन आया। भावना ने थाली सजाई। अपने दानों भाइयों को तिलक किया, उनको राखी बाँधी और फिर मिठाई खिलाई। तभी दरवाजे पर आहट हुई। भावना बोली - लगता है तीसरा भैया भी आ गया। सबने दरवाजे की ओर देखा। सामने आठ-नौ साल का एक लड़का खड़ा था। माँ चौंकी- अरे, यह तो अपने पड़ौसी शर्माजी का घरेलू नौकर है। भावना बोली- नौकर उनका है लेकिन मेरा तो छोटा भैया है।'

विनोद कुमार श्रीवास्तव

आपका जन्म 18 अप्रैल सन् 1965 को रायबरेली जिले के अकोड़ी नामक ग्राम में हुआ। पिता का नाम गंगा प्रसाद श्रीवास्तव है। स्नातक की शिक्षा प्राप्त करने के बाद आप बैंक में कार्यरत हैं। आपका साहित्यिक उपनाम अन्जाना 'विनोद' है। आपकी बाल कहानियाँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में निरन्तर प्रकाशित हो रही हैं।

रमाशंकर

आपका जन्म 10 अक्टूबर 1970 को रायबरेली में हुआ था। पिता का नाम श्यामलाल है। आपकी शिक्षा अधिक नहीं हो सकी पर जीवन के वास्तविक अनुभवों ने आपकी कहानियों को बेहद प्रभावी बना दिया है। वृक्षमित्र, देश रक्षा, नन्दा की समझदारी, नैनी और राजा जैसे बाल कहानी संग्रह इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

सरल एवं सुगठित भाषा शैली से युक्त आपकी कहानियाँ सफल एवं चर्चित हुई हैं।इन कहानियों में बड़ी रोचकता और सहजता के साथ उपयोगी सीख एवं संदेश निहित हैं। चार शर्तें नामक कहानी की ये पँक्तियां दृष्टव्य हैं - 'भइया भोलानाथ, तुम्हारी तरह घर में बैठकर एक पल भी हमसे नहीं रहा जाता। हमारे लिए तो आराम करना हराम है। इसलिए मैं खेती के काम में हमेशा जुटा रहता हूँ। इसी बहाने थोड़ा-थोड़ा करके खेत का काम भी निपट जाता है और समय भी कट जाता है। काम के साथ-साथ शरीर की अच्छी कसरत भी हो जाती है। रात बड़े मजे से कट जाती है।'

नागेश पाण्डेय 'संजय'

आपका जन्म शाहजहाँपुर (उ.प्र.) जिले के खुटार नामक ग्राम में 2 अगस्त सन् 1974 को हुआ था। आपके पिता का नाम श्री बाबूराम पाणडेय है। आपने रूहेलखण्ड विश्वविघालय से एम.कॉम. करने के बाद बी.एड. किया है। आपने बच्चों के लिए प्रचुर मात्रा में प्रेरक एवं शिक्षाप्रद बाल कहानियों का प्रणयन किया है। पिछली सदी के आखिरी दशक में जो बाल कहानीकार उभरकर सामने आये उनमें 'संजय'जी का प्रमुख स्थान है। आपने कई बालोपयोगी कृतियाँ बाल साहित्य जगत को प्रदान की हैं, इनमें नेहा ने माफी मांगी, आधुनिक बाल कहानियाँ, अमरूद खट्टे हैं, मोती झरे टप-टप आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

'मेहनत और किस्मत' नामक बाल कहानी में टीनू मेहनत करके पैसा कमाने में विश्वास करता है किन्तु बीनू भाग्य पर भरोसा रखता है। इस बात को नागेशजी

ने बड़ी रोचकता के साथ कहानी में व्यक्त किया है। बीनू किस्मत आजमाने के लिए लाटरी के टिकट खरीद लेता है किन्तु वे खाली निकल जाते हैं। टीनू पटाखे बेचकर पैसा कमाता है। इस कथानक को नागेशजी ने सफलता के साथ कथाबद्ध किया है। बालकों में मेहनत करके पैसा कमाने की प्रेरणा देती हुई इसी कहानी की कुछ पँक्तियां दृष्टव्य हैं -'टीनू ने सोचा कितना अच्छा रहे कि वह भी इन बच्चों की तरह आतिशबाजी बेचे। इससे जो आमदनी होगी उससे वह ढेर सारी चीजों के साथ मनचाही चीजें भी खरीद सकेगा। टीनू ने देर न की।'

....

....

नवम् अध्याय

प्रमुख बाल नाटककार

नवम् अध्याय

प्रमुख बाल नाटककार

बाल साहित्य का सृजन विशेष रूप से नाटक लिखने का कार्य बहुत ही चुनौतीपूर्ण है। साहित्य में यह अकेली ऐसी विधा है जिसमें लेखक को अपनी ओर से कुछ भी कहने का अवसर नहीं मिलता। बाल साहित्य को लेकर अब तक हुए विभिन्न विमर्शों और गोष्ठियों में विद्वानों में इस बात पर सदैव सहमति रही है कि बाल नाटक विशुद्ध रूप से बच्चों के लिए ही लिखे जायें। वे बड़ों के लिए न हों, अर्थात उनकी संवेदना बच्चों की अपनी हो। वे विषय को न केवल समझ सकें अपितु उससे ऐसी आत्मीयता अनुभव करें मानो वह नाटक के पात्रों में अपनी ही अनुभूतियों को बाँट रहे हों। नाटक के पात्र बच्चों के 'मैं' को तो तृप्त करें ही साथ ही उन्हें सामाजिक तथा सांस्कृतिक सम्बन्धों की भी पहचान करा सकें। यहाँ यह भी आवश्यक है कि यह पहचान इस तरह से हो कि वह बच्चों के मस्तिष्क पर बोझ न बने बल्कि उनके अस्तित्त्व में ही रच-पच जाये। यहीं पर मनोरंजन और कल्पनाशक्ति की अनिवार्यता का प्रश्न उभरता है। प्रकारान्तर में मनोरंजन फिर एक नाजुक मसला है, क्योंकि उसकी सामग्री फूहड़ भी हो सकती है। प्रायः बहुत से लेखक फूहड़ता और कुघड़ता को ही हास्य और मनोरंजन का उपादान मान लेते हैं।

ऐसी स्थिति में सुयोग्य नाटककारों को अपने कथानक के लिए बहुत ही सतर्क होकर सामग्री का चयन करना पड़ता है। बच्चों में अनुकरण की अद्‌भुत क्षमता होती है। उनके विकसित होते निर्दोष मन पर बहुत शीघ्र प्रभाव पड़ता है। वह रेत पर खिंची लकीर की तरह नहीं बल्कि पत्थर अंकित छवि की तरह होता है।[1] ऐसे में बालक की कल्पना शक्ति दूषित न होने पाये यह ध्यान रखने का उत्तरदायित्व भी नाटककार का ही होता है।

प्रख्यात साहित्यकार विष्णु प्रभाकर के अनुसार 'बाल नाटकों का लेखक जब सामग्री की खोज में व्यग्र होता है तब उसके सामने कई प्रश्न विचारणीय होते हैं।' बाल नाटकों के लेखन में यूँ तो अनेक लेखकों ने प्रयास किये हैं किन्तु जिन नाटककारों की लेखनी बाल मन पर गहरा प्रभाव छोड़ पाने में सफल हुई है उनमें जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द, रामनरेश त्रिपाठी, हरिकृष्ण प्रेमी, नर्मदा प्रसाद खरे, उमाकान्त मालवीय, केशव चन्द्र वर्मा, कुदसिया ज़ैदी, सरस्वती कुमार दीपक, देवराज दिनेश, विष्णु प्रभाकर, राधेश्याम प्रगल्भ, डॉ. मस्तराम कपूर उर्मिल, रेखा जैन, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, डॉ. हरिकृष्ण देवसरे आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। कुछ प्रमुख नाटककारों का परिचय यहाँ प्रस्तुत है :-

रामेश्वर दयाल दुबे

आपका जन्म 10 जुलाई सन 1909 ई. में मैनपुरी जिलान्तर्गत हिन्दपुर नामक ग्राम में हुआ था। आपने एम.ए. (हिन्दी)साहित्य रत्न तक की उच्च शिक्षा प्राप्त

1. बाल नाटक – सृजनात्मक सार्थकता : विष्णु प्रभाकर, पृ.95

की। आपने अपने जीवन के 40 वर्ष हिन्दी प्रचार में लगाये। आपका परिपक्व अनुभव अभिलाषी, भारत के लाल, क्या यह सुनी कहानी, मां ये कौन ?, कुकड़ूँ कूँ, फूल और काँटा, डन्डा और बाँसुरी आदि कृतियों में प्रस्फुटित हुआ है।

दुबे जी ने बाल साहित्य की अनेक विधाओं में सार्थक सृजन किया है। बाल नाटकों के लेखन में आपको अप्रितम सफलता प्राप्त हुई है। आपने बच्चों के लिये प्रेरक-रोचक एवं शिक्षाप्रद बाल नाटकों का मौलिक सृजन किया है। देश के नौनिहालों में एकता तथा समानता का सन्देश 'हम सब एक समान' बाल नाटक के माध्यम से दिया है। मौलिक पात्र चयन सटीक एवं प्रभावी सम्वादों के कारण ये नाटक बच्चों में सफलता की भावना को जागृत करने में पूर्ण रूपेण सफल हुआ है।

हाथ के पंजे की पांचों अँगलियाँ अपने को श्रेष्ठ बताती हैं। किन्तु नाटक का प्रमुख पात्र अगूँठा (दादा) सबको एक समान बताता है। संवादों का सुन्दर एवं प्रभावी प्रदर्शन दृष्टिगत है:-

हम सब एक समान।
भिन्न-भिन्न आकार भलें हो
भिन्न हमारे काम भले हों
जब मिलते हैं तब होते हैं हम सब एक समान॥
उंगली अलग न कुछ कर पाती।
मिल जाती थप्पड़ बन जाती

1. बालवाणी दिसंबर 1994, पृष्ठ - 17

दादा का भी साथ मिला तो

फिर मुक्का बलवान॥

दादा हम सब एक समान

हम सब एक समान॥ [1]

रामेश्वर दयाल जी ने अपने नाटकों के माध्यम से बच्चों को बहुत ही उपयोगी जानकारियाँ एवं प्रेरणाँ प्रदान की हैं। गलती एवं हेमन्त नामक बाल नाटक आपके उल्लेखनीय नाटक हैं।

हेमन्त नामक बाल नाटक में आपने ऋतुओं के माध्यम से दो भाइयों में अटूट प्रेम तथा आपसी सद्‌भाव को बड़ी ही मनोवैज्ञानिक शैली में प्रभावी ढंग से व्यक्त किया है। भाइयों का अपनी माँ के प्रति आदर भाव का भी सुन्दर निदर्शन हुआ है। दोनों भाई (शरद एवं हेमन्त) जहाँ अपनी माँ (बसुमती) का समुचित आदर करते हैं। वहीं माता का भी ममत्व दोनों बच्चों के लिए उमड़ पड़ता है। इसका अनुपम चित्रण आपके नाटक में हुआ है।

माँ (बसुमती) का प्यार अपने बेटों के लिये समान होता है। माँ अपने बेटे को जाने से कुछ दिन रोकती है देखें-

वसुमती- अरे बेटा! इतनी क्या जल्दी है ? दीपावली तो आ जाने दे। हेमन्त से भी मिल लेगा।

नाटक में संवाद कितने रोचक एवं प्रभावी बन पड़े हैं, देखें-

'आ गये भैया! हेमन्त, बस तेरे ही लिये रुका था। माँ के खेत देखने गया था।

फसल बड़ी अच्छी है। भैया हेमन्त! घर गृहस्थी तो तू ही सम्हाल सकता है। दीपावली पर लक्ष्मी का पूजन अच्छी तरह करना।' दुबे जी ने कई बालोपयोगी नाटकों का सृजन किया है। बाल नाटकों के प्रणयन में आपका स्मरणीय एवं अनुकरणीय योगदान है।

विष्णु प्रभाकर

हिन्दी साहित्य जगत में विष्णु प्रभाकर जी का नाम बड़े ही सम्मान के साथ लिया जाता है। आपका जन्म 21 जून सन 1912 ई. में मुजफ्फर नगर (उ.प्र.) के मीरापुर नामक ग्राम में हुआ था। आपके पिता का नाम श्री दुर्गा प्रसाद एवं माता का नाम श्रीमती महादेवी था।

आपने मैट्रिक की परीक्षा सन 1926 ई. में उत्तीर्ण की उसके बाद पंजाब विश्व विद्यालय से हिन्दी भूषण, प्रभाकर, बी.ए. आदि की उपाधियाँ अर्जित कीं। आपने सरकारी सेवा में रह कर कई वर्षों तक अनेक पदों पर कार्य किया। आपका विवाह 30 मई 1939 ई. में कनखल (हरिद्वार) की सुश्री सुशीला मांगलिक के साथ सम्पन्न हुआ।

आपने अपने जीवन में जो साहित्यिक साधना की वह अनेक ग्रन्थों के रूप में फलित हुई। आपने साहित्य जगत को लगभग 150 सार्थक पुस्तकें प्रदान की हैं। जिसमें करीब 30 पुस्तकें बाल साहित्य की समृद्धि में सहायक हुई हैं।

आपने राजनीति के साथ ही साथ अभिनय के क्षेत्र में भी अपना योगदान किया। आपकी कई कृतियों का देश विदेश की कई भाषाओं में अनुवाद हुआ है।

आपने कई ग्रन्थों का सम्पादन भी किया है। आपको कई देशों की यात्रा का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आपको कई देशों की संस्कृति व रीतिरिवाजों को जानने समझने का अवसर मिला। आपकी प्रमुख प्रकाशित कृतियों में अर्द्धनारीश्वर (1992) शरद चन्द्र चट्टोपाध्याय के जीवन पर आधारित आवारा मसीहा (1974), सत्ता के आर पार (1981) आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आपकी अनेक पुस्तकें विभिन्न पुरस्कारों से पुरस्कृत भी हो चुकी हैं।

विष्णु प्रभाकर जी ने कई कालजयी बाल नाटकों का प्रणयन किया है। वैसे तो आपने साहित्य की प्रत्येक विधा पर अपनी लेखनी के जौहर दिखलायें हैं। किन्तु आपके द्वारा लिखित नाटकों को जो सार्थकता, लोकप्रियता एवं सफलता प्राप्त हुई है वह आपको एक सफल नाटककार के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए पर्याप्त है।

'पानी आ गया' आपका उल्लेखनीय बाल नाटक है। सटीक एवं प्रभावोत्पादकतायुक्त सम्वादों तथा सुबोध भाषा शैली के कारण ये बाल नाटक बच्चों के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। इस नाटक में बालकों की समर्पित भाव से एक दूसरे के लिये कार्य करने, देश की उन्नति के लिये अपने को समर्पित कर देने की प्रेरणा को दर्शाया गया है। एक देश में लोगों के पाप कर्म करने से वहां का पानी सूख जाता है। जल के संकट से जनता व्याकुल हो उठती है। तब उस राज्य के होनहार दो नागरिकों को (इरा और दीपांकर) परी देश का राजपुरोहित

1. श्रीमती रतन शर्मा स्मृति न्यास स्मारिका : सं. डॉ. रतनलाल शर्मा, पृ. 24

तथा परी देश की रानी इस संकट से छुटकारा पाने का उपाय बताते हैं। सुबोध भाषा का एक उदाहरण दृष्टव्य है। बृंद- मैं परी देश का राजपुरोहित हूँ। तीनों लोकों में इस ताल का पानी सब से मीठा था। तुम्हारे देश के लोगों ने अपना रक्त बहाकर देश को दुश्मनों से मुक्त कराया था। उसी बलिदान के कारण यह सूखा ताल पानी से भर गया था, लेकिन इतने वर्ष स्वतंत्र रहने के बाद तुम लोग फिर पापी बन गये। पानी फिर गायब हो गया।[1]

विनोद रस्तोगी

आपका जन्म फर्रुखाबाद जनपद के शमसाबाद नामक ग्राम में 12 मई सन 1923 में हुआ था। अल्पायु में ही आपमें सृजन के कण अंकुरित होने लगे। रस्तोगी जी की साहित्य साधना का शुभारंभ 1938 में हुआ। तबसे आज तक उन्होंने साहित्य की सभी विधाओं यथा- काव्य, उपन्यास, नाटक, एकांकी नाटक, रेडियो नाटक में अपने बहुरंगी सृजन से साहित्य के भण्डार में उल्लेखनीय वृद्धि की है। यों तो आप नाटक साहित्य के निर्माण के प्रति विशेष रूप से जागरूक रहे हैं और नाटककार के रुप में उनकी छवि भी विकसित हुई है, किन्तु अन्य विधाओं में भी जमकर लिखा है। कुल 45 पुस्तकों के रूप में उनका लेखन प्रकाशित है। जहां तक नाटकों का प्रश्न है, उन्होंने अपना ध्यान बालकों की ओर भी लगाया और बाल नाटकों की रचना कर बालकों के मनोरंजन के साथ-साथ उनके चारित्रिक विकास की दिशा में अपना प्रशंस्य रचनात्मक अवदान प्रस्तुत किया।

रस्तोगी जी 20 वर्षों तक (1960 से 1980) इलाहाबाद आकाशवाणी केन्द्र

में नाट्य निदेशक के पद पर कार्यरत रहे। आप श्रेष्ठ बाल नाटक लेखन के साथ ही साथ कुशल नाट्य निदेशक एवं सफल अभिनेता के रूप में भी प्रतिष्ठित रहे हैं। आपके द्वारा रचित कई नाट्य कृतियां पुरस्कृत हो चुकी हैं। सन 1954 में आपका नाटक 'आजादी के बाद' उ.प्र. शासन द्वारा पुरस्कृत किया गया। बाल नाटकों के प्रणयन में आपका अप्रितम योगदान है। बहू की विदा, काले कौए, गोरे हंस, गोलियों का जादू, कायाकल्प, सूत पुत्र, जनतंत्र जिन्दाबाद, नन्हें हाथ, बर्फ की मीनार, टीले का चमत्कार, मीठी बोली बोलो, भारत के लाल, चमत्कारी मंत्र, भाई चारे की कहानियां, क्षमा का दण्ड, नया जन्म, हम भारत के लाल, बड़ों का झूठ, पिंकी की पूसी, नौनिहालों की कहानियाँ, अपना-अपना दर्द आपकी प्रमुख प्रकाशित कृतियां हैं।

आपके नाटकों का आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों से प्रसारण एवं स्तरीय मंचों पर मंचन हुआ है। कई भाषाओं में आपकी नाट्य कृतियां अनूदित हुई हैं। विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं शिक्षा-बोडों के पाठ्यक्रमों में आपकी नाट्य कृतियाँ (रचनाएं) सम्मिलित की गई हैं। भावात्मक शैली पर आधारित आपकी बहू की विदा नामक नाट्य कृति विशेष उल्लेखनीय है।

सन 1982 में उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी द्वारा उत्कृष्ट नाट्य लेखन के लिए आप सम्मानित किये गये। बाल नाटक लेखन के द्वारा बाल साहित्य के संवर्द्धन में आपके असाधारण एवं विशेष योगदान को दृष्टिगत रखते हुए उ.प्र. हिन्दी संस्थान ने 1994 में डॉ. रामकुमार वर्मा बाल नाटक

सम्मान से समालंकृत किया।

संतोष साहनी

श्रीमती साहनी का जन्म पश्चिम पंजाब (अब पाकिस्तान में) में हुआ था। आपने बी.ए. तक की शिक्षा कश्मीर में प्राप्त की। हिन्दी साहित्य में हिन्दी भूषण उपाधि प्राप्त की। अंग्रेजी से एम.ए. दिल्ली विश्वविद्यालय से किया। इसके अतिरिक्त आपने बी.एड की उपाधि भी प्राप्त की। आपने अनेक विद्यालयों में अध्यापक एवं प्रधानाचार्य के पदों पर रहकर अपनी सेवाएं अर्पित कीं।

साहित्य एवं संगीत के प्रति बचपन से ही आपके अटूट अनुराग था। आपने कुछ दिनों तक शांति निकेतन में रवीन्द्र संगीत, शास्त्रीय संगीत तथा लोक संगीत का अध्ययन किया।

श्रीमती साहनी ने कई महत्वपूर्ण यात्रायें भी की हैं। आप तीन वर्षों तक बी.बी.सी. लन्दन के हिन्दुस्तानी विभाग में प्रोड्यूसर के पद पर कार्यरत रहीं। अनेक देशों के प्रसिद्ध हिन्दी अनुवादित नाटकों में अभिनय किया। बी.बी.सी. लन्दन में आपने पाश्चात्य शास्त्रीय संगीत, थियेटर, पत्रकारिता आदि कोर्स किये। विदेशों में प्रवास एवं यात्राओं के समय में आपने कई सार्थक कहानियां, लेख, जनजीवन साहित्य, यात्रा संस्मरण आदि लिखे जो भारत की स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए।

भारत वापस आने पर आपका मुंबई (बम्बई) में प्रसिद्ध सिने अभिनेता बलराज साहनी के साथ विवाह सम्पन्न हुआ। बच्चों के चहुँमुखी विकास के लिये

आप सदैव प्रयासरत रहीं हैं। आपने बच्चों की अभिनय क्षमता को विकसित करने के लिए जुहू बाल रंगमंच की स्थापना की।

आपने बालकों के लिए प्रेरक, शिक्षाप्रद एवं रोचक बाल साहित्य का प्रणयन किया है। वैसे तो आप प्रौढ़ साहित्य की सुप्रसिद्ध लेखिका हैं, किन्तु बाल नाटकों के सृजन में भी आपका अप्रितम स्थान है।

आपकी बाल साहित्य की प्रमुख प्रकाशित कृतियों में बगुला भगत, टुनटुन गुड़िया और डब्बू कुत्ता, मीना ते मैना, कुरमुर ते चुरमुर आदि उल्लेखनीय हैं। एक थी लड़की, पर्वत की सैर, पर्वत के गीत, मीना और पप्पू आदि आपके दूरदर्शन धाराहिक हैं। चुहिया कुमारी जी गीत संगीत नाटिका की एच.एम. वी. कैसेट द्वारा रिकार्डिंग की गई।

आप द्वारा रचित समस्त बाल साहित्य बाल संसार समग्र नाम से दो खण्डों में हिन्दी प्रचार संस्थान, वाराणसी द्वारा 1995 में प्रकाशित किया जा चुका है। आपने हिन्दी में बाल साहित्य तो लिखा ही है किन्तु पंजाबी में भी आप द्वारा सार्थक बाल साहित्य का प्रणयन हुआ है।

आपकी उत्कृष्ट साहित्यिक सेवाओं के लिये आपको पंजाब साहित्य अकादमी, अखिल भारतीय बाल साहित्य एवं प्रशिक्षण सम्मेलन दिल्ली तथा हिन्दी प्रचार संस्थान वाराणसी आदि संस्थाओं ने सम्मानित एवं पुरस्कृत किया है।

राम निरंजन शर्मा 'ठिमाऊ'

आपका जन्म 6 जून सन 1930 ई. में पिलानी (राजस्थान) में हुआ था।

आपने व्याकरण मध्यमा की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात अंग्रेजी तथा संस्कृत से परास्नातक की उपाधियां प्राप्त कीं। आपने बी.एड. की उपाधि भी अर्जित की। आपने अपना समस्त जीवन सृजन, अध्ययन एवं अध्यापन में ही लगाया। सन 1993 ई. में बिड़ला शिक्षण संस्थान, पिलानी के प्रधानाचार्य पद से सेवामुक्त हुये।

आपने बाल साहित्य की विभिन्न विधाओं पर सार्थक सृजन किया है, जो देश की अनेकानेक पत्र पत्रिकाओं में बिखरा पड़ा है। ठिमाऊ जी ने बाल नाटकों का उत्कृष्ट सृजन कर बाल साहित्य जगत में अपने आपको सुप्रतिष्ठित किया है।

ठिमाऊ जी की प्रखर लेखिनी के द्वारा स्तुति पुंज, बालोत्सव, टमरक टूँ, कल के नागरिक, बैमाता का आंक, मटकाचर, सच्ची कमाई, पेड़ पशु-पक्षियों की कहानियां आपका बच्चा, बढ़ते कदम, जनजागरण आदि बालोपयोगी कृतियाँ बाल साहित्य जगत को प्राप्त हुई हैं। आप द्वारा लिखे नाटकों का देश के कोने-कोने में मंचन हुआ है। आपकी रचनाओं एवं वार्ताओं का प्रसारण आकाशवाणी, जयपुर से प्राय: होता रहा है।

आपकी उत्कृष्ट सृजन क्षमता को दृष्टिगत रखते हुए देश की कई संस्थाओं ने सम्मानित एवं पुरस्कृत किया है।

'सुपनो साचो होगो' नामक राजस्थानी नाटक के सफल मंचन (स्वयं) एवं लेखन के लिए सन 1960 में श्री कृष्ण कुमार बिड़ला द्वारा 200/- रु. के नकद पुरस्कार से पुरस्कृत किए गए। आप सन 1976 में विशिष्ट सेवाओं हेतु बिरला एजुकेशन ट्रस्ट, पिलानी द्वारा सम्मानित किए गए, सच्ची कमाई (बाल नाटक) एवं

आपका बच्चा (अभिभावकोपयोगी लेख) के लिए आपको बिड़ला एजुकेशन ट्रस्ट, पिलानी द्वारा 200 रु. की नकद धनराशि देकर पुरस्कृत किया गया।

उत्कृष्ट हिन्दी बाल साहित्य लेखन के लिये नवम्बर 1987 में भारत सरकार की संस्था दि काउन्सिल फार चाइल्ड एजुकेशन नई दिल्ली द्वारा आप सम्मानित किये गये। समर्पित साहित्यिक अवदान के लिये भारतीय बाल कल्याण संस्थान, कानपुर द्वारा भी आप समालंकृत किये गये।

'बढ़ते कदम' नामक बाल नाटक की पुस्तक श्रीमती शकुन्तला सिरोठिया पुरस्कार समिति इलाहाबाद द्वारा पुरस्कृत की गई। बाल साहित्य तथा राजस्थानी में शोध कार्य करने वाले शोधार्थियों के शोध ग्रन्थों में ठिमाऊ जी को व्यक्तित्व एवं कृतित्व का विस्तृत विवेचन किया गया है।

डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार-' श्री राम निरंजन शर्मा ठिमाऊ एक प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार हैं। वे राजस्थानी और हिन्दी में समान रूप से सफल रचना करने में समर्थ हैं। कुछ दिनों पूर्व मैंने उनका राजस्थानी कथा संग्रह वैमाता का अंक पढ़ा था। ये कहानियाँ जहां लोक जीवन का चित्रण करती हैं वहां हास्य और विनोद की प्रचुर सामग्री भी उपस्थित करती हैं। कल के नागरिक और टमरक टूँ क्रमशः हिन्दी और राजस्थानी के नाटक हैं। जो श्रोताओं और दर्शकों को समान रूप से प्रभावित करते हैं।'

ठिमाऊ जी के बाल नाटकों में बाल प्रवृत्तियों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण हुआ है। आपके नाटक जहां बच्चों को देश का अच्छा नागरिक बनने की प्रेरणा देते

हैं वहीं हास्य एवं मनोरंजन की नयनाभिराम झलकियां प्रस्तुत करते हैं। बालकों के जीवन निर्माण एवं चारित्रिक विकास के लिये आपके बाल नाटक बहुत ही उपयोगी एवं सहायक सिद्ध हुए हैं। कर्तव्य नामक नाटक आपकी सार्थक सृजन क्षमता का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस नाटक में एक आदर्शवादी शिक्षक के कर्तव्य का सुन्दर निरूपण किया गया है। एक छात्र (जिनकू) अपने बीमार पिता की दवा एवं रोजी-रोटी के लिये मजदूरी करने के कारण पढ़ने नहीं जा पाता। मास्टर जी उसके पिता से उसे पढ़ाने के लिये कहते हैं। बीमार पिता अपनी निर्धनता के कारण जिनकू को स्कूल भेजने की असमर्थता प्रकट करते हैं। मास्टर जी उन्हें समझाते हैं तथा कुछ रुपये देकर पुनः जिनकू को पढ़ान के लिये प्रेरित करते हैं। इस कथानक को ठिमाऊ जी ने बड़ी ही रोचकता के साथ प्रस्तुत किया है।

सरल एवं बोधगम्य भाषा का एक उदाहरहण प्रस्तुत है- मास्टर जी- (जेब से रुपये निकालते हैं।) ये लो सौ रुपये। पचास रुपये तो जिनकू की छात्रवृत्ति के हैं, जिनकू पिछली कक्षा में प्रथम रहा, अतः सरकार की तरफ से पचास रुपये हर महीने छात्रवृत्ति मिलेगी तथा पचास रु. मैं तुम्हें उधार दे रहा हूँ। जब तुम मजदूरी पर जाने लगो तो धीरे-धीरे चुका देना।

ठिमाऊ जी के नाटकों में उत्पाद्य कथावस्तु तदभव एवं प्रादेशिक शब्दों के साथ ही साथ मनोवैज्ञानिक शैली का आधिक्य देखने को मिलता है। वैसे तो ठिमाऊ जी ने बाल साहित्य की विभिन्न विधाओं पर सार्थक सृजन कर उन्हें समृद्धि प्रदान की है, किन्तु बाल नाटकों के लेखन में आपको विशेष सफलता प्राप्त हुई है।

सच्चा मित्र, टमरक टूं आदि आपके उल्लेखनीय बाल नाटक हैं।

डॉ. चक्रधर नलिन

आपका जन्म 19 जुलाई सन 1929 ई. में रायबरेली जिलान्तर्गत अटौरा बुजुर्ग नामक ग्राम में हुआ था. आपके पिता का नाम श्री रामेश्वर द्विवेदी तथा माता का नाम शीतला देवी था। आपने एम.ए. साहित्य रत्न, एल.एल.बी. तक की शिक्षा प्राप्त की।

डॉ. नलिन जी ने अपनी प्रखर लेखिनी के द्वारा लगभग साठ कृतियाँ साहित्य जगत को प्रदान की हैं। नलिन जी बाल साहित्य के समर्थ रचनाकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं। आपने बाल साहित्य की कहानी, गीत, यात्रा वृतान्त, संस्मरण, नाटक, जीवानी एवं पत्र आदि विधाओं को अपने लेखन से समृद्ध किया है।

नलिन जी की बाल साहित्यकार होने के साथ ही साथ प्रौढ़ साहित्य के भी सफल रचनाकार के रूप में जाने जाते हैं। आपने बड़ों के लिए भी सार्थक एवं उपयोगी साहित्य का सृजन किया है।

नलिन जी की बाल साहित्य की प्रमुख प्रकाशित कृतियों में- नन्हीं चिड़िया चुहक रही, सूर्य निकलने वाला है, बच्चे देश महान के , बाल ग्राम गीत, अच्छे मार्ग चले जीवन, अन्तरिक्ष में जाने वाले हम, खुशियों के गीत, आओ बच्चो नहीं रुकेंगे, आलोक शिखा, टिम-टिम तारे, वन का फूल, देश भक्ति के गान, सोने का पिंजड़ा, नीला घोड़ा, सूझबूझ की कहानियाँ, सोने की वर्षा, फूल माला, देश के लिए, बलिदान का पथ, जंगल की प्यास, नदी का संदेश, आजादी की पुकार, देशभक्त

आजाद, सबसे सुन्दर फूल, सत्य का पुजारी, महामानव की विजय, रघुकुल का दीपक, अंधा कवि, वीरांगना, जय हनुमान, बिल्ली रास्ता काट गई, आजादी के उपासक एवं हमारे प्रेरणा श्रोत आदि विशेष रूप से उल्लेनीय हैं। अर्ध शतक कृतियों के प्रणेता डॉ. नलिन एक सफल रचनाकार होने के साथ ही साथ कुशल सम्पादक भी हैं। आपने अरुणोदय (पाक्षिक), स्वधारा (मासिक), बाल साहित्य समीक्षा (मासिक), वीर वैसवारा (मासिक) आदि पत्रिकाओं के विशेषांकों का कुशल सम्पादन भी किया है। डॉ. चक्रधर नलिन की कुछ श्रेष्ठ रचनाओं के अनुवाद मराठी, गुजराती एवं पंजाबी आदि भाषाओं में हो चुके हैं।

लखनऊ, ग्वालियर एवं रीवा के आकाशवाणी केन्द्रों तथा दूरदर्शन केन्द्रों से आपकी रचनाओं का प्रसारण विविध कार्यक्रमों के अन्तर्गत होता रहता है।

नलिन जी कई साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्थाओं के उच्च पदाधिकारी के रूप में सक्रिय हैं। नलिन जी को उत्कृष्ठ सृजन एवं विशिष्ट साहित्यक सेवाओं के लिये कई सम्मानोपाधियों एवं पुरस्कारों से समालंकृत किया जा चुका है।

सन 1989 में कन्हैया लाल प्रागदास स्मारक समिति, लखनऊ ने आपको काव्य श्री की सम्मानोपाधि से विभूषित किया। इसी वर्ष बाल साहित्य संस्थान, लखनऊ द्वारा आप बाल साहित्य श्री अलंकरण से समलंकृत किये गये। सन 1990 में सरस्वती प्रतिष्ठान रायबरेली ने आपको सरस्वती सम्मान से समालंकृत किया। इसी वर्ष बाल साहित्य संस्थान, बलिया, महर्षि बालकुमार साहित्य विद, पुणे (महाराष्ट्र), भारतीय बाल कल्याण संस्थान, कानपुर आदि संस्थाओं द्वारा भी आप

सम्मानित हुए।

सन, 1992 में वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन नैनी ने प्रशस्ति पत्र देकर सम्मानित किया। बाल साहित्य संस्कृति विकास संस्थान बस्ती एवं अन्तर्राष्ट्रीय ज्ञान-विज्ञान, कला संस्कृति संस्थान, लखनऊ ने प्रशस्ति पत्र देकर सम्मानित किया। हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ने आपको साहित्य महोपाध्याय की मानक उपाधि से विभूषित किया।

डॉ. चक्रधर नलिन बाल साहित्य के प्रतिष्ठित रचनाकार हैं। आपने लेखनी से बाल साहित्य की विभिन्न विधायों को समृद्धि प्रदान की है। किन्तु बाल नाटकों के प्रणयन में आपका अप्रितम योगदान है। नलिन जी ने सरल एवं सुबोध भाषा में बालकों के लिए प्रेरक एवं उपयोगी बालक नाटकों का सार्थक सृजन किया है।

पौराणिक कथावस्तु पर आधारित दो मित्र नामक नाटक में संवाद कितने प्रभावी बन पड़े हैं, देखें-

श्रीकृष्ण (जिज्ञासा से) : कौन आया है ?

द्वारपाल :- (नम्रता से) एक दीन-हीन, खाली सिर, एक कपड़ा पहने, धूर भरे पैर लिए, आपसे मिलने के लिये उतावला हैं। वह अपना नाम सुदामा-ब्राह्मण बताता है।

श्रीकृष्ण:- (याद करके) जाओ द्वारपाल उन्हें जल्दी ले आओ।

नलिन जी के नाटकों में संवाद चुटीले, पात्रानुकूल भाषा चित्ताकर्षक शीर्षक चयन एवं गवेषणात्मक शैली का सुन्दर समन्वय देखने को मिलता है। आपने

पौराणिक एवं ऐतिहासिक कथा वस्तु पर आधारित अनेक नाटकों का सार्थक सृजन किया है। सरल एवं सुबोध भाषा चुटीले एवं तीखे संवाद तथा मनोवैज्ञानिक शैली से युक्त महामानव की विजय नामक नाट्य कृति संत कवि कबीर दास के प्रेरक जीवन पर आधारित आपकी उल्लेखनीय पुस्तक है। जय हनुमान नामक कृति हनुमान जी के पराक्रम, बुद्धि विवेक, स्वामिभक्ति, समर्पण एवं उनके प्रेरक व्यक्तित्व को उद्घाटित करती हैं।

नलिन जी ने बालकों के चारित्रिक एवं मानसिक विकास के लिये कई नाट्य कृतियों का सृजन किया है। अपनी संस्कृति एवं महापुरुषों के जीवन प्रसंगों को आपने नाट्य पुस्तकों में बड़ी कुशलता एवं रोचकता के साथ पंक्तिबद्ध किया है। हिन्दी के समर्थ महाकवि सूरदास के सम्पूर्ण जीवन वृतान्त को अंधा कवि नामक कृति में नलिन जी ने सरल, सरस, सुबोध प्रवाहमयी भाषा में वर्णित किया है।

आपकी कृतियाँ जहां बालकों को अपने महापुरुषों के प्रेरक जीवन प्रसंगों से अवगत कराती हैं वहीं उनके समक्ष अपनी पुरातन संस्कृति एवं ऐतिहासिक तथ्यों की भी नयाभिराम झलकियाँ प्रस्तुत करती हैं।

शंकर सुल्तानपुरी

आपका जन्म 1 दिसम्बर सन् 1940 ई. में सुल्तानपुर जिले के परऊपुर नामक ग्राम के एक संभ्रान्त कायस्थ परिवार में हुआ था। आपके पिता का नाम श्री जे.पी. श्रीवास्तव था। आपने प्रयाग विश्वविद्यालय एवं लखनऊ विश्वविद्यालय से हिन्दी साहित्य एवं भाषा विज्ञान से परास्नातक की उपाधि अर्जित की। 10 वर्ष की

अल्पायु से ही आप सृजन साधना में रत हो गये। आपकी प्रथम रचना बालसखा में प्रकाशित हुई।

शंकर सुल्तानपुरी एक ऐसा नाम है जो किसी परिचय का मोहताज नहीं है। हिन्दी साहित्य जगत में शंकर सुल्तानपुरी जी का नाम बड़े ही आदर एवं सम्मान के साथ लिया जाता है। शंकर सुल्तानपुरी जी बाल साहित्य के उन्नयन, संवर्द्धन एवं प्रतिष्ठा हेतु चिन्तित हैं वे कालजयी बाल साहित्य के सृजन की प्रेरणा देते हुए नवोदित बाल साहित्यकारों को प्रोत्साहित करते हुए कहते हैं– प्रकाशन की आतुरता से बचते हुए नवोदित बाल साहित्यकारों को ऐसा बाल साहित्य सृजित करने की आवश्यकता है जो बच्चों को आदिकाल से लेकर समसायिक स्थितियों परिस्थितयों से जोड़ने में और उन्हें देश का सच्चा नागरिक बनाने में सहायक सिद्ध हों। नई पीढ़ी के लेखकों को बच्चों के लिये लिखने से पूर्व यह आत्मावलोकन अवश्य करना चाहिए कि वे जो कुछ लिख रहे हैं वह कहां तक बच्चों के मनोविज्ञान ग्राह्य क्षमता और उनकी अपेक्षाओं के अनुरूप है।

शंकर सुल्तानपुरी को लेखन की प्रेरणा अपनी मां श्रीमती रामादेवी के धार्मिक संस्कारों एवं सन् 1948 को देश में आजादी के लिए छिड़ी हलचल से मिली।

आपने छात्र जीवन में ही सत्यवादी हरिश्चन्द्र नामक बाल नाटक की रचना की। इसके पश्चात उन्होंने नाट्य प्रतियोगिता में भाग लेकर महाकवि तुलसी दास की भूमिका सफलतापूर्वक अभिनीत की। जिसके लिये आप पुरस्कृत भी किये गये। फिर तो बाल नाटकों के सृजन एवं मंचन की एक लम्बी श्रृंखला बनी।

फलस्वरूप भक्त प्रहलाद, भवन ध्रुव, गुरु भक्त एकलव्य एवं देश भगत सिंह आदि उल्लेखनीय बाल नाटकों का प्रणयन हुआ। शंकर सुल्तानपुरी जी की सृजन ऊर्जा उनके तापस जीवन का प्रतिफल है, जो उपने प्रस्फुटन काल से लेकर आज तक चुकी नहीं है। और भविष्य में भी वह चुक न सकेगी। अभावग्रस्त-आर्थिक संकट उनकी अपराजेय जिजीविषा एवं रचनाधर्मिता की गति को अवरुद्ध नहीं कर सकी और न कर सकेगी।

शंकर सुल्तानपुरी जी ने नाटक, कहानियाँ कविताएं, संस्मरण, जीवनी, उपन्यास, प्रौढ़ साहित्य, बाल साहित्य, यात्रा वृतान्त आदि विधाओं पर लगभग 450 पुस्तकों (चार सौ पचास) का प्रणयन कर साहित्य जगत को जो समृद्धि प्रदान की है उसके लिए आप सदैव स्मरणीय रहेंगे।

आपकी रचनाएं देश की सुप्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में पैंतालीस वर्षों से (सन् 1952 ऊंची नाक) से लगातार प्रकाशित होती आई है। कहानी, प्रहसन, झलकियाँ एवं नाटकों सहित करीब 200 रचनाएं आकाशवाणी से प्रसारित हो चुकी हैं। जिनमें चतुर चौकड़ी, नटखट चौकड़ी, दूसरा भरत, रिहर्सल, दूध का धोया, दादी अम्मा आदि बाल नाटक विशेष रूप से चर्चित हुए हैं।

दिल्ली दूरदर्शन द्वारा सन 1983 में प्रसारित किये गए धारावाहिक मुखड़ा क्या देखें दर्पण में, ने लोकप्रियता एवं सफलता के विविध आयामों का संस्पर्श किया।

शंकर सुल्तानपुरी जी द्वारा सृजित आत्मा नहीं बिकती, इज्जतदार आदमी,

दुखभजन की शोधयात्रा, सुबह की तलाश महाकवि मजनू, ऊंची नाक, केशव की केश-साधना, आदि नाट्य कृतियाँ एवं बच्चे मन के सच्चे तथा दूध का धोया आदि बाल नाटकों की कृतियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

सुल्तानपुरी जी को उनकी साहित्यिक सेवाओं एवं उत्कृष्ट सृजन के लिये अनेक संस्थाओं ने सम्मानित एवं पुरस्कृत किया है।

भारतीय बाल कल्याण संस्थान द्वारा 1982 में दिल्ली में आयोजित सारस्वत सम्मान समारोह में उत्कृष्ट बाल साहित्य लेखन हेतु आपको तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने पुरस्कृत एवं सम्मानित किया। समग्र बाल साहित्य सेवा हेतु 1994 में उ.प्र. हिन्दी संस्थान ने आपको सूर सम्मान से समलंकृत किया। बाल नाटकों के सार्थक एवं उत्कृष्ट सृजन के लिए बाल नाटकों में अविस्मरणीय एवं अनुकरणीय कीर्तिमान स्थापित करने वाले शंकर सुल्तानपुरी जी को सन 1995 में उ.प्र. हिन्दी संस्थान, लखनऊ ने डॉ. रामकुमार वर्मा बाल नाटक पुरस्कार से विभूषित किया।

शंकर सुल्तानपुरी जी ने रोचक, प्रेरक, उपयोगी एवं मनोरंजक बाल नाटकों का प्रणयन किया है। आपके बाल नाटक पौराणिक एवं ऐतिहासिक कथावस्तु पर आधारित होते हैं। जो बालकों में महज बनने की प्रेरणा भरते हैं वहीं मनोरंजक एवं रोचक भाव भूमि पर भी आधारित होते हैं जो बच्चों का स्वस्थ मनोरंजन करते हैं। गुड़िया चोर का मुकदमा आपका एक मनोरंजक नाटक है। इसमें चुटीले एवं मनोरंजक संवादों को देखते ही बनता है। देखिए-

सेठ– तू चुप पापड़ चन्द्र! दरोगा जी मेरी धरमपत्नी मेरे लिए पन्द्रह गुझिये छोड़कर मायके गयी थी। उनमें से सात गुझिये लापता हैं।

दरोगा– बाकी आठ आपके पेट में समा गयी होगीं।

सेठ– ना–ना अपने मरे बाप की कसम, मैंने सूंघीं तक नहीं।

दरोगा– आपके घर में चोरी हो सकती है ?

सेठ– ना–ना मच्छर भी तो घुसे तो घुट के मर जावे।

डॉ. बानो सरताज

आपका जन्म 17 जुलाई सन 1945 ई. में यवतमाल (महाराष्ट्र जिले के पांढ़र कवड़ा नामक ग्राम में हुआ था। आपके पिता स्व. शाह मुहम्मद इब्राहीम डिप्टी कलेक्टर तथा माँ डॉ. एस.के. शाह मेडिकल ऑफीसर थीं।

आपने हिन्दी, उर्दू एवं इतिहास विषयों में परास्तनातक की उपाधि अर्जित की। एम.एड. करने के पश्चात आपने शिक्षा शास्त्र पर ही पी-एच.डी. की।

एक घूँट जहर, भीख तथा अन्य कहानियाँ, तीसरे रास्ते के मुसाफिर, मैं आभारी हूँ, नटखट बन्दर, सच्चे का बोलबाला आदि आपकी हिन्दी की प्रमुख प्रकाशित कृतियाँ हैं।

आपने कई बालोपयोगी कृतियों का सृजन किया है। महाराष्ट्र राज्य पाठ्य पुस्तक मंडल की कक्षा तीन की भूगोल तथा इतिहास की पाठ्य पुस्तकों का मराठी से उर्दू में अनुवाद भी किया है।

आपको उत्कृष्ट लेखन एवं साहित्यिक सेवाओं के लिए निम्नांकित पुरस्कार

एवं सम्मान प्राप्त हुए हैं। 1982 में समसात अध्ययन न्यास, मुंबई द्वारा आयोजित निबंध स्पर्धा प्रतियोगिता में द्वितीय पुरस्कार। 1983 में सारिका सर्वभाषा कथा प्रतियोगिता में कहानी पागल खाना पुरस्कृत। 1984 में सुषमा में प्रकाशित कहानी जवाब दर जवाब पर वीडियो फिल्म गुड़िया का निर्माण। 1984 में कादम्बनी की चतुर्थ कथा प्रतियोगिता में प्रतिबन्ध कहानी को द्वितीय पुरस्कार। 1984 में अखिल भारतीय उर्दू कथा स्पर्धा में उसके लिए कथा को प्रथम पुरस्कार। 1988 में धर्मयुग में प्रकाशित कहानी तीसरे रास्ते के मुसाफिर पर कशमकश धारावाहिक का एक एपीसोड नेशनल नेट वर्ग में प्रसारित।1992 में चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट द्वारा कविताएं पुरस्कृत। 1993 में महाराष्ट्र राज्य उर्दू साहित्य अकादमी द्वारा कथा संग्रह दायरों के कैदी को द्वितीय पुरस्कार। 1994 में महाराष्ट्र राज्य हिन्दी अकादमी द्वारा भीख एवं अन्य कहानियाँ पर मुंशी प्रेमचन्द्र पुरस्कार। 1995 में राष्ट्रीय सहारा साप्ताहिक द्वारा आयोजित कथा स्पर्धा में त्याग कथा को प्रथम पुरस्कार। 1995 में उसके लिए कथा संग्रह पर महाराष्ट्र राज्य अकादमी तथा 1996 में बिहार उर्दू अकादमी द्वारा पुरस्कार। 1995 में जिला परिषद जन्द्रपुर (महाराष्ट्र) द्वारा आदर्शशिक्षिका का सम्मान। 1996 में भारतीय बाल कल्याण संस्थान, कानपुर द्वारा सम्मानित।

डॉ. बानो सरताज जी ने बच्चों के लिए प्रेरक एवं उपयोगी बाल नाटकों का प्रचुर मात्रा में सृजन किया है। छोटे-छोटे संवादों में अपनी बात सफलतापूर्वक कह देने में आप सिद्ध हस्त हैं। आपके बाल नाटकों में सरस, सरल एवं सुबोध भाषा, उत्पाद्य कथावस्तु एवं मनोवैज्ञानिक शैली का समन्वय देखने को मिलता है।

सटीक एवं चुटीले संवाद आपके नाटकों की विशेषता है। साहसी बिन्नी, अंग्रेजी का भूत आपके नवीन एवं उल्लेखनीय बाल एकांकी है।

सच्चे का बोल बाला नामक नाटक में संवादों की प्रभावोत्पादकता का एक उत्कृष्ट उदाहरण दृष्टव्य है-

शिक्षक:- और तुम बच्चे मुझसे अच्छे हो। क्योंकि सच्चे हो, दिल में कोई बात नहीं रखते। सच को प्रकट कर देते हो। सच्चे का बोल बाला होता है। जीवन में सच का दामन कभी न छोड़ना बच्चो।

बाल नाटकों के लेखन में डॉ. बानो सरताज को अप्रितम सफलता प्राप्त हुई है। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, संकलनों, पुस्तकों में प्रकाशित बाल नाटक आपकी उत्कृष्ट लेखन शैली का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। बाल नाटकों के प्रणयन में श्री जयदेव शर्मा कमल, श्री हरिवल्लभ बोहरा हरि, देवी शंकर मिश्र अमर, सुशील कुमार सिंह आदि के नाम भी विशेष उल्लेखनीय हैं।

....

....

दशम् अध्याय

प्रमुख बाल उपन्यासकार

दशम् अध्याय

प्रमुख बाल उपन्यासकार

बच्चों के लिए बाल उपन्यासों का लेखन अपेक्षाकृत बहुत विलम्ब से प्रारम्भ हुआ। हिन्दी में बाल उपन्यासों के प्रादुर्भाव का श्रेय अंग्रेजी साहित्य को जाता है, जबकि इसके तत्व हमारे प्राचीन कथा साहित्य में विद्यमान थे। प्रकाशित रूप में जो बाल उपन्यास सामने आये उनमें गुलीवर की यात्रा, सिन्दबाद जहाजी, रॉबिन्सन क्रूसो, तीन तिलंगे, रॉबिन हुड, अलीबाबा और चालीस चोर आदि का नाम आता है। ये सभी बाल उपन्यास अंग्रेजी से अनूदित होकर हिन्दी बाल पाठकों तक पहुँचे। बच्चों ने इन्हें बड़े चाव से पढ़ा। बँगला भाषा से भी कई उपन्यासों का बच्चों के लिए हिन्दी में अनुवाद किया गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पत्रिकाओं के सार्थक प्रयासों के फलस्वरूप कई बाल उपन्यास धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुए। इस दौर में बच्चों के लिए पौराणिक, देशभक्तिपूर्ण, हास्य, तिलिस्म, ऐतिहासिक और जासूसी उपन्यास लिखे गए। साप्ताहिक हिन्दुस्तान और धर्मयुग जैसी बड़ों की पत्रिकाओं ने भी इस क्षेत्र में उल्लेखनीय भूमिका निभाई। सातवें दशक के उत्तरार्द्ध में बाल पॉकेट बुक्स के प्रादुर्भाव ने तो मानो क्रांति ही ला दी। इस काल में बाल उपन्यासों की बाढ़ सी आ गई। सातवें और आठवें दशे में तो

स्थिति यह थी कि हर महीने विभिन्न पॉकेट बुक्स प्रकाशनों के माध्यम से विविध विषयों पर लगभग दो दर्जन नये नये बाल उपन्यास बच्चों तक पहुँच रहे थे, परन्तु कॉमिक्स और चित्रकथाओं के हमले से यह स्थिति अधिक समय तक कायम न रह सकी। बाल उपन्यासों के लेखन और प्रकाशन की बहुलता के चलते अनेक बाल बाल उपन्यास तो कुछ ही दिनों में ओझल और विस्मृत हो गए, जबकि डॉ. हरिकृष्ण देवसरे का आल्हा-ऊदल, राधेश्याम प्रगल्भ का एक कटोरा पानी, कुणाल श्रीवास्तव का लव-कुश, व्यथित हृदय का गंगापुत्र, रत्नप्रकाश शील का नन्हें जासूस, वीर कुमार अधीर का बच्चों के सौदागर और ओमप्रकाश का चाँद से आगे जैसे उपन्यास लम्बे समय तक चर्चा का विषय बने रहे।

वर्तमान में बाल साहित्य की इस लोकप्रिय विधा का विकास आहत हुआ है। टीवी और चित्रकथाओं ने बाल उपन्यास जैसी लम्बी कथा की पठनीयता को लगभग समाप्त कर दिया है। बच्चों की अरुचि के चलते बाल उपन्यास लिखना और छापना दोनों ही जोखिम का काम हो गए हैं। पत्रिकाएँ भी अब इनकी उपेक्षा करने लगी हैं। इस संक्रमणकाल में भी जो प्रमुख लेखक इस विधा को समृद्ध करने के लिए प्रयासरत हैं उनमें से कुछ की चर्चा हम इस अध्याय में करेंगे।

डॉ. मस्तराम कपूर 'उर्मिल'

आपका जन्म 22 दिसम्बर सन् 1926 में सकड़ी (हिमाचल प्रदेश) में हुआ था। आपने एम.ए. की उपाधि अर्जित की। उसके बाद आपने बाल साहित्य पर 'हिन्दी बाल साहित्य का विवेचनात्मक अध्ययन' नामक शोध प्रबन्ध प्रस्तुत कर

पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

डॉ. मस्तराम कपूर ने बाल साहित्य की विभिन्न विधाओं पर सार्थक सृजन कर उन्हें समृद्ध किया है। आपने सन 1951 से साहित्य सृजन का शुभारंभ किया और आज भी निष्ठा एवं समर्पण भाव से से इसी सारस्वत यज्ञ में अपनी समिधायें अर्पित कर रहे हैं। इस लम्बे सृजन काल में आप द्वारा कई सार्थक ग्रन्थों का प्रणयन हुआ, जो बाल साहित्य की विविध विधाओं के संबर्द्धन में विशेष रूप से सहायक सिद्ध हुए हैं।

'उर्मिल' जी ने बाल साहित्य की नाटक, कहानी, समीक्षा, निबन्ध, जीवनी आदि विधाओं पर सार्थक एवं उपयोगी सृजन कर अपनी वैविध्य सृजनधर्मिता का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया है। आपको बालकों की अभिरुचियों, क्रियाओं एवं भाव भंगिमाओं को शब्द चित्रों में चित्रित करने में अपूर्व सफलता प्राप्त हुई है। दिल्ली, जागो और जगाओ, रास लो संवाद, बच्चे और हम आदि पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन कर अपनी कुशल सम्पादन कला का उत्कृष्ट प्रमाण प्रस्तुत किया है। आपने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रशंस्य कार्य किया है।

उर्मिल जी बाल साहित्यकार होने के साथ ही साथ प्रौढ़ साहित्यकार के रूप में भी प्रतिष्ठित हैं। आपने बड़ों के लिए भी सार्थक एवं उपयोगी सृजन किया है। 'उर्मिल' जी ने वैसे तो बाल साहित्य की विविध विधाओं पर उत्कृष्ट सृजन किया है, किन्तु बाल उपन्यासों के प्रणयन में आप अद्वितीय हैं।

आपने विपथगामी, रास्ता बन्द काम चालू, तीसरी आँख का दर्द, नाक का

डॉक्टर, एक नदी बाँझ, एक अटूट सिलसिला, किशोर जीवन की कहानियाँ, दण्ड का पुरस्कार, आजा होजा, सहेली, निर्भयता का वरदान, नीरू और हीरू, सँपेरे की लड़की, चोर की तलाश, ऐंगा बैंगा, सुनहरा मेमना, एक थी चिड़िया, बच्चों के एकाँकी, बच्चों के नाटक, पाँच बाल एकाँकी आदि कृतियाँ देकर साहित्य जगत को सम्पन्नता प्रदान की है। आपने विभिन्न भाषाओं की रचनाओं का अनुवाद भी किया है।

आपको उत्कृष्ट लेखन एवं बाल साहित्य समीक्षा पर उल्लेखनीय कीर्तिमानों को स्थापित करने हेतु उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ से सन् 1964 में ग्यारह हजार की राशि देकर आचार्य कृष्ण विनायक फड़के बाल साहित्य समीक्षा सम्मान से अलंकृत किया।

इन्द्रधनुषी रचना धर्मिता के धनी डॉ. मस्तराम कपूर उर्मिल जी की वैविध्य सृजन क्षमता प्रशंसनीय ही नहीं बल्कि अनुकरणीय भी है। साहित्य के संवर्द्धन सृजन एवं सम्पादन में अविस्मरणीय अवदान के लिये आप सदा सर्वदा याद किए जाएंगे।

डॉ. त्रिलोकी नाथ ब्रजबाल

आपका जन्म 13 नवम्बर सन 1932 ई में भारत के प्रसिद्ध तीर्थ स्थल मथुरा में हुआ। आपके पिता आचार्य श्री गंगा प्रसाद शास्त्री पुराण एवं मंत्र शास्त्र के श्रेष्ठ विद्वान थे। आपने हाई स्कूल, इण्टर की परीक्षाएं बरेली नगर में रहकर दीं। बी.ए. राजस्थान विश्वविद्यालय से एवं. एम. ए. (हिन्दी) आगरा विश्वविद्यालय से

किया। इसके पश्चात आपने एल.टी. का प्रशिक्षण भी प्राप्त किया। मा. स. विश्वविद्यालय बड़ौदा से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। इनके अतिरिक्त आपने हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की, रॉयल ड्राइंग सोसाइटी लंदन की तथा अखिल भारतीय धर्म संघ; दिल्ली की कई परीक्षाएँ भी सफलता पूर्वक उत्तीर्ण की।

मानद उपाधियाँ:- आपकी साहित्यिक सेवाओं के उपलक्ष्य में भारत कीअनेक साहित्यिक संस्थाओं ने साहित्याचार्य, साहित्य मनीषी, बृज साहित्यचार्य तथा ब्रज रत्न आदि मानद उपाधियाँ ससम्मान प्रदान की हैं।

नाटकों में आपने अनेक बार अभिनय किया। सुन्दर गायन, बाद-विवाद और अन्ताक्षरी प्रतियोगिताओं में पुरस्कृत हुये।

डॉ. माधव राव रेंगुलपाटी के मतानुसार प्राय: सरस्वती और लक्ष्मी की तरह मस्तिष्क और हृदय में भी सौहार्द्र कम ही देखा जाता है किन्तु डॉ. व्रजबाल में यह नैसर्गिक विरोध नहीं है। आपका मस्तिष्क अपनी सहज शक्ति से अपना गम्भीर चिन्तन कार्य करता रहता है और आपका कवि हृदय कल्पना के अज्ञात लोकों में मुक्त विचरण भी करता रहता है। आप अत्यन्त भावुक हैं किन्तु व्यवहार में अत्यन्त सजग भी हैं।

सम्पादन:- आप एक कुशल एवं विद्वान सम्पादक हैं। आपने बृज भाषा एवं हिन्दी साहित्य की अनेक कृतियों का सफल सम्पादन किया है। जिनमें से दम्पत्ति द्युति भूषण, श्री जंगल पद वन्दन, तेलगू और हिन्दी लोकोक्तियों का तुलनात्मक अध्ययन, द्वाभा, देश चेतना और बदलता स्वर, एक छन्द, चार

हस्ताक्षर, बिम्ब प्रतिबिम्ब, सेवक साधक, आत्मजा तथा संस्कृति साहित्य और भाषा आदि उल्लेखनीय हैं।

प्रकाशित कृतियाँ:-

1. मीत मेरे गीत तेरे (1960)
2. एक डाल तीन फूल (1961)
3. अपरिभाषित सत्यांश (1964)
4. पाथेय (1968)
5. इन्दु एक बिन्दु दो (1964)
6. मेरे गीत तेरे (1978)
7. गेया (1976)
8. कल्पना के चित्र (1980)
9. पानी के प्राचीर
10. बहादुर प्रदीप

आचार्य ब्रजबाल ने एक अन्य विधा को भी अपने लेखन का विषय बनाया है। जिसे स्वयं उन्होंने 'चिन्तन' नाम दिया है। विषय और प्रस्तुतिकरण दोनों ही दृष्टियों से यह गद्य काव्य से भिन्न विधा है। गद्य काव्य में जहाँ किसी सामान्य से विषय पर अपने मन के उद्‌गारों को काव्यात्मक शैली में व्यक्त किया है वहीं चिन्तन वर्ग की रचनाओं में जीवन जगत की किसी विशेष स्थिति अथवा समस्या को लेकर उस पर विवेचना, विश्लेषण अथवा तर्क के माध्यम से विचार किया गया है। इन विषयों के रूप में ग्रहीत कुछ स्थितियाँ तात्कालिक है तो कुछ अन्य शाश्वतिक।

इनकी भाषा सरल, प्रभावी एवं मुहावरेदार है। कहीं-कहीं व्यंग्य का हल्का पुट भी अपना रंग दिखा रहा है। आकार की संक्षिप्तता और विचारों की कसावट को देखते हुए इन्हें विचारक लघु निबन्ध कहा जा सकता है। इस प्रकार की उनकी लगभग 18 रचनाएं मुझे प्राप्त हुई हैं। जिनमें से लगभग सभी अप्रकाशित हैं।

डॉ. ब्रजबाल जी अत्यन्त आकर्षक एवं प्रभावी व्यक्तित्व के धनी हैं। उदीयमान साहित्यकारों को हर प्रकार से सहयोग, सुझाव एवं मन्त्रणा देकर प्रोत्साहित करते रहते हैं। सन 1977 में प्रकाशित बुद्धि की परख नामक बालकथा संकलन में उनकी बुद्धि की परख, श्रवण कुमार, ज्ञानी बालक अष्टावक्र, आज्ञाकारी शिष्य उद्दालक, वीर बालक अभिमन्यु, ध्रुव की तपस्या, सत्यवादी हरिश्चन्द्र, राजा दिलीप, विशिष्ट बुद्धिमानी का फल, स्वामी रामदास एवं चैतन्य महाप्रभु आदि कथाएं संकलित हैं। वस्तुतत: आप एक सुधी बाल साहित्यकार हैं।

डॉ. शोभनाथ लाल

आपका जन्म गाजीपुर (उ.प्र.) जिलान्तर्गत पदुमपुर नामक ग्राम में 7 फरवरी सन 1936 ई. में हुआ था। आपके पिता का नाम श्री अक्षय लाल तथा माता का नाम श्रीमती सुमित्रा देवी था।

आपने अंग्रेजी, राजनीतिशस्त्र, हिन्दी आदि विषयों में परास्नातक की उपाधि अर्जित की। स्वर्णपदक सहित आपने बी.एड. की उपाधि प्राप्त की। हिन्दी विषयान्तर्गत आपने पी-एच.डी. की उपाधि अर्जित की। आपने 20 वर्षों तक एन.सी.सी. में रहकर (1967 से 1987) अपनी सेवाएं समर्पित कीं। इसके पश्चात आपने मेजर रैंक के गरिमायुक्त पद से त्याग पत्र दे दिया।

डॉ. शोभनाथ लाल जी की सृजन यात्रा सन 1959-60 से प्रारंभ हुई। आज भी यह यात्रा थमी नहीं है बल्कि 37 वर्षों का परिपक्व अनुभव लेकर अविराम गति से बढ़ती ही जा रही है। लगभग सैंतीस -अड़तीस वर्ष की सृजन साधना के

फलस्वरूप डॉ. शोभनाथ लाल जी द्वारा दो दर्जन से अधिक सार्थक कृतियाँ बाल साहित्य जगत को प्राप्त हुई हैं। डॉ. शोभनाथ लाल श्रेष्ठ समीक्षक, कुशल सम्पादक एवं सार्थक सृजनधर्मी के रूप में प्रतिष्ठित हैं। आपने बालकों के लिए प्रेरक एवं उपयोगी साहित्य का सृजन तो किया ही है साथ ही प्रौढ़ साहित्य के सार्थक सृजन कर्ताओं में भी आप अग्रगण्य हैं।

आप बाल साहित्य के तपोनिष्ठ सृजनधर्मी हैं। बालकों के चारित्रिक विकास एवं बुद्धि विकास के लिये आपने बहुत सा उपयोगी साहित्य लिखा है। बच्चों को स्वस्थ मनोरंजन प्रदान करने का कार्य भी आपने अपनी रचनाओं के माध्यम से पूरा किया है। आपने बाल साहित्य की विविध विधाओं पर उत्कृष्ट साहित्य की सर्जना की है। आपने बाल गीत, बाल उपन्यास, समीक्षा आदि विधाओं पर सौद्देश्य रचनाओं का प्रणयन किया है। जो कई कृतियों के रूप में बाल साहित्य जगत को प्राप्त हुआ है।

डॉ. शोभनाथ लाल का रचना संसारः- डॉ. लाल ने कई सार्थक कृतियाँ देकर बाल साहित्य की श्रीवृद्धि की है। आपकी प्रकाशित कृतियाँ उत्कृष्ट सृजन-क्षमता का प्रत्यक्ष प्रमाण प्रस्तुत करती हैं। आपकी बाल साहित्य की प्रकाशित कृतियों में -ता-ता-थैया (1983), गुलाब और चम्पा (1984), हँसते फूल महकते फूल (1985), प्रेरक कथाएँ (1986), उज्जवल कथाएं (1986), बालगीत भारती (1988), चलो खेलने चाँद पर (1986), माँ मैं दिल्ली जाउँगी (1990), अंटी बंटी पप्पू पम्म (1990), न्याय का पक्ष (1990), बाज, बहेलिया और कबूतर

(1990), जंगल में जब हुआ चुनाव (1990), बंटी लौट आया (1993), अक्कड़ बक्कड़ लाल बुझक्कड़ (1993), धरती के बाल गीत (1993), हमारा देश (1993), सीपियाडेला की सैर (1993), जहाँ-जहाँ पग धरे राम ने(1993), और कबूतर उड़ गया(1996), धवरी की वापसी(1996)आदि कृतियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

डॉ. शोभनाथ लाल जी ने कई महत्वपूर्ण संकलनों, पत्रिकाओं के विशेषांकों एवं स्मारिकाओं का सफल सम्पादन भी किया है। आप द्वारा सम्पादित कौए की देश भक्ति, अपने पराए, एक पिकनिक ऐसी भी, गुब्बारे वाला, चौबीस बाल कहानियाँ आदि बाल कहानी संग्रह, श्रीराम सिंहासन सहाय मधुर अभिनन्दन ग्रन्थ, पुष्पक यात्रा, बाल साहित्य समीक्षा (मधुर विशेषांक) आदि पत्रिकाएँ आपकी उत्कृष्ट सम्पादन कला का प्रत्यक्ष प्रमाण प्रस्तुत करती हैं।

विशेष उपलब्धियाँ एवं सम्मानः- आपकी उत्कृष्ट सृजनधर्मिता एवं साहित्य संवर्द्धन तथा उन्नयन की दिशा में समर्पित भाव से किये गये कार्यों को दृष्टिगत रखते हुए देश के कई सांस्कृतिक एवं साहित्यिक संगठनों, संस्थानों, समितियों, परिषदों ने आपको पुरस्कृत एवं सम्मानित किया है।

चन्द्र-अभियान विषय पर आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता में बी.बी.सी. लन्दन द्वारा सन 1969 में आप पुरस्कृत किये गये। बाल साहित्य के उत्कृष्ट सृजन एवं उल्लेखनीय योगदान हेतु श्रीमती शकुन्तला सिरोठिया बाल साहित्य पुरस्कार, इलाहाबाद से समालंकृत हुए। बाल साहित्य संस्थान, लखनऊ, नागरी बाल साहित्य

संस्थान बलिया, चिल्ड्रेन बुक ट्रस्ट नई दिल्ली भारतीय बाल कल्याण संस्थान, कानपुर, मनीषिका बाल साहित्य पुरस्कार, कलकत्ता आदि संस्थानों ने आपको सम्मानित एवं पुरस्कृत किया है। हिन्दी विधि प्रतिष्ठान बलिया एवं बलिया हिन्दी प्रचारिणी सभा के जनपदीय गौरव समारोह में विशेष रूप से समादृत किए गये।

प्रेरक कथाएं, चलो खेलने चाँद पर, बण्टी लौट आया आदि कृतियाँ विभिन्न संस्थाओं द्वारा पुरुस्कृत की गई। आपका बहुप्रशंसित एवं चर्चित बाल उपन्यास 'सीपियांडेला की सैर' श्रीमती रतन शर्मा स्मृति न्यास बाल साहित्य पुरस्कार, दिल्ली से सन् 1965 में पांच हजार एक रु. की राशि से पुरस्कृत किया गया। श्री सीताराम नाम बैंक, अयोध्या द्वारा 1986 में आप पुरस्कृत किये गये।

आप कई सांस्कृतिक एवं साहित्यिक संस्थाओं के प्रवर्तक, संयोजक, अध्यक्ष, मंत्री एवं सदस्य के रूप में सक्रिय हैं। आपने बलिया में नागरी बाल साहित्य संस्थान की 1986 में स्थापना की। आप इसके संस्थापक महामंत्री के रूप में आपनी सेवाएँ समर्पित कर रहे हैं। डॉ. शोभनाथ लाल द्वारा प्रणीत 'सीपियांडेला की सैर' बालकों में वैज्ञानिक अभिरुचियों को जाग्रत करता एक वैज्ञानिक बाल उपन्यास है। विज्ञान जैसे शुष्क विषय को डा. लाल ने अपनी बाल उपन्यास कृति में बड़े ही रोचकता पूर्ण ढंग से व्यक्त किया है।

'सीपियांडेला की सैर' बाल उपन्यास समीक्षकों की विहंगम दृष्टि से गुजरता हुआ सफलता के उच्च शिखरों तक जा पहुँचा है। समीक्षकों ने इसे श्रेष्ठ एवं बालोपयोगी कृति के रूप में स्वीकार किया है। बाल साहित्य के जाने माने समीक्षक

डॉ. सुरेन्द्र विक्रम के शब्दों में–'सारांश यह है कि 'सीपियांडेला की सैर' उपन्यास उत्कृष्ट बाल साहित्य का नमूना है। ऐसे सुन्दर और रोचक तथा जानकारी से परिपूर्ण उपन्यास के लिये डॉ. लाल बधाई के पात्र हैं।'

प्रस्तुत बाल उपन्यास विज्ञान की रोचक जानकारियों से परिपूर्ण है। क्लोरीन मोनो आक्साइड, पारचूना नक्षत्र, ग्रीन हाउस आदि तकनीकी वैज्ञानिक चीजों को भी लेखक ने बड़े सरल ढंग से समझाया है। 'आकाश में सूराख' के प्रसंग को बड़े विस्तार से प्रस्तुत किया गया है।

'सीपियांडेला की सैर' नामक बाल उपन्यास दैनिक जागरण में धारावाहिक प्रकाशित हो चुका है। आप द्वारा रचित 'जहाँ–जहाँ पग धरे राम ने' शीर्षक से एक लम्बी लेख शृंखला धारावाहिक दैनिक जागरण के परिशिष्ट में प्रकाशित हुई।

डॉ. लाल की गद्य रचनाओं में सरस शब्द चयन एवं सुबोध भाषा का सुन्दर निदर्शन हुआ है। नवीन एवं उत्पाद्य कथा वस्तु पर आधारित आपकी रचनाएँ जहाँ बालकों की नवीनतम एवं वैज्ञानिक जानकारियाँ उपलब्ध कराती हैं वहीं पौराणिक एवं ऐतिहासिक रचनाएँ उनको अपनी पुरातन संस्कृति तथा ऐतिहासिकता की नयनाभिराम झलकियाँ भी प्रस्तुत कराती है।

डॉ. परशुराम शुक्ल

आपका जन्म 6 जून सन् 1947 को कानपुर जिले के सैबसू नामक ग्राम में हुआ था। आपने समाज शास्त्र से परास्नातक की उपाधि कानपुर विश्वविद्यालय(क्राइस्ट चर्च कालेज) से प्राप्त की। 1971 में ही आपने क्राइस्ट चर्च

कालेज में अध्यापन कार्य प्रारम्भ किया। कुछ दिन अध्यापन करने के पश्चात उन्हें वहाँ से किन्हीं कारणोंवश अध्यापन कार्य से मुक्त होना पड़ा। इसके पश्चात सन् 1972 में आप अग्रसेन डिग्री कालेज मऊरानीपुर (झांसी) के समाज शास्त्र विभाग में प्रवक्ता के लिये चुने गये। शुक्ल जी बड़े ही स्पष्टवादी एवं स्वतंत्र विचारों के हैं। प्रबन्धक की अनावश्यक चाटुकारिता न करने के कारण 10 मई सन 1973 को उन्हें यह नौकरी भी छोड़नी पड़ी।

इसके बाद आप 21 नवम्बर 1974 को बुन्देलखण्ड कालेज झाँसी के समाजशास्त्र विभाग में प्रवक्ता हुये। आपके पिता का नाम मंगली प्रसाद तथा माता का नाम श्रीमती रामश्री था। आपका विवाह 13 मई सन 1976 को सौ. विभा के साथ सम्पन्न हुआ।

शुक्ल जी का बचपन बड़ा संघर्षमय एवं अभावग्रस्त रहा। शुक्ल जी ने संघर्षों से कभी हार नहीं मानी। वे सदैव उत्साह एवं नवीन उमंग लेकर उद्देश्य की प्राप्ति हेतु प्रयत्नशील रहे। शुक्ल जी को कठोर परिश्रम एवं संघर्षों के पश्चात प्रत्येक क्षेत्र में सफलता प्राप्त हुई। शुक्ल जी का सृजन बहुआयामी है। आपने बाल साहित्य की विभिन्न विधाओं पर सार्थक सृजन किया है। कहानी, गीत, लेख एकांकी, ऐतिहासिक कथाएं, उपन्यास, लोककथाएं, लघु कथाएँ, शिकार कथाएं, समीक्षात्मक एवं शोध आलेख आदि उपयोगी सृजन कर बाल साहित्य को समृद्ध किया है।

बाल साहित्य की सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में आपकी रचनाएँ प्राय:

प्रकाशित होती रहती हैं। आपने कई बालोपयोगी कृतियाँ देकर बाल साहित्य जगत को सम्पन्नता प्रदान की है। आपकी प्रकाशित कृतियों में सामाजिक असमानता (1987), जासूस परमचन्द के कारनामे (1986), नन्हा जासूस (1989), सुनहरी परी और राजकुमार (1989), मोधिया लोक कथाएँ (1990), कामना (1991), एकता की शक्ति आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

उपलब्धि, पुरस्कार एवं सम्मान:- शुक्ल जी को अपने सृजन काल में कई महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ एवं पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। शुक्ल जी की 35 वृक्ष कथाएँ (तीन भागों में) नन्हें सम्राट में धारावाहिक के रूप में प्राकशित हुई हैं। यह अपने आप में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। चम्पा का बलिदान (1988), तीन मूर्ख (1990) शेर के बच्चे (1992) तथा दो बाल गीत आंखें एवं हाथी और सुपर कन्डक्टिविटी, कहानी रेलों की एवं बीसवीं सदी का विलक्षण आविष्कार रोबोट (1994) आदि रचनाएं चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट ऑफ इंडिया, नेहरू हाउस, नई दिल्ली द्वारा आयोजित अखिल भारतीय बाल साहित्य लेखक प्रतियोगिता में पुरस्कृत की गई तथा चिल्ड्रल बुक ट्रस्ट नई दिल्ली द्वारा आयोजित अखिल भारतीय बाल साहित्य लेखन प्रतियोगिता 1994 में 'भारतीय वन्य जीवन' को दस हजार रुपए (10,000 रु.) का प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया।

समाज कल्याण मंत्रालय भारत सरकार द्वारा मोधिया लोक कथाएँ को वर्ष 1990 में अठ्ठारह हजार (18,000 रु.) रुपये का प्रकाशन अनुदान प्राप्त हुआ।

प्रो. पी. आर. शुक्ल को उत्कृष्ट लेखन एवं बाल साहित्य तथा बाल कल्याण

के लिए समर्पित विशिष्ट साहित्यिक सेवाओं के लिए नागरी बाल साहित्य संस्थान, बलिया ने प्रशस्ति पत्र देकर सम्मानित किया।

हिन्दी अकादमी, हैदराबाद द्वारा हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान हेतु आप 26 जनवरी 1994 को शब्द सम्राट की सम्मानोपाधि से समलंकृत किए गये। आपको पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली द्वारा आयोजित अखिल भारतीय पर्यावरण सुरक्षा प्रतियोगिता 1992 में एक कविता वृक्ष कथा पर पांच हजार रु. (5000 रु.) का प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ।

संप्रति, आप बुन्देल खण्ड कालेज, झाँसी में समाज शास्त्र विभागाध्यक्ष पद पर कार्यरत हैं।

प्रो. पी.आर. शुक्ल ने कई बालोपयोगी बाल उपन्यासों की रचना की है। जो समय समय पर स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में धारावाहिक के रूप में प्रकाशित हुए हैं। प्रो. शुक्ल ने बाल साहित्य की गद्य विधा में सार्थक सृजन किया है। वे गद्य साहित्य के प्रणयन में अप्रितम हैं। आपकी विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित करनी का फल, तीन मूर्ख, मोती की सचाई, बात का घाव, राजवैद्य का चुनाव, बिल्ली का बंटवारा, भयानक टक्कर, सच्चे सपूत, साधु की भीख, हंश और हंसनी, कृष्णा का बलिदान, परोपकार का फल, जटासुर वध, सागर मन्थन, करिश्मा, मेहनत का महत्व, उल्लू की सीख, मूर्खोपदेश, सरस्वती का शाप, धमाका, बिना विचारे जो करे, पदमा का साहस, चीकू और दुष्ट भेड़िया, श्रम की महत्ता, नन्हा जासूस, बन्दर की पूँछ, एवं कृष्ण का विषपान इत्यादि रचनाएं विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

आपके बाल उपन्यासों, कहानियों एवं धारावाहिकों में पारम्परिक उत्पाद्य कथा वस्तु वर्णनात्मक एवं मनोविज्ञानिक शैली, सरल, सुबोध एवं पात्रानुकूल भाषा सहज तथा स्वाभाविक कथोपकथन का अप्रितम समन्वय देखने को मिलता है।

चित्ताकर्षक शीर्षक चयन एवं बाल प्रिय विषय वस्तु आपकी रचनाओं को सार्थकता एवं सफलता के विस्तृत धरातल तक ले जाने में सहायक सिद्ध होते हैं।

आपके उपन्यास प्रेरक, उपयोगी एवं बाल प्रिय होते हैं। वे जहां बालकों को पारम्परिक कथा सौष्ठव का परिचय प्रदान करते हैं वही उन्हें नवीनतम जानकारियाँ भी देते हैं। लोक कथाओं के माध्यम से आप बालकों में विभिन्न लोकांचलों की संस्कृति का बोध कराते हैं।

....

....

एकादश अध्याय

उपसंहार

उपसंहार

परिवार, समाज और प्रकारान्तर देश के उज्ज्वल भविष्य के लिए यह आवश्यक है कि बच्चों को समझदार, संस्कारशील और विचारवान बनाया जाये। जिस समाज में बच्चों को पल्लवित होने के लिए उचित वातावरण नहीं मिलता वह समाज या देश अन्ततः अधोन्मुखी होने लगता है। इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण मिल जायेंगे जो इस बात की सत्यता का समर्थन कर सकते हैं। इसलिए बाल मन को कैसे सांचे में ढाला जाये यह विचार करना और बच्चों को उपयुक्त वातावरण उपलब्ध कराना किसी भी विचारवान समाज की पहली प्राथमिकता होती है। शिक्षक और अभिभावक के समानान्तर ही इस कार्य को सबसे बेहतर और सुनियोजित तरीके से कर सकने की क्षमता केवल उस समाज के बाल साहित्य में ही विद्यमान होती है।

जहाँ तक हिन्दी भाषा के बाल साहित्य की विभिन्न विधाओं की बात है मैंने पिछले अध्यायों में जिन प्रश्नों के उत्तर तलाशते हुए इस विषय की मीमांसा की उनमें कुछ प्रमुख प्रश्न इस प्रकार हैं - बाल साहित्य लेखन की वर्तमान स्थिति क्या है ? क्या यह संतोषजनक है ? हमारी अपेक्षाएँ क्या हैं और वे किस हद तक पूरी हो रही हैं ? बच्चे अपने लिए लिखे जा रहे बाल साहित्य के बारे में क्या

सोचते हैं ? बाल साहित्यकारों की सृजनधर्मिता का समुचित मूल्यांकन और सम्मान हो रहा है अथवा नहीं ? बाल पत्रिकाओं की स्थिति क्या है ? ये पत्रिकाएँ अपने कर्तव्यों के प्रति कितनी सजग हैं ? प्रकाशक अपने दायित्व का निर्वाह कर रहे हैं या नहीं ? ये और ऐसे ही कुछ अन्य प्रश्नों का सिलसिलेवार विश्लेषण करने पर मैं निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुँची-

वर्तमान में हिन्दी बाल साहित्य सभी विधाओं में लिखा तो खूब जा रहा है किन्तु यह इस साहित्य की बिडम्बना ही है कि अधिकांश स्थापित समीक्षक और स्वयं बाल साहित्य के सृजन में लगे लेखक भी इसे उतना प्रतिष्ठापूर्ण नहीं मानते जितना कि बड़ों के लिए लिखा गया साहित्य माना जाता है। इस मानसिकता के चलते बाल साहित्य के सृजन, प्रकाशन और वितरण पर आवश्यकता के अनुरूप परिश्रम नहीं किया जा रहा है।

यह तो निर्विवाद है कि बाल साहित्य का संसार भी उतना ही अनन्त और व्यापक है जितना कि शेष साहित्य का। इसीलिए तो जितनी विधाओं में बड़ों के लिए लेखन हो रहा है, उतनी ही; अपितु उससे कुछ अधिक ही विधाओं में बच्चों के साहित्य का सृजन हो रहा है। इतना अवश्य है कि मानसिक परिपक्वता के मूलभूत और नितान्त स्वाभाविक अन्तर के चलते बाल साहित्य कथ्य, शिल्प और दृष्टि के धरातल पर बड़ों के साहित्य से भिन्न हो जाता है। यह भी सच है कि बाल साहित्य की किसी भी विधा में रचनाकर्म अधिक परिश्रम, अधिक समर्पण और

बच्चों के मनोविज्ञान को समझ सकने की अधिक क्षमता के बिना सम्भव ही नहीं है। इस बिन्दु पर सबसे अखरने वाली स्थिति यह है कि बच्चों के लिए होने वाले लेखन को समीक्षकों से वह सम्मान नहीं मिल पाता जो मिलना चाहिये। विशुद्ध रूप से बच्चों के लिए छपने वाली बाल पत्रिकाओं में भी बाल साहित्य की नई पुस्तकों की जानकारी और समीक्षा का या तो नितान्त अभाव रहता है या फिर दो-चार पँक्तियां लिखकर कर्तव्य की इतिश्री मान ली जाती है। लेखक भी इस स्थिति से जूझने और उसे बदलने का प्रयास करने के बजाय उसके बहाव में बहते नज़र आते हैं।

अनेक व्यावसायिक लेखक तो ऐसे हैं जो बड़ों के लिए लिखने के साथ-साथ बच्चों के लिए इस तरह लिख देते हैं मानो किसी उपहार योजना के तहत किसी बड़ी वस्तु के साथ कोई छोटी-मोटी वस्तु इनाम में दे रहे हों। यह गंभीर चिन्ता का विषय है। इस तरह से साहित्य के नाम पर जो कुछ भी रचा जायेगा वह बच्चों के लिए श्रेयस्कर तो नहीं ही होगा उलटे हानिकारक सिद्ध हो सकता है। चित्रकथाओं और कॉमिक्स की भरमार ने भी बाल साहित्य को प्रभावित किया है। यद्यपि कुछ विद्वान इन्हें भी बाल साहित्य की एक सशक्त विधा मानते हैं। मेरी राय में सिद्धान्त: तो यह सही है कि चित्रकथाएँ और कॉमिक्स भी बाल साहित्य की श्रेणी में ही आते हैं, परन्तु वस्तुस्थिति यह है कि इनके माध्यम से बच्चों को पढ़ने के लिए जो कुछ भी उपलब्ध कराया जा रहा है और इनके पात्रों की जो वेशभूषा है उससे बच्चों के

दिग्भ्रमित होने की संभावनाएँ ही अधिक बलवती होती हैं। बच्चों की पत्रिकाओं में भी इनका आधिक्य दिनोंदिन बढ़ता ही जा रहा है। कॉमिक्स के बढ़ते बाजार ने बाल उपन्यासों को तो बाजार से बिलकुल लुप्त ही कर दिया है। बाल पॉकेट बुक्स की तो प्रथा ही समाप्त सी हो गई है।

यहाँ प्रकाशकों और सम्पादकों की भूमिका भी विचारणीय हो जाती है। प्रकाशकों की अपेक्षा सम्पादकों का दायित्व अधिक गुरुतर इसलिए भी है क्योंकि प्रकाशक अपने व्यावसायिक हितों से एक सीमा तक ही समझौता कर सकते हैं, जबकि सम्पादक का प्राथमिक दायित्व यही है कि वे यह सुनिश्चित करें कि बच्चों को जो सामग्री वे उपलब्ध करा रहे हैं उसके निहितार्थ और फलितार्थ सकारात्मक हैं अथवा नहीं। बच्चों में सुरुचिपूर्ण साहित्य के प्रति रुझान जागृत करना और अभिभावकों को उनके दायित्वों का बोध कराना भी सम्पादक के नैतिक कर्तव्य का एक हिस्सा है। बाजार में यदि अच्छे साहित्य की मांग निर्मित होगी तो प्रकाशक को भी उसे छापने में अपना हित परिलक्षित होगा। जब तक प्रकाशक को बाल साहित्य से सम्बन्धित पुस्तकों में जोखिम नज़र आयेगा वह इस दिशा में कोई सकारात्मक पहल कर ही नहीं सकता।

बाल साहित्य के वर्तमान परिवेश पर दृष्टिपात करने के बाद यह कहा जा सकता है कि आज बाल साहित्य का सृजन जितनी मात्रा में हो रहा है उतना पहले कभी नहीं हुआ। अनेक जानी-मानी बाल पत्रिकाएँ बन्द होने के बाद भी आज

जितनी अधिक संख्या में बाल पत्रिकाएँ निकल रहीं हैं उतनी पहले कभी नहीं निकलीं। पत्रिकाओं के अलावा सभी प्रमुख समाचार पत्र भी बच्चों के लिए रंगीन परिशिष्ट निकाल रहे हैं। इनमें से कुछ तो बच्चों के लिए अपने परिशिष्ट पत्रिका के आकार में ही प्रकाशित कर रहे हैं। यही कारण है कि बच्चों के लिए जितने रचनाकार आज लिख रहे हैं उतने लेखक इस क्षेत्र में पहले कभी सक्रिय नहीं रहे। यह शुभ संकेत हैं। प्रसिद्ध चिन्तक रतनलाल शर्मा के अनुसार-'यह एक तथ्य है कि किसी भी भाषा या युग का समस्त साहित्य उच्च स्तरीय नहीं होता। अधिकांश रचनाएँ सामान्य स्तर से निचले दर्जे की और फिर सामान्य दर्जे की होती हैं। उन रचनाओं की संख्या बहुत कम होती है जो उच्च स्तरीय हों और कालजयी रचना तो हजारों में एकाध ही हो सकती है। वर्तमान बाल साहित्य के साथ भी ऐसा ही है। भले ही टिप्पणीकार कुछ भी कहें, परन्तु सच यही है कि आज बाल साहित्य की स्थिति संतोषजनक है।'

चूँकि आज का बाल साहित्य कल के वर्तमान की आधारशिला होता है इसलिए उससे हमारी अपेक्षाएँ भी बहुत अधिक होती हैं। हम चाहते हैं कि वह हर दृष्टि से पूर्ण, परिपक्व और समुन्नत हो। बच्चों के विकास में सहायक और उनके विकास के लिए आवश्यक कोई भी बिन्दु उससे अछूता न रहे। वह बच्चों का भरपूर मनोरंजन भी करे और उन्हें उंगली पकड़कर चलना भी सिखाये।

अब प्रश्न यह है कि हमारी ये अपेक्षाएँ किस हद तक पूर्ण हो रही हैं, और यदि

नहीं हो रही हैं तो पूर्ण कैसे हों ? यह बहुत कुछ इस पर निर्भर करता है कि बाल साहित्य के वर्तमान प्रणेताओं ने आज के बालक और उसके बाल मन को कितनी गहराई से समझा है ।

यहाँ मैं यह तथ्य भी रेखांकित करना चाहूँगी कि बड़ों के लिए सृजित साहित्य में 'स्वान्तः सुखाय' का कारक भी सक्रिय होता है जबकि बच्चों के लिए लेखन करते समय लेखक को सायास उस धरातल पर पहुँचना होता है जहाँ से वस्तुतः वह बहुत आगे निकल चुका होता है। यह कार्य कठिन भी है और श्रम साध्य भी । परन्तु जो रचनाकार ऐसा करने में समर्थ हो पाता है समय की शिला पर नाम उसी का अंकित होता है।

बच्चों के लिए लिखने वाला कोई भी रचनाकार यदि कुशल मनोवैज्ञानिक नहीं है तो वह बच्चों के मन को छू लेने वाली कालजयी रचना का सृजन कर ही नहीं सकता। मनोवैज्ञानिक अवधारणाओं के आधार पर बाल साहित्य का उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास है अर्थात वह ऐसे बालक का निर्माण करे जिसमें शारीरिक, बौद्धिक, चारित्रिक, नैतिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय बोध का युगानुरूप समन्वय हो। नयी बातों को सीखने की जिज्ञासा, उसकी संतुष्टि तथा कौतूहल का समावेश भी अपेक्षित है। जो रचना इस निकष पर खरी उतरकर बालसुलभ चेष्टाओं का दर्पण बनेगी वह निश्चित ही बच्चों के मन को भायेगी और उन्हें उल्लसित कर उनमें आनन्दानुभूति का संचार करेगी।

फ्रायड ने मन को चेतन और अचेतन में विभाजित किया है। उसके अनुसार अचेतन मन में बालक के अनुभव संचित रहते हैं। मनुष्य का चेतन मन उसके अचेतन मन में संचित अनुभवों से ही अनुशासित होता है। अर्थात बालक मन में अर्जित संस्कार मनुष्य के क्रियाकलापों को जीवन भर प्रभावित करते हैं।

मेकडूगल के अनुसार चौदह मूल प्रवृत्तियाँ होती हैं जिनमें से प्रत्येक के कुछ सहायक संवेग भी होते हैं। ये संवेग ही बालक के मन में संवेदना को जन्म देते हैं। इस दृष्टि से रचनाकार का दायित्व है कि वह अपनी रम्य रचनाओं के द्वारा बालक के अचेतन मन को सँवारे तथा मूल प्रवृत्तियों के परिमार्जन द्वारा उसे संवेदनशील प्राणी बनाकर सुसंस्कारित करे। बालक द्वारा सीखने की क्षमता के अनुरूप ही लेखन करना अच्छे बाल साहित्य की प्रमुख पहचान है। इच्छाशक्ति और दृढ़ संकल्प की भावना उसे और भी निखार देती है। छोटे बच्चों के लिए लिखे जाने वाले साहित्य में सरलता और सहजता का होना भी अपरिहार्य है। ऐसा होने पर ही रचना बालकों के लिए सहज ग्राह्य और सुरुचिपूर्ण हो सकती है। इस निर्देशन बिन्दु का प्रतिपादन करती रचना ही बालकों में विचार शक्ति तथा तार्किक सोच का विकास कर सकती है। इन सभी के मूल में बालक के मन की जिज्ञासा की अहम् भूमिका होती है।

जहाँ तक बालकों में तर्क शक्ति के विकास का प्रश्न है वे रचना पढ़ते समय पात्रों के विविध क्रियाकलापों में अच्छे और बुरे को पहचानें, उनकी तुलना करें,

ग्राह्य और अग्राह्य को वर्गीकृत करें तथा श्रेष्ठ के साथ अपने जीवन का समायोजन करें। इसके साथ ही बालकों में स्मरण शक्ति के विकास के लिए यह भी आवश्यक है कि वह देखे, सुने और पढ़े क्रियाकलापों को उसी क्रम में समय आने पर पुनः प्रस्तुत कर सकें। अर्थात श्रेष्ठ बाल साहित्य वही है जिसे पढ़कर बालक विवेकशील होकर अच्छाइयों का सामान्यीकरण करे और उन्हें अपने जीवन में उतारने के लिए प्रेरित हो।

अच्छे बाल साहित्य लेखन के लिए बाल सुलभ चेष्टाओं के सूक्ष्म निरीक्षण की क्षमता लेखक में अपेक्षित है। आत्मप्रकाशन की तीव्र इच्छा, समाजीकरण की तीव्र लालसा, साहसिक कार्यों की ओर झुकाव, नवीन वस्तुओं का संग्रह, सृजनशीलता आदि गुण बालकों के स्वभाव में सहज रूप में पाये जाते हैं। इन अन्तर्निहित गुणों को प्रस्फुटित करना ही श्रेष्ठ बाल साहित्य का मुख्य ध्येय होना चाहिये। बोझिल और ज्ञान को जबरन थोपने का प्रयास करने वाली रचनाओं का बाल साहित्य में कोई स्थान नहीं है। रचनाकारों को यह बात सदैव स्मरण रखनी चाहिये कि साहित्य बच्चों के लिए है बच्चे साहित्य के लिए नहीं।

बालकों का मन चंचल होता है। वह किसी भी संस्कार को शीघ्र ग्रहण नहीं करता, अतएव यह आवश्यक है कि कथानक संक्षिप्त किन्तु चुस्त और उद्देश्यपरक हो। प्रस्तुति प्रभावी और रोचक हो तथा कथ्य में प्रयुक्त पात्र बालकों के अनुभव संसार से जुड़े तथा उन्हें अपने से प्रतीत होने वाले हों। अधिक पात्र, लम्बे कथानक

और पेचीदा घटनाओं से युक्त सामग्री बच्चों को आनन्दित नहीं करती। इसीलिए बाल साहित्यकारों को कभी भी अपने पांडित्य के प्रदर्शन का प्रलोभन नहीं करना चाहिये। ऐसे प्रयास अक्सर उन्हें अपने बाल पाठकों से दूर कर देते हैं।

बाल साहित्य का वस्तुनिष्ठ होना भी उसकी श्रेष्ठता की एक कसौटी है। आवश्यकता ऐसे बाल साहित्य की है जिसे पढ़कर बड़े होने वाले बच्चे ऐसे नागरिक बन सकें जिनके जीवन में भय, अंधविश्वास और मिथ्यावादिता का कोई स्थान न हो। सच को सच और झूठ को झूठ कह सकने का साहस उनकी आदत में शामिल हो जाये।

बाल साहित्य को रोचक व पठनीय बनाने में उसकी साज-सज्जा का भी विशेष महत्व है। कई बार श्रेष्ठतम रचनाओं को भी बच्चे इसलिए अनदेखा कर देते हैं क्योंकि उनका कलेवर लुभाने वाला नहीं होता। प्रसिद्ध बाल साहित्यकार अनन्त कुशवाहा का मानना है कि सचित्र और चित्ताकर्षक पुस्तकें बच्चों को पढ़ने के लिए लालायित करती हैं। छोटे बच्चों के लिए किसी ऐसी पुस्तक की कल्पना ही नहीं की जा सकती जिसमें चित्र, चार्ट या ज्यामितीय आकृतियाँ न हों। कई बार तो शब्द जिस बात को समझाने में असमर्थ होते हैं चित्र उसी बात को बड़ी आसानी से समझा देते हैं।

श्रेष्ठ बाल साहित्य का सृजन जितना आवश्यक है उतना ही आवश्यक यह भी है कि वह बच्चों तक पहुँचे भी। इसके लिए दो बातें बहुत आवश्यक हैं। एक तो

यह कि बच्चों की पुस्तकों का मूल्य इतना ज्यादा न हो कि उसे देखकर अभिभावक पुस्तक खरीदने के बारे में सोच भी न सकें। दूसरी आवश्यकता इस बात की है कि बच्चों के लिए विशेष रूप से ऐसे पुस्तकालय स्थापित किये जायें जिनमें समकालीन बाल साहित्य की श्रेष्ठतम पुस्तकें बच्चों को आसानी से सुलभ हो सकें। इन पुस्तकालयों में ऐसा ज्ञानात्मक साहित्य होना परमावश्यक है जिससे बच्चे स्वावलम्बी और मननशील बन सकें। इन पुस्तकालयों से बालकों में अध्ययन के प्रति रुचि जागृत होगी और महँगी पुस्तकों के अध्ययन में जेब की विवशता भी आड़े नहीं आयेगी। इस कार्य के लिए सरकारी विभागों, नगरीय व ग्रामीण निकायों के साथ-साथ सामाजिक व स्वयंसेवी संस्थाओं को भी आगे आना होगा। प्राय: यह भी देखा गया है कि पंचायतों, नगर पालिकाओं या ऐसे ही अन्य निकायों द्वारा क्रय की जाने वाली पुस्तकें या तो पुस्तकालय में ही कैद होकर रह जाती हैं अथवा उक्त निकाय के किसी प्रभावशाली पदाधिकारी की निजी सम्पत्ति बनकर रह जाती हैं। यह स्थिति बदलना भी आवश्यक है।

बाल साहित्य कैसा हो और वह बच्चों तक कैसे पहुँचे ये सवाल जितने जरूरी हैं उतना ही महत्वपूर्ण मुद्दा यह भी है कि जो साहित्यकार पूरी निष्ठा, समर्पण और मनोयोग के साथ बच्चों के लिए लिख रहे हैं उनकी रचनाधर्मिता को भी उतनी ही मान्यता मिले जितनी मान्यता बड़ों के लिए लिखने वालों को मिलती है। जैसा कि मैंने इस अध्याय के प्रारम्भ में कहा है कि बाल साहित्य के प्रति समीक्षकों द्वारा जो

पक्षपात किया जा रहा है वह सर्वथा अनुचित है। इस मामले में पत्रिकाओं को पहल करनी होगी। उन्हें अपने प्रत्येक अंक में बाल साहित्य की विविध विधाओं में प्रकाशित होने वाली पुस्तकों की समीक्षा करनी चाहिये। इससे लेखक को जहाँ अपनी खूबियों और खामियों के बारे में पता चल सकेगा वहीं बच्चों और अभिभावकों को भी यह जानकारी मिल सकेगी कि कौन-कौन सी नई पुस्तकें आयी हैं जो उनके लिए पठनीय व उपयोगी साबित हो सकती हैं। इससे एक फायदा यह भी होगा कि अभी जो प्रकाशक बाल साहित्य के साथ अछूतों जैसा व्यवहार करते हैं वे भी बच्चों के लिए पुस्तकें प्रकाशित करने की दिशा में सोचने के लिए बाध्य होंगे।

यहाँ हम इस बात पर भी संतोष कर सकते हैं कि बाल उपन्यासों को छोड़कर बाल साहित्य की किसी भी विधा के रचनाकारों को कभी भी पाठकों के संकट का सामना नहीं करना पड़ा। बड़ों के लिए हिन्दी में लिखे जा रहे साहित्य के प्रणेताओं की सबसे बड़ी चिन्ता यही है कि पाठकों का अभाव तेजी से बढ़ रहा है जबकि बाल साहित्य में स्थिति इसके उलट है। यहाँ पाठकों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि परिलक्षित हो रही है। आँकड़ों से यह सिद्ध हो चुका है कि बाल साहित्य के पाठकों की संख्या बराबर बढ़ रही है। बच्चे पुस्तकें पढ़ना चाहते हैं, अब यह दायित्व बड़ों का है कि पुस्तकों का बच्चों तक पहुँचना सुनिश्चित करें। यदि पत्र-पत्रिकाएँ और पुस्तकें बच्चों तक नहीं पहुँचतीं तो इसके लिए बड़े ही दोषी हैं। बाल उपन्यासों

के पाठक अगर कम हुए हैं तो इसका प्रमुख कारण यह भी है कि लेखकों ने बाल उपन्यासों के प्रणयन की ओर ध्यान देना बन्द कर दिया है। इसका कारण मनोवैज्ञानिक कम और अर्थशास्त्रीय अधिक है। लेखक सोचते हैं कि जितना समय और श्रम लगाकर वे एक उपन्यास लिखेंगे उतने समय और श्रम में तो कम से कम पाँच कहानियाँ लिखी जा सकती हैं जिनसे ज्यादा नाम और ज्यादा पारिश्रमिक अर्जित किया जा सकता है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया पर भी उपन्यास के बजाय कहानियों की मांग अधिक है।

हिन्दी बाल साहित्य की विभिन्न विधाओं की वर्तमान स्थिति के अवलोकन से यह बात साफ हो जाती है कि यदि बाल साहित्यकारों को समुचित सम्मान और प्रतिफल मिले तो मनोनुकूल और उत्साहजनक परिणाम सहजता से प्राप्त किये जा सकते हैं। हिन्दी का बालसाहित्य इन दिनों अपने स्वर्णयुग में है। किसी भी चीज का आधिक्य गुणवत्ता को प्रभावित करता है। बाल साहित्य के साथ भी यह स्थिति देखी जा सकती है। बहुत से लेखक बिना किसी मानदण्ड के ऐसी रचनाएँ लिख रहे हैं जो प्रत्यक्षतः बच्चों के लिए होते हुए भी बाल साहित्य के अन्तर्गत नहीं आ सकतीं। केवल विषय, भाषा और शैली के निकष पर ही नहीं अपितु यदि बाल मनोविज्ञान, यथार्थ से जुड़े विषयों और ज्ञानवर्द्धन की तुला पर इनका मूल्यांकन करें तो हमें बड़ी संख्या में ऐसी रचनाएँ देखने को मिलेंगी जिन्हें मेरी राय में तो बच्चों को पढ़ने के लिए देना भी उचित न होगा। बाल साहित्य के नाम पर कुछ

तो भी प्रयोग हो रहे हैं। फंतासियों के नाम पर बच्चों को ऐसा कल्पना लोक दिखाया जा रहा है जिसका कोई उद्देश्य दूर-दूर तक नज़र नहीं आता। बच्चों को अब कपोल कल्पनाएँ लुभावनी नहीं लगतीं, वे यथार्थ के ज्यादा से ज्यादा निकट रहना चाहते हैं। पंखों वाली परियों के साथ उड़ने के बजाय आज के बच्चे अंतरिक्ष यान में बैठकर विविध ग्रहों की सैर पर जाना ज्यादा पसन्द करेंगे। यानी अगर फंतासी भी हो तो वह ऐसी हो जो सम्भव सी और यथार्थपरक लगे। इसलिए उन्हें ऐसा साहित्य ही उपलब्ध कराना होगा जिसकी तार्किकता पर कोई प्रश्नचिह्न खड़ा न हो सके और जो बाल मनोविज्ञान को न केवल संतुष्ट करे बल्कि उनकी सोच के क्षितिज को भी व्यापक बना सके।

बच्चों की मानसिकता में बड़ी तेजी से बदलाव आया है। वे पहले से अधिक परिपक्व और पहले से अधिक सजग हो गए हैं। उम्र के पुराने वर्गीकरण अब बेमानी से लगने लगे हैं। बच्चे अब जल्दी बड़े होने लगे हैं। घर-परिवार में उनका हस्तक्षेप भी अब जल्दी होने लगा है। वे बड़ों से आदेश सुनने की अपेक्षा उनकी सहमति प्राप्त करना अधिक पसन्द करता है। प्रकटतः यह बदलाव भले ही बहुत मामूली सा लगे किन्तु वस्तुतः यह अपने आप में एक युगान्तरकारी बदलाव है। परिवर्तन की इस बारीकी को समझते हुए और उसे आत्मसात करते हुए जो बाल साहित्य रचा जायेगा, वही स्वीकार्य होगा। वैसे भी जो साहित्य समय सापेक्ष नहीं होता, समय भी उसे बहुत अधिक समय तक याद नहीं रखता। लिखे जाने के साथ

ही उसका विस्मरण भी प्रारम्भ हो जाता है। वैज्ञानिक आधार पर होने वाला रचनाकर्म ही अब बच्चों को पसन्द आयेगा, इस सच को आज के लेखकों को समझना होगा और तदनुरूप ही अपने लेखन की दिशा निर्धारित करनी होगी। लेखकों और सम्पादकों को यह भी स्मरण रखना होगा कि वे नितान्त तार्किक ही बनकर न रह जायें। बच्चों को गौरवशाली अतीत का भी पर्याप्त ज्ञान हो यह भी आवश्यक है। इसलिए बाल साहित्य के सृजन में अतीत,वर्तमान और भविष्य के सामंजस्य के साथ तर्क, तथ्य और भावना का भी समुचित अनुपात होना चाहिये।

निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि हिन्दी बाल साहित्य जिस गति से प्रगति की ओर अग्रसर है उसे देखते हुए इस बात में तो कोई सन्देह है ही नहीं कि हिन्दी बाल साहित्य का भविष्य बहुत उज्ज्वल और अनन्त संभावनाओं से परिपूर्ण है। जिस मात्रा में साहित्य का सृजन हो रहा है उस अनुपात में बाल साहित्य के लेखकों और पाठकों के मध्य संवाद का नितान्त अभाव है। इसे दूर करना होगा। इस बात का भी विशेष ध्यान रखना होगा कि बाल साहित्यकार बच्चों की अपेक्षाओं का अध्ययन कर उनके अनुरूप पुस्तकों का सृजन करें न कि बच्चों को इस बात के लिए बाध्य करें कि उनके द्वारा लिखा गया सब कुछ पढ़ना अपरिहार्य है। गीत और कहानी बच्चों को सबसे ज्यादा पसन्द होती हैं। सबसे ज्यादा सृजन भी इन्हीं विधाओं में हो रहा है, किन्तु बाल उपन्यासों के लेखन को भी प्रोत्साहित करने की

आवश्यकता है। समाचार पत्रों और पत्रिकाओं को अपनी भूमिका का विश्लेषण कर यथाशीघ्र अपेक्षित सुधार करने होंगे। बाल साहित्य जिस प्रकार संख्यात्मक दृष्टि से सफलता के नये आयामों को स्पर्श कर रहा है उसी प्रकार गुणात्मक दृष्टि से भी यह उच्चतम शीर्षों तक पहुंचे, इसके लिए सम्मिलित प्रयास करने होंगे।

....

....

परिशिष्ट

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम — सं. विनोद चन्द्र पांडेय
2. हिन्दी बाल साहित्य : परंपरा और प्रयोग — सं. ओमप्रकाश सिंघल
3. बच्चों की सौ कहानियाँ — सं. हरिकृष्ण देवसरे
4. बच्चों के सौ नाटक — सं. हरिकृष्ण देवसरे
5. बच्चों के बारह उपन्यास — सं. राधेश्याम प्रगल्भ
6. बालगीत साहित्य — निरंकार देव सेवक
7. हिन्दी बाल साहित्य — निरंकार देव सेवक
8. बाल साहित्य की रूपरेखा — द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी
9. पंजाबी बाल साहित्य — सुरेशचन्द्र वात्स्यायन
10. सिंधी भाषा का बाल साहित्य — हूँदराज बलवाणी
11. बँगला भाषा में बाल साहित्य — माधवी वंदोपाध्याय
12. गुजराती बाल साहित्य का क्रमिक विकास — गोपालदास नागर
13. मराठी बाल साहित्य के विविध आयाम — सुधाकर प्रभु
14. मलयालम बाल साहित्य : एक सर्वेक्षण — विश्वनाथ अय्यर
15. बाल नाटक : सृजनात्मक सार्थकता — विष्णु प्रभाकर
16. हिन्दी के प्रमुख शिशु एवं बाल गीतकार — नीता श्रीवास्तव
17. हिन्दी के प्रमुख बाल साहित्यकार — श्यामसुन्दर श्रीवास्तव

18. शकुन्तला सीरोठिया : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	श्याममोहन त्रिवेदी
19. अजायबघर	हरनारायण सिंह 'यार'
20. बाल कविता	सं. विनोद चन्द्र पांडेय
21. बाल साहित्य समीक्षा	देवेश कुमार
22. दादी अम्मा मुझे बताओ	मानवती आर्य
23. दादी अम्मा की सीख	मानवती आर्य
24. जय झाँसी की रानी	गोपीचन्द श्रीनागर
25. राम की कथा	गोपीचन्द श्रीनागर
26. मेरी प्रिय कविताएँ	सूर्य कुमार पांडेय
27. संस्कार गीतमाला	भूपेन्द्र श्रीवास्तव
28. एक टिकट में कई तमाशे	डॉ. प्रसाद निष्काम
29. शिशुगीत	सावित्री शर्मा
30. रोचक बाल कविताएँ	कैलाश निगम
31. सुमन सरीखे फूल खिले	मत्या मिश्रा
32. नाच दिखा रे मोर	डॉ. रमाकान्त श्रीवास्तव
33. स्वरूप काव्य का समीक्षात्मक विवेचन	डॉ. डी.पी. श्रीवास्तव
34. युगकवि स्वरूप : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	राम मनोहर
35. बाल सुमनों के नाम	सं. महेश दिवाकर
36. त्यौहारों के गीत	सुनील जोगी
37. भारत माँ के राजदुलारे	रोहिताश्व अस्थाना

38. खेलो गाओ बढ़ते जाओ	रोहिताश्व अस्थाना
39. दमक उठे संसार	डॉ. प्रतीक मिश्र
40. चित्रगीत	विनोद चन्द्र पाण्डेय
41. विश्व बाल साहित्य	देवेन्द्र कुमार

कोश

1. वृहद हिन्दी पत्र-पत्रिका कोश	सं.सूर्य प्रकाश दीक्षित
2.सहस्त्राब्दि साहित्यकार कोश	सं. डॉ. रामस्वरूप खरे
3. बाल साहित्यकार कोश	सं. अपर्णा खरे

पत्रिकाएँ

1. धर्मयुग
2. साप्ताहिक हिन्दुस्तान
3. मधुस्यन्दी
4. शिशु
5. बालसखा
6. छात्र सहोदर
7. अभिव्यक्ति
8. वीर बालक
9. बालक
10. खिलौना
11. चमचम
12. चमाचम
13. बाल विनोद
14. कुमार
15. किशोर
16. तितली
17. होनहार
18. मदारी
19. किशोर भारती
20. बाल भारती
21. मनमोहन
22. पराग
23. चन्दा मामा
24. नन्हीं दुनिया
25. जीवन शिक्षा
26. राजा बेटा
27. बाल बन्धु
28. राजा भैया
29. बाल फुलवारी
30. बाल लोक
31. बाल दुनिया
32. बाल वाटिका
33. शिशु लोक
34. नन्दन
35. मिलिन्द
36. बाल प्रभात
37. शिशु बन्ध
38. बाल जगत
39. नटखट
40. बाल कुंज
41. चम्पक
42. लोटपोट
43. चन्द्र खिलौना
44. बाल रंगभूमि

45. वानर
46. गुड़िया
47. किशोर मिलिन्द
48. शक्तिपुत्र
49. शावक
50. बालदर्शन
51. मुस्कराते फूल
52. बाल कल्पना
53. देवपुत्र
54. नन्हीं मुस्कान
55. आनन्ददीप
56. चन्दन
57. लल्लू जगधर
58. सुमन सौरभ
59. किलकारी
60. चकमक
61. उपवन
62. बाल कविता
63. बाल हंस
64. बाल मंच
65. नन्हे सम्राट
66. बाल मेला
67. समझ झरोखा
68. प्रांकुर
69. अंगूर के गुच्छे
70. मुन्ना-मुन्नी
71. बच्चों की दुनिया
72. बाल गोपाल
73. शम्पा
74. बाल ज्योति
75. फुलवारी
76. चन्दा
77. छौना
78. घरौंदा
79. दूध बताशा
80. झरना
81. तमाशा
82. बालवाणी
83. बाल सेतु
84. मधु मुस्कान
85. समयनिधि
86. स्नेह
87. भोपाल टुडे
88. कादम्बिनी
89. सारिका
90. हंस

समाचार पत्र

1. नवभारत टाइम्स	नई दिल्ली
2. हिन्दुस्तान	नई दिल्ली
3. वीर अर्जुन	नई दिल्ली
4. जनसत्ता	नई दिल्ली
5. राष्ट्रीय सहारा	नई दिल्ली / लखनऊ
6. दैनिक जागरण	कानपुर
7. आज	कानपुर
8. अमर उजाला	झाँसी
9. दैनिक भास्कर	भोपाल
10. नवभारत	भोपाल
11. नई दुनिया	इन्दौर
12. दैनिक नई दुनिया	भोपाल
13. राजस्थान पत्रिका	जयपुर
14. देशबन्धु	भोपाल
15. चौथा संसार	इन्दौर
16. दिनान्त	उरई